बच्चन-काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

(PREDOMINANT FEATURES OF THE POETICAL WORKS OF HARIBANSRAI BACCHAN)

Thesis submitted to the
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE & TECHNOLOGY
for the degree of
DOCTOR OF PHILOSOPHY

BY

रमादेवी सी.

REMADEVI C.

Prof. and Head of
the Department
Dr. N. RAMAN NAIR

Supervisor
Dr. M. EASWARI
READER

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE & TECHNOLOGY

1988

C E R T I F I C A T E

This is to certify that this THESIS is a bonafide record of work carried out by REMA DEVI.C under my supervision for Ph.D. and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any University.

Dr. N. Easwari,
(Supervising Teacher)

Department of Hindi,
Cochin University of Science
& Technology,
Cochin-682 022.

विषय सूची

पृष्ठ - संख्या

क - ख

प्राक्कथन .... 1 - 25

पहला अध्याय

बच्चन - एक अंतरंग परिचय

जन्म स्थान - माता पिता - बाल्य काल - एक अविस्मरणीय घटना - हिन्दी के प्रति आकर्षण - शिक्षा - कविता का प्रथम स्फुरण - बच्चन : कालेज में - बाल्य-काल के मित्र - यौवन - एक मार्मिक घटना - श्यामा से विवाह - बच्चन - स्वातंत्र्य - संग्राम के बीच में - काव्य पथ के पथिक - अध्यापकीय जीवन - बच्चन : इंग्लैंड में - डब्ल्यू - बी. ईटस और उनका काव्य - शोध-कार्य में आमग्न बच्चन-भारत में आगमन - तेजी से विवाह - बच्चन का संपर्क क्षेत्र - आत्मकथाकार - क्या भूलूँ क्या याद करूँ - नीड का निर्माण फिर - बसेरे से दूर - डायरी लेखक - प्रवास की डायरी - संस्मरण लेखक - अनुवादक - खैयाम की मधुशाला - जनगीता और नागरगीता-चौंसठ रूसी कवितायें - मरकत द्वीप का स्वर - नाटकानुवाद - कहानीकार - निबंधकार-पत्रकार -

दूसरा अध्याय पृष्ठ संख्या

हिन्दी की स्वच्छंदतावादी काव्य धारा - छायावाद की 26-80
विशेषतायें - प्रकृति-प्रेम - मानवीकरण - कल्पनाशीलता - नारी की महत्ता - प्रेम भावना - द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता का विरोध ;

पृष्ठ संख्या

रहस्य भावना - निराशावाद - वैयक्तिकता - संगीतात्मकता - हिन्दी को छायावाद की देन - कमज़ोरियाँ - छायावाद का ह्रास - प्रमुख कवि - जयशंकर प्रसाद - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - सुमित्रानंदन पंत - महादेवी वर्मा - छायावाद - एक शैली विशेष-रोमांटिक आन्दोलन में बच्चन का स्थान - हालावाद - मधुकाव्य सृजन काल - हालावाद का उदय - हिन्दी में हालावाद - खैयाम और बच्चन - हालावाद का ह्रास - मधुशाला - प्रेरणा स्रोत - कविता का पहला मोड - चरम लक्ष्य की प्राप्ति - मधुबाला - मधुकलश

तीसरा अध्याय 81-108

प्रगति के पथ पर

निशा निमंत्रण - अप्रतिम उपहार - विधुर मानव की मानसिक प्रतिक्रिया - कल्पना के स्वर - मानसिक यात्रा - प्रेम के आँसू - विरह गीतों का सर्वश्रेष्ठ संकलन - काल्पनिक साथी - अकेलापन - दुःखियों के प्रति सहानुभूति - भाषा - संगीतात्मकता - मृत्युपासना-प्रतीक - एकांत संगीत - निराशा - आत्मानुभूति की सघनता - आकुल अंतर - विकलता - जीने की प्रेरणा - निष्कर्ष

चौथा अध्याय 109-139

बच्चन के काव्य में प्रतिबिंबित सामाजिक, राजनैतिक वातावरण

सतरंगिनी - आशा की नयी किरण - निर्माण की आकांक्षा - प्रणयिनी के व्यक्तित्व की महत्ता - भाषा - प्रतीकात्मकता - सृजन की इन्द्रधनुषी भावना - इच्छा के गायक - प्रकृति-चित्रण - हलाहल - आस्था और अनास्था के स्वर - पौराणिक आधार - हलाहल की सफलता - रूपक - संगीतात्मकता -

पृष्ठ संख्या

जन-जीवन में प्रवेश - बंगाल का काल - सूत की माला - खादी के फूल - बहिर्मुखी दृष्टिकोण - प्रेषणीयता में योगदान - भाव-पक्ष की ओर झुकाव - देश-प्रेम की भावना - अनगढ शब्दों का प्रयोग - शोक गीत -

पाँचवाँ अध्याय 140 - 169

प्रणय-पत्रिका - मिलनया मिनी

मिलन की मादकता - लक्ष्य प्राप्ति की अदम्य आशा - साफ-सीधी अभिव्यक्ति - नियतिवाद में विश्वास - परदु:खकातरता - जीवन की मस्ती - श्रृंगारिक भावना - अपराजित विश्वास - चित्रात्मकता की ओर मोह - प्रेरणा का महत्व - परंपरागत संयोग वर्णन - अमूर्त केलिए मूर्त अप्रस्तुत का प्रयोग - वैयक्तिक प्रणय की अभिव्यक्ति - प्रणय-पत्रिका - प्रणयपरक गीतकार - विप्रलंभ श्रृंगार - प्रेम की पीडा - प्रेयसी के प्रति प्यार - सच्ची भावनाओं की सुन्दर अभिव्यक्ति - प्रणय की निखरी रागिनी का आलाप - अनुभूति और कल्पना का समन्वय-सच्ची संगिनी का आगमन - भोग का अनुभव - संगीत और राग तत्वों का समन्वय - विरह-व्यथा उद्दीप्त करनेवाला प्रकृति का व्यापार - मानव-जीवन में प्रेमवृत्ति की आवश्यकता - भावाकुल मन की मज़बूरी - विरह की स्थिति से उत्पन्न उदासी - बिंब की हृदयस्पर्शी व्याख्या - मोन का पत्थर - गेयता-शब्दों का सुव्यवस्थित प्रयोग - जीवन का पूरा इतिहास - प्रेम का नि:संग चित्रण - निष्कर्ष -

छठा अध्याय 170 - 209

बाह्य के प्रति जागरूकता

धार के इधर उधर - यथार्थ का चित्र - राष्ट्रीय चेतना - संघर्ष की भावना - युद्ध कामी राष्ट्रों के प्रति विरोध - शरणार्थियों की मनोदशा नये दायित्व

पृष्ठ संख्या

का बोध - पूर्ववर्ती और परवर्ती काव्य के बीच की कड़ी - निष्कर्ष - आरती और अंगारे - पूर्व आचार्यों को वन्दना - पारिवारिक जीवन का वातावरण - उत्तर भाग - कर्मठता में विश्वास - स्वजनों के जीवन के प्रति भावात्मक संबंध - संघर्षशीलता - नये का स्वागत और नवीन क्रांति - आत्मविश्वास की भावना - अभिव्यंजना पक्ष - साहित्यिक मान्यतायें - निष्कर्ष - बुद्ध और नाचघर - मुक्तछंद - विदेशी प्रभाव - व्यंग्यात्मकता - नई दिशा का बोध - सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार - अभिव्यंजना शैली की विशेषता - बोलचाल की भाषा - सार्थक शब्द-योजना- प्रतीकात्मकता - निष्कर्ष - त्रिभंगिमा - लोकगीत शैली - आध्यात्मिकता की पुट - ग्राम्य वातावरण-नैतर्निक प्रेम की आभा - लोक-शब्दों का उचित उपयोग - साहित्यिक गीत शैली - अध्यात्म और अनुभूति का सहज संवेद्य रूप - मुक्त छंद शैली - समकालीन जीवन की विडंबना पर प्रहार-युग- चित्र - साहित्यिक मान्यतायें - निष्कर्ष - चार खेमे चौंसठ खूँटे - छंदयुक्त लयात्मक गीत - आध्यात्मिक झुकाव - स्नेह सहयोग की भावना - भक्ति की भावना - लोकधुनाश्रित गीत - त्याग की महिमा - लोकलयमान पदावली - मंचगान - सत्ताधिकारी शासक और जनता - भू पुत्रों की चुनौती - प्रगतिवादी विचारधारा - मुक्त छंद की कवितायें - आक्रोश - व्यंग्यात्मक और आत्मबल - कवि का संयमी रूप - कवि की आस्था - निष्कर्ष

सातवाँ अध्याय 210 - 265

लोक चेतना का काव्य

दो चट्टानें - भावपक्ष स्वाभिमान एवं क्षोभ की भावना - भीरुता का विरोध - नेहरूजी से संबद्ध रचनायें - कल्पना की माधुरी - आधुनिकता का

पृष्ठ संख्या

बोध - जीवन की निरर्थकता - जीवन-मूल्य : मूल्यहीनता - विघटित मूल्य से व्याप्त अव्यवस्था - शोषित और उपेक्षितों के प्रति सहानुभूति - यथार्थवादी चेतना - व्यंग्यशीलता - प्रतीकात्मकता - बहुत दिन बीते - सामयिक परिवेश - मानवीय मूल्यों का विघटन - कवि धर्म से संबद्ध रचनायें - व्यंग्यशीलता - यातना भरी जिन्दगी के करुण चित्र - युग-चित्र - आस्था-कर्म पर विश्वास - समन्वय की भावना - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - नाम की सार्थकता - आधुनिक जीवन का बिखराव और मानवीय मूल्यों की टूटन - पीढ़ियों का संघर्ष - दार्शनिकता - विक्षोभ का स्वर-व्यंग का स्वर - उभरते प्रतिमानों के रूप - युगीन संदर्भ - प्रजातंत्र और राजनीति से संबद्ध रचनाएँ - टूटते हुए मानवीय मूल्य और नई तथा पुरानी पीढ़ी का संघर्ष - शाश्वत जीवन सत्य - अतीत की स्मृति - रचनाकार के प्रति आज के समाज की प्रतिक्रिया - आस्था का स्वर - व्यंग्यात्मकता - जाल समेटा - पछतावे का स्वर - सामाजिक चेतना के साथ संबद्धता - अकविता - उपादान के रूप में - क्रान्ति-बोध - शोषण और अन्याय का साम्राज्य - संघर्ष की भावना - व्यंग्य की भावना - अभिव्यंजना पक्ष - दो चट्टानें - बहुत दिन बीते - भावानुरूप शब्द योजना, प्रतीक - बिंब - छंद - मुक्तक छंद - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - भाषा - मुहावरों का प्रयोग - प्रतीक - बिंब - शैली - उभरते प्रतिमानों के रूप - भाषा - सांकेतिकता - प्रतीक - शैली - वर्णनात्मक शैली - प्रश्नोत्तर शैली - तुलनात्मक शैली - जाल-समेटा - काव्य-सिद्धांत - निष्कर्ष -

उपसंहार .२६६ : २७२

संदर्भ ग्रंथसूची .२७३ .. २८३

प्राक्कथन

उत्तर छायावादी कवियों में हरिवंश राय बच्चन एक प्रमुख स्थान रखते हैं । उनकी साहित्य सपर्या बहु आयामी हैं । लेकिन मूलत: वे कवि ही हैं । छायावाद के उत्थान काल में वे काव्य-क्षेत्र में आते हैं । छायावाद के अन्य श्रेष्ठ कवियों के साथ काव्य-जगत में वे कार्यनिरत रहे । लेकिन वे उनके समान कोरे काल्पनिक जगत में विहार नहीं करते, उनका स्वर भिन्न था, उनकी विषय-वस्तु भिन्न प्रकार की थी । उनके काव्य की बडी शक्ति और विशेषता हैं उनके व्यक्तित्व का विषय वस्तु से संबंध । वे हालावाद से जुडे थे । वे हालावाद के प्रवर्तक थे । यद्यपि इस वाद का हिन्दी-साहित्य में बहुत विकास नहीं हुआ तथापि उनकी महत्ता किसी भी दृष्टि से कम नहीं है । "मधुशाला", "मधुबाला" और "मधुकलश" इस दृष्टि से साहित्य-जगत में प्रतिष्ठा पा चुकी हैं ।

बच्चन की काव्य-यात्रा परिवर्तनशील और विकासोन्मुख रही है । "तेरा हार" (1932) से "जाल समेटा" (1972) तक की रचनायें इसके साक्षी हैं । इसके उपरान्त वे नयी चेतना से प्रभावित दिखाई पडते हैं । वर्तमान युग की सभी विसंगतियों पर उन्होंने कशाघात किया है । इस प्रकार इन सब नवीन प्रवृत्तियों को अपनाकर काव्य-रचना करके आधुनिक हिन्दी-काव्य-जगत में उन्होंने अपना एक अलग संसार स्थापित करने की चेष्टा की है । इन सब दृष्टियों से बच्चन के काव्यों का अध्ययन अवश्य ही महत्वपूर्ण है ।

बच्चन के साहित्य पर अनेक आलोचनात्मक कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं । बच्चन : व्यक्ति और कवि-बाकेविहारी भटनागर, बच्चन: एक पहेली - चन्द्रदेव सिंह, बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व - जीवन प्रकाश जोशी,

बच्चन का परवर्ती काव्य-हृदय स्वरूप पारीक, बच्चन: व्यक्तित्व एवम् कृतित्व - कृष्ण चन्द्र पण्ड्या, बच्चन : अनुभूति और अभिव्यक्ति - डॉ.इन्दुबाल दीवान आदि । उनपर शोध प्रबंध भी प्रकाशित हो चुके हैं "बच्चन : जीवन और साहित्य - श्रीमती डॉ.सुधा बहन कनु भाई पटेल, कवि बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व - श्री.जयप्रकाश ठाकुर "आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य की परंपरा में बच्चन - जगदीश नारायण प्रसाद, बच्चन की काव्य कृतियों का समग्र मूल्यांकन - दिनकर सोनवलकर आदि । विशिष्ट लेखकों के निबंधों के संग्रह भी उपलब्ध हैं - बच्चन एक युगान्तर - नीरज, बच्चन निकट से - अजित कुमार आदि आदि ।

बच्चन - काव्य से संबंधित उपर्युक्त आलोचनात्मक ग्रंथ और शोध प्रबंध उनकी आदि से अंत तक की कविताओं की प्रवृत्तियों के विस्तृत विश्लेषण तथा उनकी काव्य-यात्रा के क्रमिक विकास की दृष्टि से अपूर्ण है । इसलिए शोध छात्रा ने प्रस्तुत शोध प्रबंध में उस दृष्टि से भी बच्चन की कविताओं का अध्ययन करने का प्रयास किया है । इस शोध प्रबंध में हालावाद की प्रवृत्तियों पर विशद रूप से अध्ययन किया गया है । दूसरी ओर बच्चन के प्रणय-गीतों पर अध्ययन हुआ है । प्रेम और संगीत उनके व्यक्तित्व में घुल मिल गये हैं । बच्चन - काव्य का आविर्भाव, क्रमिक विकास, गति-विगति, रोक-टोक सब कुछ साहचर्य के परिप्रेक्ष्य में विवेचन का विषय बनाया गया है । साथ ही कवि के सुमधुर व्यक्तित्व का अनावरण का भी प्रयास हुआ है ।

इस शोध प्रबंध में सात अध्याय हैं । पहला अध्याय कवि-जीवन की झाँकी प्रस्तुत करता है । दूसरे अध्याय में हिन्दी की स्वच्छंदतावादी काव्य-धारा और उससे बच्चन का संबंध, हालावाद, हालावादी रचनायें आदि पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है । तीसरा अध्याय बच्चन की प्रगति

की कहानी कहता है । उसमें "निशा निमंत्रण", "एकांत संगीत" और "आकुल अंतर पर" विश्लेषणात्मक अध्ययन हुआ है । चौथे अध्याय में बच्चन-काव्य में प्रतिबिंबित सामाजिक, राजनैतिक वातावरण पर अध्ययन किया गया है । पाँचवें अध्याय में बच्चन के व्यक्तित्व में जो नया मोड आ गया है उसपर अध्ययन हुआ है । छठे और सातवें अध्याय में परवर्ती काव्यों पर अध्ययन हुआ है । लोकचेतना पर आधारित और लोकगीत शैली की कविताओं का अध्ययन इन दो अध्यायों में हुआ है ।

कोचिन - विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग के रीडर आदरणीय डॉ.एम.ईश्वरी के निर्देशन में यह शोधकार्य संपन्न हुआ । इस प्रबंध की पूर्ति केलिए उनके पांडित्यपूर्ण तथा बहुमूल्य सुझाव सहायक रहे । समय समय पर उन्होंने जो निर्देश और उपदेश दिए हैं उनकेलिए शोध छात्रा आभारी है ।

इस प्रबन्ध का लेखन कार्य सुगम बनाने में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो.डॉ.एन.रामन नायर ने जो सहायता दी है उसकेलिए कृतज्ञ है ।

हिन्दी विभाग के प्रोफेसर आदरणीय डॉ.ए.रामचंद्र देव ने समय समय पर जो पांडित्यपूर्ण सुझाव दिये हैं उनकेलिए शोध छात्रा आभारी है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध के प्रस्तुतीकरण में जिन पुस्तकों से मुझे सहायता मिली है उनके लेखकों के प्रति मैं शोध छात्रा आभार प्रकट करती है ।

रमा देवी.सी

रमादेवी.सी
हिन्दी विभाग,
कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय,
कोचिन-682 022.

पहला अध्याय

बच्चन : एक अंतरंग परिचय

जीवनी

जन्म स्थान

हरिवंश राय बच्चन का जन्म 27 नवंबर 1907 को प्रयाग के चक मोहल्ले में कायस्थ कुल में हुआ ।

माता-पिता

उनके पिता थे प्रताप नारायण और माता थी सुरसती । प्रताप नारायण इलाहाबाद से प्रकाशित "पायनियर" में काम करते थे । हरिवंश राय अपने पिता का छठा बेटा है । बच्चन के जन्म के समय प्रतापनारायण के परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी । पायनियर प्रेस की नौकरी से प्राप्त सीमित वेतन से प्रताप नारायण अपनी गृहस्थी सुचारु ढंग से चलाते थे ।

सुरसती पति परायणा थीं । संगीत में विशेष रुचि रखती थी । सूर के पदों का गायन वे करती थीं । माता की संगीत प्रियता ने बच्चन को भी बहुत भव्य-रीति से काव्य.पाठन करने की शक्ति प्रदान की । वह पति की सेवा में निरत थी । प्रताप नारायण नियमबद्ध जीवन बितानेवाले थे । संस्कारों में वे निष्ठावान सनातनी थे । अपने घर में वे प्रतिदिन पूजा-पाठ के बाद पानी पीते थे ।

बाल्य काल

बच्चन का परिवार बहुत बडा था । घर में बच्चों की संख्या तेरह थी । इनमें से मोहन चाचा की लडकी पत्तो बच्चन की सबसे प्रिय सहेली थी । उनकी अचानक मृत्यु हुई । बच्चन पत्तो की मृत्यु से विचलित हुए । मृत्यु के संबंध में गहराई से सोचने का अवसर उससे मिला ।

एक अविस्मरणीय घटना

इलाहाबाद में लोकमान्य तिलक और एनीबेसेंट का आगमन हुआ । यह उनके जीवन की एक अविस्मरणीय घटना थी । उन्हें देखने को कर्कल के साथ बच्चन भी गये । उनकी गाडी खींचने केलिए हिन्दू बोर्डिंग हाउस के विद्यार्थी गण तैयार हो गये । गाडी खींचनेवाले लडकों में बच्चन भी एक थे जिसपर उन्हें बडा गर्व था ।

हिन्दी के प्रति आकर्षण

ऊँचीमंडी के स्कूल में पढते समय घटित एक घटना उनके जीवन को व्यवस्थित करने में सहायक हुई । एक दिन वे कर्कल के साथ विद्यामंदिर स्कूल में स्वामी सत्यदेव परिव्राजक का व्याख्यान सुनने केलिए गये । उनके भाषण का विषय था - "हिन्दी हमारी राष्ट्र भाषा" । उनके भाषण में ओजस्विता थी । बच्चन पर उस व्याख्यान का अच्छा प्रभाव पडा । उन्होंने सभा में बैठे उर्दू को त्यागकर हिन्दी स्वीकारने का निर्णय लिया । बच्चन के पिता उनके इस निर्णय से सहमत नहीं थे । फिर भी वे अपने निर्णय में अडिग रहे और उन्हें डिप्टी इन्स्पेक्टर बाबू शिवकुमार सिंह से विशेष अनुमति मिली । उन्होंने उर्दू को

छोडकर विधिवत् हिन्दी पढना आरंभ किया ।[1]

प्रारंभिक शिक्षा

बच्चन की प्रारंभिक शिक्षा मोहितिशिमगंज म्यूनिसिपल स्कूल में हुई । वहाँ दूसरे दर्जे तक ही उनकी पढाई जारी रही । तीसरी कक्षा की शिक्षा उँचीमंडी म्यूनिसिपल स्कूल में हुई ।

कविता का प्रथम स्फुरण

1919 जुलाई में बच्चन स्थानीय कायस्थ पाठशाला हाई स्कूल की छठी कक्षा में भर्ती हुए । कायस्थ पाठशाला का विद्यार्थी-जीवन [illegible] उनके व्यक्तित्व-निर्माण में सर्वथा सहायक रहा । स्कूल में हिन्दी समिति थी । उसमें कविता और कहानी पढी जाती थी । हिन्दी समिति में वे भी सदस्य थे । यहाँ के कविता पारायण ने उनको कविता की ओर उन्मुख किया था । बच्चन ने अपनी सबसे पहली कविता सातवीं कक्षा में पढते समय लिखी थी । नवीं तथा दसवीं कक्षा तक पहुँचते ही उन्होंने कविताओं से एक पूरी की पूरी कापी तो भर ही डाली ।

1925 में हरिवंश राय हाई स्कूल पास हुए । उनकी कवि-प्रतिभा ने कायस्थ पाठशाला में प्रथम अंकुर पाया । भविष्य के कवि बच्चन का प्रथम परिचय यहीं हमें प्राप्त होता है ।

बच्चन : कालेज में

1926 में बच्चन इलाहाबाद के गवर्नमेंट कालेज में प्रथम वर्ष इंटर में भर्ती

---

1. बच्चन - क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 178

हुए । जून 1927 में द्वितीय श्रेणी में इंटर पास हुए । जुलाई 1927 में उन्होंने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में बी.ए.क्लास में नाम लिख लिया । उनके ऐच्छिक विषय हिन्दी और फिलासफी थे । फिलासफी में मेटा फिसिक्स और मार्डन एथिक्स भी शामिल थे । 1929 की बी.ए.फाइनल की परीक्षा में वे प्रथम श्रेणी में पास हुए ।

1930 में एम.ए.प्रीवियस करके उन्होंने पढाई छोड दी । इसका पहला कारण था पत्नी श्यामा की बीमारी । दूसरा कारण था असहयोग आन्दोलन । श्यामा की मृत्यु 1936 में हुई । उसके बाद 1937 जुलाई में उन्होंने फिर से पढाई शुरू की । 1938 में उन्होंने एम.ए. की परीक्षा पास की । 1938 में बनारस से बी.टी. लिया ।

इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के अंग्रेज़ी विभागाध्यक्ष अमरनाथ झा के निर्देशन में थीट्स पर शोध काम शुरू किया था । झा साहब के आदेशानुसार केम्ब्रिज विश्वविद्यालय जाकर उन्होंने शोध कार्य पूरा किया ।

बच्चन 1952 में लंदन पहुँचे । एम.लिट् उपाधि केलिए उन्होंने काम शुरू किया । दो वर्ष के उपरांत थीसिस प्रस्तुत की । यह थीसिस इतनी अच्छी थी कि उसके आधार पर उन्हें पी.एच.डी. की उपाधि दी गई ।[1] यह एक बहुत बडी उपलब्धि थी ।

बाल्य-काल के मित्र

बच्चन अपने चचेरे और सगे भाई बहनों के बीच में मध्यस्थ की स्थिति में थे । एक भाई-शिव प्रसाद और चार बडी बहनें - दुर्गा, द्रौपदी, कैलाश्य

---

1. बच्चन - बसेरे से दूर - पृ: 183

और भगवानदेई और दो छोटे भाई ठाकुर प्रसाद, शालिग्राम और चार बहनें - पत्तो, राम कुमारी, बिटोला और शैल कुमारी बचपन में उनके सखा थे । मंगल पंडित के एकमात्र पुत्र कर्कल एक साथ उनके भाई थे और मित्र भी । बचपन से ही कर्कल बच्चन को प्यार करते थे और उनके संग-संग रहते थे । वे एक दूसरे से अभिन्न थे ।

यौवन

कर्कल और बच्चन का पारस्परिक संबंध सब प्रकार से अजीब था । वे अपने को दो तनों में एक आत्मा मानते थे । कर्कल बडा स्नेही मित्र था । उसकी पत्नी थी चंपा । गौने के दिन के पूर्व बच्चन बहुत उदास थे । क्योंकि उनका विचार था कि शादी के बाद वे कर्कल से उतनी तीक्ष्ण मित्रता कायम न रख सकेंगे । उनका मन रोता रहा । रोने का कारण समझकर कर्कल ने अन्हें समझाया कि जो उनका होगा वह बच्चन का भी होगा ।[1]

शादी के बाद कर्कल, चंपा और बच्चन इन तीनों का संबंध गाढा हो गया । चंपा बच्चन को देखकर यों कहती थी - "दोनों जुड आँ लगते हैं । दोनों समान रूप से चंपा के प्रभाव में पड गये वे हर दिन चम्पा से मिलने केलिए कर्कल के घर में जाया करते थे । किन्तु खुशी के वे दिन अधिक काल तक न टिके । अक्तूबर के अंत में कर्कल की मृत्यु हुई । चंपा के प्रति बच्चन का जो प्रेम था उसकी गूँज बाद की उनकी कई कविताओं में सुनाई पडती है ।[2]

---

1. बच्चन - क्या भूलूं क्या याद करूं - पृ: 210
2. वही पृ: 214

कर्कल की मृत्यु बच्चन और चंपा एक दूसरे को अधिक निकट लायी । उनकी उपस्थिति में चंपा कुछ शांत थी और चंपा के पास उन्हें कुछ शान्ति अवश्य मिलती थी । पतित, पीडित, दुःखित, अपमानित, हताश चंपा अकाल ही चल बसी ।

एक मार्मिक घटना

कर्कल की मृत्यु, चंपा का अभाव, मेट्रिकुलेशन में पराजय आदि से निराश होकर वे एक दिन आत्महत्या केलिए तैयार हो गये । उस समय क्रिस्टियन कॉलिज के एक अध्यापक एडंस महोदय की अनायास सहानुभूति ने बच्चन को जीवन के प्रति आशावान बना दिया और फिर से संघर्ष करने की प्रेरणा दी । यह यौवनारंभ की एक मार्मिक घटना है ।[1]

श्यामा से विवाह

कायस्थ पाठशाला के सहपाठियों में श्री.मोहन बच्चन से कुछ लगाव का अनुभव करते थे । मोहन की बहन का पति महावीर प्रसाद श्यामा के भाई थे । निराश बच्चन को मोहन किसी न किसी प्रकार सान्त्वना देना चाहते थे । इसलिए उन्होंने श्यामा में बच्चन की भावी संगिनी देखी ।

श्यामा के साथ बच्चन की शादी मई 1926 में हुई । उसके पिता राम - किशोर थे । श्यामा का जन्म पालन मध्यवित्त परिवार में हुआ था । उसकी शिक्षादीक्षा सब घर पर ही हुई थी । विवाह के समय श्यामा की उम्र उन्नीस की थी । वे उस अवस्था में अधिक परिपक्व हो गये थे । लेकिन उन्हें बच्ची श्यामा के साथ बच्चा बनना पडा ।

---

1. बच्चन - क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 220-221

श्यामा और बच्चन का संबंध बहुत आत्मीयतापूर्ण और हार्दिक था । वे अपने अपने घर में रहते थे । फिर भी श्यामा उनको पढाई में सर्वथा सहयोग देती थी । वह चाहती थी कि उसका पति बी.ए.पास हो जाए । श्यामा सेवापरायण लडकी थी । उसकी माता मंद ज्वर से पीडित थी । माता की सेवा शुश्रूँषा करते करते वह भी उस बीमारी का शिकार बन गयी ।

बच्चन दिन-रात श्यामा की सेवा शुश्रूँषा करते थे । इलाज केलिए उसे इलाहाबाद से पटना ले जाया गया । लेकिन सन् 17 नवंबर 1936 में श्यामा का निधन हो गया । वह कभी माँ नहीं बनी । उसकी मृत्यु के बाद बच्चन एक पंख कटे पक्षी बन गये ।

बच्चन के काव्य-जीवन से श्यामा का गहरा संबंध था । पहले वह देहाती लडकी थी । बाद में वह बच्चन के काव्य व्यापार में अच्छी तरह भाग देती थी । प्रफुल्लचन्द्र ओझा मुक्त ने "एक अंतरंग झाँकी" में कहा है कि "वे कवि बच्चन से अनभिज्ञ थे । श्यामा के माध्यम से वे इस सत्य से अभिज्ञ हुए कि बच्चन कविता करते हैं । एक दिन बच्चन के घर पर आए मुक्त से श्यामा ने किसी चीज़ को ढूँढकर देने को कहा । भाभी के कहे अनुसार मुक्त ने संदूक खोला तो उन्हें बडे सुन्दर अक्षरों में लिखी कविताओं से भरी दो-तीन कापियाँ मिलीं । भाभी से मुक्त को ज्ञात हुआ कि ये बच्चन की कवितायें हैं । मुक्त ने उन्हें कापी करके कुछ प्रतिष्ठित पत्रिकाओं को भेज दिया। जब वे प्रकाशित हुईं तब बच्चन बहुत नाराज़ हुए । इस प्रकार पहली बार पाठकों के सामने बच्चन की कवितायें आईं जिसमें श्यामा का बडा हाथ था ।[1]

---

1. प्रफुल्लचन्द्र ओझा मुक्त - बच्चन निकट से - सं. अजित कुमार ओंकार नाथ श्रीवास्तव -पृ: 93

श्यामा की मृत्यु के बाद बच्चन का मन एकाकी रह गया और बहुत अकुलाया । वे बेसहारा बन गये । श्यामा पत्नी ही नहीं, उनकी मित्र भी थी । "निशा निमंत्रण", "एकांत संगीत" और "आकुल अंतर" में उनके मन की निराशा, विरह की तीव्रानुभूति, मानसिक भावों और तनावों की तीव्रता की अभिव्यक्ति हुई है ।

बच्चन - स्वातंत्र्य - संग्राम के बीच में

इलाहाबाद स्वतंत्रता-संग्राम के प्रमुख केन्द्रों में एक था । अत: बडे बडे नेताओं का आगमन वहाँ पर होना स्वाभाविक था । एक दिन गाँधीजी भी वहाँ आए । होमरूल लीग के मैदान में उनका भाषण सुनने केलिए लोग इकट्ठे हो गये । वे अहिंसात्मक सहयोग की व्याख्या करते हुए स्कूल, कॉलेज, कचहरी, अदालत और सरकारी खिताबों का बहिष्कार करने को कहते थे । बच्चन उस भाषण से अत्यधिक प्रभावित हुए । लेकिन पढाई छोडने केलिए आशा होने पर भी उन्हें ऐसा करने से रोक दिया जाता था । चर्खा चलाने, खादी पहनने की आज़ादी उन्हें मिली । उन्होंने इसमें अपने योग्य काम करके गाँधीजी के भाषण को सार्थक बनाया । सभाओं में वे जाते थे और नेताओं के व्याख्यान सुनते थे ।[1] गाँधीजी के प्रति उनके मन में बडी श्रद्धा थी । उसने उन्हें गाँधीजी की मृत्यु के बाद "खादी के फूल" और "सूत की माला" की रचना करने की प्रेरणा दी । 1930 में असहयोग आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने केलिए उन्होंने एम.ए.प्रीवियस करके पढाई छोड दी ।

---

1. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 186

काव्य पथ के पथिक

यह सूचित किया गया कि बच्चन बचपन में कविता रचते थे । बच्चन की पहली कविता जबलपुर से प्रकाशित होनेवाली "प्रेमा" में "मध्यान्ह" शीर्षक से 1931 में छपी थी ।[1] कवि ने ठाकुर यादवेन्द्रसिंह के कहानी संग्रह "हार" से अपने प्रथम काव्य-संग्रह "तेरा हार" के नाम केलिए प्रेरणा प्राप्त की थी ।[2] प्रारंभ में वे अपनी कविताओं को बिल्कुल निजी बनाकर रखते थे । पर बाद में अपने दोस्तों को सुनाने लगे थे जिसके भाव-चमत्कार से वे आह्लादित होते थे । ऐसे मित्रों में श्री आनंदी प्रसाद श्रीवास्तव और विक्रमादित्य सिंह का नाम विशेष उल्लेखनीय है । बच्चन में कवि होने का विश्वास श्यामा ने दृढ किया था । वे "स्वान्त सुखाय" लिखते थे । वे स्वीकारते हैं - "मेरी कविता मेरे जीवन की स्थितियों, उसकी आवश्यकताओं, उसकी आकांक्षाओं से सीधी उठी हुई चीज़ है । इतना ज़रूर है कि भाषा के संबंध में मुझे अपने परिवार और परिवेश से जो संस्कार मिले हैं उनमें अनुदारता और संकीर्णता केलिए कोई जगह नहीं है ।[3]

अंग्रेज़ी साहित्य का छात्र

श्यामा की मृत्यु के बाद वे फिर एक बार पढाई में मग्न हुए । उन्होंने 1938 में एम.ए (अंग्रेज़ी) की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली ।

---

1. चन्द्रदेवसिंह - बच्चन एक पहेली - पृ: 24
2. बच्चन - क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 191
3. बच्चन - नीड का निर्माण फिर - पृ: 148

अध्यापकीय जीवन

बच्चन इलाहाबाद स्कूल, प्रयाग महिला विद्यापीठ, और अग्रवाल विद्यालय हाई स्कूल में अध्यापक रहे । अग्रवाल विद्यालय का अध्यापकीय जीवन उनकेलिए तीव्रतम मानसिक और आर्थिक संघर्षों का था । फिर भी उनमें कर्तव्य के प्रति निष्ठा और अपने विद्यार्थियों के प्रति सद भावना थी । गांधी ने अपने सारे देश के वातावरण को आदर्शवादिता से अनुप्राणित कर रखा था । बच्चन बताते हैं कि विद्यार्थियों के बीच बैठकर वे अपनी बहुत-सी उद्विग्नताओं से विमुक्त हुए थे ।

1942 में बच्चन इलाहाबाद युनिवेर्सिटी के अंग्रेज़ी विभाग में प्राध्यापक नियुक्त हुए । वे अपने विद्यार्थियों से काफी आदर और स्नेह पा सकते थे । बच्चन हमेशा इस बात पर ध्यान रखते थे कि अपनी चाल-ढाल से हिन्दी का कवि बिल्कुल न दिखें । बच्चन के रूप में वे जाने जाते थे । लेकिन अपने को अंग्रेज़ी अध्यापक स्थापित करने केलिए उन्होंने अपना नाम युनिवेर्सिटी में हरिवंशराय रखा । वे मेहनत से लेक्चर तैयार करते थे और वक्त से क्लास में पहुँचते थे ।

बच्चन हमेशा विद्यार्थियों से भी आशा करते थे कि वे समय से क्लास में पहुँचें और ध्यान से उनके लेक्चर सुनें । वे उपस्थिति के संबंध में कडे नियम रखते थे । हाजिरी लेते समय विद्यार्थी क्लास में न आ सकते थे । लेक्चर आरंभ होने के बाद कोई लडका अंदर नहीं आ सकता था । जो हाजिरी समाप्त होने के बाद क्लास में आते थे वे लेक्चर तो सुन सकते थे, पर उनकी हाजिरी न लग सकती थी ।[1] उनकी राय में अपने आप पढना ही सबसे अच्छा तरीका है ।

---

1. बच्चन - बसेरे से दूर - पृ: 21

वे हमेशा विद्यार्थियों में स्वयं पढने की रुचि जगाने की कोशिश करते थे । साधारणत: लेक्चर लोग स्वाध्याय केलिए पुस्तकों की लंबी चौडी सूची का इमला विद्यार्थियों से ज़रूर बोल देते थे । पर विद्यार्थी गण इन पुस्तकों को जल्दी प्राप्त न कर सकते थे । कारण यह था कि पुस्तक की संख्या कम और विद्यार्थियों की संख्या बहुत ।[1] इस समस्या का हल करने केलिए बच्चन ने एक सेक्शन लाइब्रेररी की स्थापना की जो बढकर आज अनेक विद्यार्थियों केलिए उपयोगी सिद्ध हुआ है । 1941 से 1952 तक वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में लेक्चरर रहे । वहाँ उनका परिचय पी.ई.दस्तूर, अमरनाथ, प्रो.एस.सी.देव, धीरेन्द्र वर्मा, शिवाधर पांडे आदि से हुए । पं. अमर नाथ झा द्वारा खुद दाम देकर आनेवाला नीलम ~~xxxxxx~~ सचमुच बच्चन का लकी स्टोन सिद्ध हुआ । 1952 में पी.एच.डी. केलिए वे केम्ब्रिज चले गये ।

बच्चन इंग्लैंड में

केम्ब्रिज विशुद्ध विश्वविद्यालयी नगर है । मनोरंजन, दिल-बहलाव और खेल-कूद के स्थानों-संस्थानों की केम्ब्रिज में कमी नहीं । बच्चन उसकी सौम्य सुंदरता पर मुग्ध थे, उसकी चमत्कारी देन के प्रति नतमस्तक । उन्होंने वहाँ रहकर आधुनिक अंग्रेज़ी कविता का स्वाध्याय किया, एकाधिक ब्रिटिश यूनिवेर्सिटियों में जीवन, अध्ययन और अध्यापन की विधि देखी और समझी । वहाँ रहकर उन्होंने सौ से ऊपर छंदोबद्ध और मुक्त छन्द की कवितायें लिखीं जो बाद को "प्रणय पत्रिका", "आरती और अंगारे" और "बुद्ध और नाचघर" नामक संग्रहों में प्रकाशित हुईं । बहुत सा गद्य लिखा, जो "प्रवास की डायरी" के नाम से प्रकाशित हो चुका है । उन्होंने अंग्रेज़ी और आयरी समाज के विविध रूपों को देखा ।

---

1. बच्चन - बसेरे से दूर - पृ: 22

इंग्लैंड में टी.एस.इलियट और आधुनिक कविता के अध्ययन में डा.ली विस[1] और ईटस के अध्ययन में मि.हफ[2] और मि.हेन[3] का निर्देशन उन्हें प्राप्त हुआ ।

डब्ल्यू.बी.ईटस और उनका काव्य

ईट्स के प्रति बच्चन के आकर्षण ने ही उन्हें शोध कार्य केलिए प्रेरित किया था । टी.एस.ईलियट ने स्वयं विलियम बटलर ईट्स को आधुनिक समय में अंग्रेज़ी का सबसे बडा प्रतिनिधि-कवि माना है ।

शोध-कार्य में आमग्न बच्चन

बच्चन 1952 अप्रैल 16 को केम्ब्रिज पहुँचे । दो वर्ष उन्होंने वहाँ बिताये । ईट्स संबंधी शोध कार्य में उन्हें डा.हेन से निर्देशन मिला । डॉ. हेन की धारणा थी कि ईट्स के साहित्य का अध्ययन अभी कई दिशाओं में और कई दृष्टियों से होना बाकी है । उनकी राय में ईट्स के विश्लेषण केलिए गहन अध्ययन, अन्त र्भेदी दृष्टि और सूक्ष्म कल्पना शक्ति अपेक्षित हैं ।[4] हेन के घर की लाइब्रेरी में ईट्स का और ईट्स पर जितना भी साहित्य उपलब्ध था सब लगा था । पत्र-पत्रिकाओं में ईट्स पर जो अच्छे लेखादि निकले थे, वे भी टाइप कराके रखे हुए थे । एक फाइल जिसमें हेन और ईट्स के बीच जो पत्र व्यवहार हुआ था उनका संकलन था ।[5] बहुमूल्य दुर्लभ सामग्री उन्होंने ब्रिटिश म्यूज़ियम के पुस्तकालय से प्राप्त कर ली । हेन ने बच्चन के अंदर छिपी शोध प्रकृति को पहचाना था और उसे विकासित करने में हार्दिक रुचि ली थी ।

---

1. प्रवास की डायरी - बच्चन - पृ: 11
2. वही पृ: 30
3. वही पृ: 108
4. बच्चन - बसेरे से दूर - पृ: 83
5. वही पृ: 84

निर्देशक (हेन) बच्चन के काम में उतनी रुचि लेते थे कि उनको बडी प्रसन्नता हुई । जब हेन व्याख्यान-परियात्रा का निमंत्रण पाकर अमरीका गये तब युनिवेर्सिटी की ओर से उनके स्थान पर मि.ग्राहम हफ उनके निर्देशक नियुक्त हुए । उनके निर्देशन में बच्चन ने डब्ल्यू.बी.ईट्स और भारत पर अपना पहला निबंध लिखा । हफ का निर्देशन एक तरफ से उनकेलिए सौभाग्यपूर्ण ही रहा, बाद को उनके शोध प्रबंध के दो परोक्षकों में एक वे रख गए । जब हेन अपनी छुट्टी से वापस लौटे तब फिर उन्होंने बच्चन को अपने निर्देशन में लिया । उन्होंने हफ द्वारा कराये गये काम के प्रति अपनी सहमति प्रकट की ।

हेन की धारणा है कि आइरिस चरित्र को समझे बिना कोई ईट्स को पूरी तरह समझ न सकेगा ।[1] इसलिए वे आयरलैंड गये । आयरलैंड में चारों ओर हरियाली ही हरियाली है । यहाँ सब कुछ हरे रंग के हैं । बच्चन श्रीमती जार्ज ईट्स से मिले । मिसेज़ ईट्स अपने पति के जीवन और काव्य में रुचि लेनेवालों को बडे स्नेह और समादर से देखती थीं । वे बडी ममतामयी थीं । उन्होंने जार्ज ईट्स के घर में बैठकर लगभग एक मास काम किया ।[2] आयरलैंड से अपने लिए आवश्यक सामग्री लेकर वे वापस आये ।

"ईट्स के पुस्तकालय" तथा डबलिन युनिवेर्सिटी से सबसे उपयोगी सामग्री उन्हें मिली । डबलिन युनिवेर्सिटी रिव्यू में ईट्स की कवितायें सबसे पहले प्रकाशित हुई थीं । डबलिन युनिवेर्सिटी रिव्यू से जो सामग्री उन्हें मिली थी उसके प्रकाश में उन्होंने प्रारंभिक अध्यायों को फिर से लिखा । हेन के निर्देशन में उन्होंने शोध कार्य पूरा किया । उनके शोध प्रबंध का शीर्षक है - "डब्लू.बी. ईट्स ऐण्ड ओकल्टिज़म" ।

---

1. बच्चन - बसेरे से दूर - पृ: 122
2. वही पृ: 130

केम्ब्रिज़ से लौटने के ग्यारह वर्ष बाद ईट्स की जन्म-शताब्दी पर बच्चन ने अपनी थीसिस पुस्तक रूप में प्रकाशित की तो हेन ने बड़ी खुशी से उसकी भूमिका लिखी । भूमिका में एक स्थान पर वे लिखते हैं -

"डा.बच्चन स्वयं हिन्दी के प्रख्यात कवि हैं और जहाँ तक अनुवादों को देखकर कोई निर्णय कर सकता है, यह कहना गलत होगा कि काव्य के प्रति दृष्टिकोण में, विशेषकर . रूपकों और प्रतीकों के उपयोग में, उनकी और ईट्स की तकनीक में अद्भुत समानता है ।[1]

भारत में आगमन

1954 में केम्ब्रिज से पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त करके वे लौटे । इसके बाद उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में कुछ महीने केलिए काम किया । कुछ समय तक आकाशवाणी इलाहाबाद में प्रोग्राम आडवाइसर के रूप में काम किया । दिसंबर 1955 में भारत सरकार ने उन्हें विदेश मंत्रालय के हिन्दी विशेषज्ञ के पद पर नियुक्त किया, वहाँ उन्होंने दस वर्ष काम किया । 1966 और 1972 में वे राज्य सभा के सदस्य मनोनीत हुए । 1972 से 1978 तक कभी बंबई, कभी दिल्ली रहकर अब स्थायी रूप से बंबई में रहते हैं । बच्चन को हमेशा अनौपचारिक रूप से राजकवि का दर्जा मिला रहा । नेहरू परिवार से उनकी निकटता ने उन्हें कभी भी इस पद से नीचे नहीं जाने दिया । आजकल उन्हें भारत सरकार की ओर से पं.जवाहरलाल नेहरू की जीवनी लिखने का काम सौंपा गया है ।[2]

---

1. Dr. Bachchan is himself a Hindi Poet of reputation and (so far as one may judge in translation) there is a striking similarity of approach particularly as regards images and symbol as between his own technique and that of Yeats.
2, संचेतना - नवम्बर 1986 - सं. महीपसिंह

तेजी से विवाह

सबसे पहले तेजी से बच्चन की मुलाकात मित्र ज्ञान प्रकाश सौहरी के घर पर हुई । तेजी सौहरी की पत्नी प्रेमा की सहेली थी । यह परिचय दोनों के जीवन में बहुत महान था । क्योंकि दोनों 24 जनवरी 1941 को विवाह संबंध में जुड गये । तेजी उन दिनों फतेहचन्द कॉलेज में अध्यापिका थीं । उनका विषय साइकोलेजी था । तेजी रावलपिंडी के कल्लर गाँव के सरदार खजान सिंह सूरी की चौथी और सबसे छोटी लडकी है । उनमें अद्भुत हार्दिक व्यावहारिकता थी ।

बच्चन ने अपने और तेजी के मिलन को संयोग ही माना है । जिस समय तेजी ने कवि के जीवन में प्रवेश किया उस समय आईरिस के विफल प्रेम संबंध के कारण वे अत्यन्त उदास थे । लेकिन तेजी के आगमन ने उन्हें नया बनाया ।

तेजी से विवाह करने पर उनकी कविता में भी नया मोड आया । निराशा और दु:ख का अँधेरा प्रकाश में बदल गया । इस समय के उनके हर्षोल्लास को व्यक्त करनेवाली रचनायें हैं - "सतरंगिनी", "मिलन यामिनी" और "प्रणय पत्रिका" ।

दोनों का दाम्पत्य जीवन सुखद है । प्रथम पुत्र अमिताभ का जन्म सन् 1942 में हुआ । उनका नामकरण पंतजी ने किया । सन् 1947 में दूसरा पुत्र अजिताभ का जन्म हुआ । यही बच्चन के नीड के पुन: निर्माण की कहानी है । अमिताभ आज प्रसिद्ध सिनेमा एक्टर हैं । वे आज संसद के सदस्य हैं । वे भी पिता के समान एक गायक है । उनकी पत्नी जया भादुरी भी एक सिनेमा एक्टरस थी । अब दो बच्चों के साथ रहती हैं । छोटे बेटे अजिताभ की पत्नी रमोला है ।

बच्चन का संपर्क क्षेत्र

बच्चन का संपर्क क्षेत्र बहुत व्यापक, बहुरंगीन और बहुत संबंधी रहा है । उनके संपर्क क्षेत्र में आनेवाले व्यक्तियों में प्रसिद्ध कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत, माखनलाल चतुर्वेदी, राम कुमार वर्मा, अज्ञेय, शमशेर, धर्मवीर भारती, दिनकर आदि प्रमुख हैं । उनमें पंत से बच्चन का संबंध गहरा था ।

आत्मकथाकार

आत्मकथाकार के रूप में उन्होंने काफी ख्याति प्राप्त की है । मौलिक गद्य रचनाओं में उनकी आत्मकथा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है । आत्मकथा में लेखक का जीवन चरित्र तो रहता ही है । लेकिन वह जीवन-चरित्र देश और काल से निरपेक्ष नहीं होता । इस बात को लेकर आत्मकथा, इतिहास की समीक्षा है । वे अपना आत्म-चरित तीन कृतियों - "क्या भूलूँ क्या याद करूँ", "नीड का निर्माण फिर", तथा "बसेरे से दूर" में प्रस्तुत कर चुके हैं । ये तीन कृतियाँ बच्चन के गद्यकार को स्पष्ट करती हैं । ये रचनायें अत्यधिक रोचक हैं । उन्हें उपन्यास की तरह पढा जा सकता है ।

क्या भूलूँ क्या याद करूँ

"क्या भूलूँ क्या याद करूँ" के प्रारंभिक 20 वें पृष्ठ तक लेखक कायस्थ जाति की उत्पत्ति, उसके गुण तथा ब्राह्मण के साथ जातिश्रेष्ठता व हीनत्व की कहानी कहते हैं । इससे आगे बच्चन अपने पूर्वजों की उत्पत्ति तथा विकास कथा से चलकर अपनी पत्नी श्यामा की रुग्णावस्था में मृत्यु के संघर्ष तक की कहानी कहते हैं । यह आत्मकथा उनकी कविता की अनजानी पृष्ठ भूमियों को उजागर करती हैं ।

"क्या भूलूँ क्या याद करूँ" में बच्चन ने जो भी लिखा है उसमें सबसे अधिक प्रखर और बोलता हुआ चित्र उनके पिता प्रताप नारायण का है । उनकी यह आत्मकथा यह बताती है कि बच्चन किन कठिनाइयों से किस प्रकार झेलते हुए ऊँचे उठे हैं तथा यह सफलता और विफलता, हर्ष और विषाद भरा जीवन उनके कवि कर्म पर किस प्रकार क्रिया प्रतिक्रिया करता रहा है ।

उन्होंने व्यक्तियों के ऐसे शब्द चित्र खींचे हैं कि उनके पढते ही जैसे वह व्यक्ति स्वयं मूर्तिमान और सामने खडा हो जाता है । "श्यामा भोली भाली, नन्हीं, नादान, अनजान, हंसमुख, मधुवन की टहनी, गुलाब की कली, शैली की स्काई लार्क सी ।"[1]

यह रचना एक साधारण मनुष्य के जीवन की कहानी कहती है । वे अपनी सब त्रुटियों, कमियों, भूलों, [illegible]ताओं के साथ प्रस्तुत हुए हैं । जब बच्चन अपने जीवन के पृष्ठ खोलते हैं तो एक आत्मीयता के साथ उनके स्मरणीय चित्र उनसे वाणी मांगने लगते हैं । "क्या भूलूं क्या याद करूं" बच्चन के सरल स्वाभाविक और साधारण स्वरूप को स्पष्ट करनेवाली गद्य रचना है ।

नीड का निर्माण फिर

उक्त रचना में बच्चन ने श्यामा की मृत्यु पर हुए दारुण दुखद खाली एवं अकेला जीवन, बी.टी करने की कहानी तथा पुनः निर्माण करने के प्रसंगों का रोचक वर्णन किया है । यहाँ सन् 1936 से 1952 ई तक उनके जीवन की कहानी कही गयी है । "नीड का निर्माण फिर" का लेखक भावुक के स्थान पर विचारक अधिक बन गया है । बच्चन के पुनर्जीवन की शुरुआत ज्ञान प्रकाश जौहरी, प्रेमा और आदित्य के परिचय से होती है । उसका मार्मिक चित्रण यहाँ दिया गया है । तेजी से सगाई और सिविल मैरिज इस आत्मचरित्र का मध्यांतर है । इसके अंत में केम्ब्रिज प्रवास की सूचना भी दी गयी है ।

---

1. बच्चन - क्या भूलूं क्या याद करूं - पृ: 227

इस रचना में भी अनेक रोचक प्रसंग मौजूद हैं । यह रचना पाठक को आकर्षक लगती है । "नीड का निर्माण फिर" लगभग एक ही बैठक में पढा गया । अधिकतर पाठक ऐसा ही करेंगे - मज़बूरन । आत्मकथा में "स्वगत" तो होना ही चाहिए, पर इतनी इंटेंसली पर्सनल ।गहन वैयक्तिकतापूर्ण। आत्मकथा दुनिया में कम ही है ।"[1]

बसेरे से दूर

यह आत्मकथा का तीसरा भाग है । इसमें प्रवास काल के जीवन पर प्रकाश डाला गया है । शोध उपाधि केलिए वे केम्ब्रिज गये । वहाँ 17 महीने रहें । केम्ब्रिज और आक्सफोर्ड यूनिवेर्सिटी के रोचक संस्मरण जीवंत ढंग से यह रचना प्रस्तुत करती है । साथ ही इलाहाबाद विश्वविद्यालय का भी वर्णन अत्यंत मनोरंजक है ।

ईट्स के साहित्य तथा उनके प्रभाव के विषय में उन्होंने विस्तार से वर्णन किया है । शोध कार्य को पूरा करने केलिए उन्हें कैसी कैसी विषमतायें झेलनी पडी है, मुख्यत: आर्थिक रूप से,इनका मार्मिक चित्रण इसमें किया गया है । यह वर्णन कठिनाइयों सेजूझने और उनपर विजय प्राप्त करने को प्रेरणा देता है । शोधार्थी केलिए बच्चन का अपने शोध संबंधी विवरण निश्चय ही कुछ प्रेरणा दे सकते हैं ।

संक्षेप में ये तीन रचनायें बच्चन के आत्मकथाकार को सजग, सचेष्ट और सफल बनाती हैं । वस्तुत: उनकी आत्मकथा अपनी प्रांजलता, प्रेषणीयता और प्रौढता के कारण उनकी कविता केलिए भी एक चुनौती सिद्ध हुई है ।

---

1. बच्चन - बसेरे से दूर के फ्लाप पर प्रकाशित जगदीश चन्द्र माथुर की सम्मति से

डायरी लेखक

प्रवास की डायरी के द्वारा डायरी लेखक के रूप में भी बच्चन मशहूर हुए । मानवीय-दैनिक मनोद्वेलन का जितना सफल आकलन जिस तटस्थता से डायरी शैली में हो सकता है उतना अन्य किसी साहित्यिक विधा में संभव नहीं । डायरी लेखक घटना के साथ तिथि एवं स्थान का नाम भी निर्देशित करता है जिनसे बातें अधिक विश्वसनीय होती हैं ।

प्रवास की डायरी

यह प्रवास की डायरी 12, अप्रैल 1951 से 12, जनवरी 1953 तक के काल फलक पर अवस्थित है । उसके उपरान्त शोध कार्य में संलग्न होने के कारण डायरी लिखने का कार्य भी बंद हो गया । इसके द्वारा बच्चन विविध रूप में - कवि, विद्यार्थी, पति, पिता, शोध प्रज्ञ, रोमांस लडानेवाला पाठकों के समक्ष प्रकट हुए हैं । इसमें बच्चन के संघर्षशील अतीत की झाँकी आत्म-चित्रण-परक शैली में चित्रित है ।

यह डायरी शोध कार्य की कठिनाइयों का स्पष्ट चित्र खींचती है । यहाँ बच्चन ने कलाकार के सर्जनशील क्षणों का अंतरंग परिचय दिया है । यह डायरी काव्य-तर्जना की रहस्यात्मक प्रक्रिया को समझने केलिए सहायक है । इसमें स्वच्छंदतावाद और तत्संबंधी कविता, रहस्यवाद तथा आधुनिक कविता पर भी लेखक की विस्तृत टिप्पणियाँ भी हैं । संक्षेप में यह बच्चन की साहित्यिक प्रतिभा को बढानेवाली रचना है ।

संस्मरण लेखक

बच्चन ने सर्वप्रथम माया के 1932 के विशेषांक में किशोरीलाल गोस्वामी पर संस्मरण लिखा । "नये पुराने झरोखे" में प्रेमचंद, निराला, नवीन

चतुरसेन, पुरुषोत्तमदास टंडन पर संकलित संस्मरण हैं हो । स्पष्ट है कि इनमें निबंधकार विशेषकर संस्मरणात्मक निबंधकार का रूप अधिक उभर कर आता है । आत्मीयता का गुण उनकी सभी गद्यकृतियों में देखने को मिलता है चाहे वह आत्मचरित्र और डायरी हो क्यों न हो ।

अनुवादक

काव्यानुवाद और नाटकानुवाद दोनों क्षेत्रों में उन्होंने अपनी मौलिकता सम्यक् रूप से दिखाई है । वस्तुत: कवि-हृदय ही काव्यानुवाद के साथ न्याय कर सकता है । बच्चन कवि होने के नाते काव्यानुवाद करने में सफल हुए हैं । उन्होंने उमर खैयाम की रचनाओं को दो - खैयाम की मधुशाला तथा "उमर खैयाम की रुबाइयाँ", गीता के दो जनगीता" तथा "नागरगीता" रूसी कविताओं का एक "चौंतीस रूसी कवितायें "तथा अंग्रेज़ी कविताओं का दो "मरकत द्वीप का स्वर", तथा भाषा अपनी भाव पराये" संकलन प्रस्तुत किए हैं । "मैक बेथ", "ओथलो", "हैमलेट" आदि नाटकों का अनुवाद उन्होंने किया ।

खैयाम की मधुशाला

बच्चन मधुकाव्य से पूर्व हिन्दी में उमर की रूबाइयों के अनुवादक हो चुके थे । उनपर खैयाम का जादू-सा प्रभाव पडा था । इस काव्यानुवाद के बारे में बच्चन का कथन है - "यह अनुवाद मैंने किसी साहित्य अभ्यास के रूप में नहीं किया था, जैसे मैं जीवन की बहुत-सी विवशताएँ जी रहा था वैसे ही यह अनुवाद करना भी मेरे जीवन की एक मांग, मेरे जीने की एक विवशता थी । इतना इस अनुवाद ने अवश्य किया कि जो कुछ अपना भोगा, सहा, जिया कई वर्षों से मेरे अंदर घुमड रहा था । इसने उसे

व्यक्त करने का एक प्रतीक, एक मुहावरा दिया ।"[1] अंग्रेज़ी लेखक चेस्टरप्न ने लिखा है - "उमर का दर्शन सुखी मानव का दर्शन नहीं, दुःखी मानव का दर्शन है"।[2]

बच्चन के अनुवाद में मार्मिकता है । एक-एक रुबाई के अनुवाद से ऐसा लगता है कि वह उनकेलिए लिखी गई हो। यह अनुवाद सुरेश चंद्र गुप्त के इस कथन को सार्थक बनाता है - "शब्दानुवाद और भावानुवाद में सहयोग, मूलकृति के भावों और सांस्कृतिक आदर्शों की रक्षा, प्रतिपादन की सजीवता, भाषा की सरलता और मूलकृति के अनुरूप छंद की योजना पर बल देकर उन्होंने विदग्धता का परिचय दिया है ।"[3]

जनगीता और नागरगीता

दोनों गीता के अनुवाद हैं । "जनगीता" अवधी भाषा में दोहा - चौपाई छंद में अनूदित रचना नागर गीता खडीबोली में । संस्कृत भाषा में रचित गीता भारतीय वाङ्‌मय का अमूल्य रत्न है । ये अनुवाद मौलिक काव्य-सृजन के समान ही, बच्चन के जीवन और मनोदशा की अनिवार्यता बनकर आते हैं । "जनगीता हमें भाव विमुग्ध कर देती है तो दूसरी हमें रस-मग्न ।"[4] गीता दर्शन बच्चन के समस्तकाव्य का केन्द्रीय दर्शन है ।

---

1. बच्चन : क्या भूलूँ : क्या याद करूँ - पृ: 269-270
2. Omar's Philosophy is not the philosophy of happy people but unhappy people, Quoted from Dr. Darsa nath Raj. Halavad Aur Bacchan - p. 52.
3. सुरेश चंद्र गुप्त - हिन्दी वार्षिक - पृ: 152
4. प्रो. दीनानाथ शरण - लोकप्रिय बच्चन - पृ: 117

चौंसठ रूसी कवितायें

यह रचना 24 रूसी प्रतिनिधि कवियों की प्रख्यात रचनाओं का अनुवाद है । यह प्रयास हिन्दी-जगत में नया है । नेहरू पुरस्कार की लब्धि से इस रचना का महत्व स्पष्ट होता है । इसमें सोवियत-मैत्री को सुदृढ करने के तत्व मौजूद हैं । पाठक इस रचना को अनुवाद नहीं, मूल कृति समझते हैं । क्योंकि इन में कृति सदृश्य आस्वादन हुआ है ।

बच्चन की मान्यता है कि संघर्ष से कविता को रूप और व्यक्तित्व मिलता है । रूसी कवियों को संघर्ष का सामना करना पडा है । संघर्ष के बीच ही उनकी रचनायें पल्लवित एवं पुष्पित हुई हैं । इसलिए बच्चन ने दो देशों की एक दूसरे से पहचानने की दिशा में सफल प्रयास किया है ।

इसमें पुश्किन-कालीन और पुश्किनोत्तर चौबीस कवियों की चौंसठ कविताओं का अनुवाद हुआ है । पुश्किन रूस के राष्ट्रकवि माने जाते हैं । रूसी जीवन, भावना, आकांक्षा, आदर्श ये सभी पुश्किन में वर्तमान हैं । कवि आशावादी हैं, वे भविष्य के गह्वर में प्रकाश देखते हैं ।

न्यूतशेव, खोम्यामोव्न, अलेक्सेई, कोल्तसोव, बालमोत, ब्रुसोव, एहरेनबुर्ग आदि रूसी कवियों की कविताओं का भी अनुवाद इसमें हुआ है । इस रचना के संबंध में तारानन्दन तरुण ने जो कहा है वह ठीक ही है । "अनुवादक ने रूसी कवियों की प्रसिद्ध रचनाओं का संकलन प्रस्तुत कर हमें रूस के सतरंगी जीवन से परिचित कराया है । उसकी संस्कृति सभ्यता को निकट से परखने का अवसर दिया है ।"[1] संक्षेप में बच्चन का xxxxxxxxx यह प्रयास स्तुत्य है ।

---

1. तारानन्दन तरुण - लोकप्रिय कवि बच्चन - सं.दीनानाथ शरण - पृ: 66

मरकत द्वीप का स्वर

यह अंग्रेज़ी के महान और आयरलैंड के सबसे बडे कवि विलियम बटलर ईट्स की 101 स्फुट कविताओं का अनुवाद है । आयरलैंड को उसकी चतुर्दिक व्याप्त हरियाली के कारण "एमराल्ड आइलैंड कहा जाता है अर्थात् मरकत द्वीप । अत: ईट्स की कविताओं के अनुवाद केलिए यह शीर्षक अत्यंत उपयुक्त है ।

मरकत द्वीप का स्वर में ईट्स के "कासवेज" से नौ, "दे रोज" से नौ, "द विंड एमंग द रीडस" से तेरह, "इन द सेवेन वुड्स" से नौ, "द ग्रीन हेलमेट एण्ड अदर पोएम्स" से दस, "रेसपांसिबिलिटी" से नौ, "द वाईल्ड स्वांज ऐंट फूल" से नौ, "द टावर" से आठ, "द वाइडिंग स्टेयर एण्ड अदर पोएम्स" से नौ, "द फूल मूत ईन मार्च" से एक तथा लास्ट पोएम्स" से बारह रचनायें अनूदित हैं । "यह अनुवाद कलात्मकता की दृष्टि से सफल हुआ है । "उसमें आयर की धरती, परंपरा, संस्कृति, उसका इतिहास, स्वप्न-संघर्ष, व्यंग्य विश्वास सब कुछ बडे सहज और व्यापक रूप में प्रतिबिंबित हुए हैं ।

नाटकानुवाद

"मैकबेथ और ओथेलो" शेक्सपीयर की नाट्य कृतियों के अनुवाद है ।" इस अनुवाद में अनुकांत छंद की लय को कायम रखते हुए संवादों की स्वाभाविकता सुरक्षित है । इस अनूदित नाटक की भाषा रंगमंच पर अभिनेय के साथ बोली जाने केलिए है । "मैकबेथ के पद्यानुवाद की प्रवेशिका में बच्चन जी कहते हैं - "इसका अनुवाद करने में मैंने चार विशेष लक्ष्य अपने सामने रखे थे - अनुवाद छायानुवाद न होकर अविकल हो, शेक्सपीयर के कवित्व की रक्षा की जाय, नाटक सामान्य शिक्षित-दीक्षित जनता के सामने खेला जा सकता और चरम लक्ष्य यह कि अनुवाद अनुवाद न मालूम हो । उनका लक्ष्य एक हद तक सफल हुआ ।

बच्चन मौलिक प्रतिभा के धनी हैं । बच्चन कवि के रूप में ही नहीं सफल गद्यकार और अनुवादक के रूप में भी प्रसिद्ध हैं । उनकी आत्मकथायें और काव्यानुवाद उपर्युक्त कथन के साक्षी हैं ।

कहानीकार

कवि बच्चन के पास कहानी कविता के साथ आई । 1930 में उनकी कहानी "हृदय की आँखें" यूनिवर्सिटी हिन्दी कहानी - प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त कर सकी जिसे प्रेमचंद ने "हंस" में प्रकाशित भी किया । बच्चन की कहानियाँ प्रारंभिक रचनायें - भाग-3 में प्रकाशित हुईं । यहाँ बच्चन सामाजिक विषमता से पीडित भावुक कहानीकार के रूप में उभरे हैं । ये कहानियों पठनीय हैं । इनमें वैचारिक गांभीर्य एवं कुशल प्रस्तुतीकरण का अभाव लक्षित होता है । डॉ. स्वर्ण किरण के अनुसार इन कहानियों में बच्चन के कवि का, कदाचित पूर्व-रूप है-कल्पनाप्रवण, आत्मकेंद्रित पर परोन्मुख, "स्व" के माध्यम से "पर" का प्रतिनिधित्व करनेवाला स्वरूप ही दिखाई पडता है ।"[1]

निबंधकार

"नये पुराने झरोखे" उनके निबंधों का संकलन है । "अंग्रेज़ों" के बीच दो साल", "केम्ब्रिज में विद्यार्थी जीवन", "मेरी स्मरणीय जलयात्रा" आदि निबंध उनकी सूक्ष्मदर्शिता, पर्यवेक्षणशक्ति, आदि की परिचायक हैं । "मेरा रचना काल", मैं और मेरी मधुशाला","मेरी रचना प्रक्रिया" जैसे वार्ता-संस्मरण हमें प्रभावित करनेवाले हैं ।

कवियों में सौम्य पंत दो भागों में विभक्त है । पहला भाग 1947-1960 के मध्य लिखे गए उनके समीक्षात्मक निबंधों का संकलन है और

---

1. डॉ. गोपाल जी "स्वर्ण किरण" - लोकप्रिय बच्चन - सं.प्रो दीनानाथ शरण, पृ: 119

दूसरा भाग पंत के पत्रों का । जन-साधारण सुलभ सोधी, भाव-प्रवण भाषा शैली का यहाँ प्रयोग किया गया है । इस कृति में बच्चन का समीक्षात्मक निबंधकार बोल उठता है ।

पत्रकार

पत्र संपूर्ण जीवन को चित्रित कर जीवन के किसी एक पक्ष विशेष को प्रस्तुत करते हैं । बच्चन के द्वारा लिखे गए पत्रों के दो संकलन प्रकाशित हैं । पहले संकलन में वे पत्र हैं जो उन्होंने जीवन प्रकाश जोशी को लिखे हैं और दूसरे में निरंकरदेव सेवक को लिखे गये पत्रों का संकलन है । पहले संकलन में बच्चन के 105 पत्रों को स्थान दिया गया है जिनसे बच्चन और जोशी की समीपता जानी जा सकती है । उनका पत्र-साहित्य भी पठनीय है ।

दूसरा अध्याय

हिन्दी की स्वच्छंदतावादी काव्यधारा

साहित्य में जब नियमबद्धता का प्राबल्य हो जाता है और काव्य की गति अवरुद्ध हो जाती है तब उस अवरोध के खिलाफ विद्रोह होता है । 18 वीं सदी के अन्तिम भाग में यूरोप के अनेक देशों में नये जीवन-दृष्टिकोण का विकास हुआ । यह रोमांटिक आन्दोलन फ्रांस में हुआ । वहाँ से जर्मनी और ईग्लैंड में पहुँचा । जर्मनी में रोमांटिक विद्रोह का स्वरूप दार्शनिक था, फ्रांस में राजनैतिक और इंग्लैंड में सामाजिक और साहित्यिक था । फ्रान्स में इस नवीन आन्दोलन का अग्रदूत रूसो माने जाते हैं । उन्होंने पूरे समाज को चुनौती दी । उन्होंने संपूर्ण यूरोपीय व्यवस्था की शिथिलता पर आक्रमण किया । उनके सिद्धान्त फ्रांस पर छा गए और उन्होंने क्रांति का मार्ग प्रशस्त किया । उन्होंने मानव के गौरव पर बल दिया, शक्ति में विश्वास प्रकट किया ।

फ्रांसीसी क्रान्ति के कर्णधारों तथा सिद्धांत निर्माताओं ने जनतंत्र की स्थापना केलिए सबसे पहले समत्व, सख्य और स्वातंत्र्य का नारा लगाया था । इस क्रांति ने अन्य देशों की राजनीति के साथ साथ उनके साहित्य को भी नया रूप प्रदान किया । बीसवीं सदी के द्वितीय दशक में क्रांतिकारी विचार-धारा के परिणामस्वरूप साहित्य में एक नयी प्रवृत्ति दृष्टिगत होने लगी जिसे रोमान्टिक आन्दोलन कहा जाता है । हिन्दी में यह आन्दोलन छायावाद के नाम से जाना जाता है ।

आधुनिक काल का प्रथम चरण भारतेन्दुयुग से माना जाता है । द्विवतीय चरण में काव्य की भाषा के रूप में खडीबोली की प्रतिष्ठा पूर्ण रूप से हो गई । इस युग के पथ प्रदर्शक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी रहे । इसलिए यह युग द्विवेदी युग के नाम से ख्यातिप्राप्त हुआ । आधुनिक काल का तृतीय चरण छायावाद युग से जाना जाता है । इस युग में द्विवेदी युगीन काव्य की बौद्धिकता, नैतिकता और उपदेशात्मकता के विरुद्ध प्रतिक्रिया हुई जिसके परिणामस्वरूप काव्य में कल्पना प्रवणता, वैयक्तिक वेदना और सौन्दर्य दृष्टि का उन्मेष हुआ ।

हिन्दी में छायावाद का आरंभ बीसवीं सदी के दूसरे दशक में आरंभ हुआ । डा.नगेन्द्र का कथन है कि इसका आरंभ सन् 1922-23 से समझना चाहिए जब प्रसाद, पंत और निराला की रचनायें प्रभूत संख्या में प्रकाशित होकर हिन्दी जगत का ध्यान आकर्षित करने लगी थीं ।[1]

" छायावाद राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जिसने एक ओर पुरानी रूढियों से मुक्ति की कामना प्रकट की और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से ।"[2] गंगा प्रसाद पाण्डेय के मत में विश्व की किसी वस्तु में एक अज्ञात सप्राण छाया को झाँकी पाना या उसका आरोप करना ही छायावाद है ।[3]

प्रथम महायुद्ध के बाद यूरोप के जीवन में एक खोखलापन आ गया था । परन्तु भारत में आर्थिक परा भाव होते हुए भी जीवन में एक स्पन्दन था ।

---

1. डॉ.नगेन्द्र - विचार और अनुभूति - पृ: 98
2. डॉ.नामवर सिंह - छायावाद - पृ: 15
3. गंगा प्रसाद पाण्डेय - छायावाद और रहस्यवाद- पृ: 20

भारत को जागृत चेतना युद्ध के बाद अनेक अशायें लगाये बैठो थीं । भारतीय मानस में अनेक इच्छा-अभिलाषायें उठने लगी थीं । पश्चिम के स्वच्छंद विचारों के सम्पर्क से राजनीतिक और सामाजिक बन्धनों के प्रति असन्तोष पैदा होने लगा था । राजनीति के क्षेत्र में अंग्रेज़ी की दृढ सत्ता और समाज में सुधारवाद को दृढ नैतिकता विद्रोह की भावनाओं को बहिर्मुखी अभिव्यक्ति का असवर नहीं दे रही थी । अत: ये भावनायें अन्तर्मुखी होकर अवचेतन में बैठ रही थीं और वहाँ से क्षतिपूर्ति केलिये छाया चित्रों को रच रही थीं । काव्य में इन छाया चित्रों की समष्टि ही छायावाद कहलाई ।[1]

युग दर्शन और भावी विकास का संकेत ये दोनों ही विशेषतायें छायावादी युग के साहित्य में जीवन्त रूप में उपस्थित हैं । वस्तुत: राजनीति के क्षेत्र में जिसे गाँधी युग कहा जाता है वही साहित्य के क्षेत्र में छायावाद के नाम से विख्यात है । कवि ने प्रत्यक्ष जगत के दृश्यों में अपनी अनुभूतियों की छाया के दर्शन किए । व्यक्तिगत सुख या दु:ख की छाया में ही छायावादी कवि ने दृष्टिगोचर जगत के प्रत्येक अंग को देखा है ।

हिन्दी के छायावादी कवियों ने अंग्रेज़ी रोमांटिक काव्य की कतिपय विशेषताओं को स्वीकार किया । छायावाद में कल्पना और अनुभूति की बहुतायत है । छायावादी कवियों ने निजी सुख-दु:ख को सशक्त शब्दों में प्रकट किया है । ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौन्दर्यमय प्रतीक-विधान तथा उपचार-वक्रता के साथ स्वानुभूति की विवृति इस वाद की विशेषतायें हैं ।

अमूर्तता, संकोच, रहस्यात्मकता, आदर्शवादिता, अस्पष्टता तथा सामाजिक मर्यादा के आतंक बोध ने छायावादी प्रेम को अलौकिक अतीन्द्रिय

---

1. डा.नगेन्द्र - विचार और अनुभूति - पृ: 53

स्तर तक पहुँचाया । समाज की मर्यादा ने, कवि के संकोच ने प्रेम को उग्रता को शीतलता में परिवर्तित कर दिया है । छायावादी कवियों का प्रेम पार्थिव, दैहिक न होकर अपार्थिव माना जाता है । व्यक्ति-स्वातंत्र्य के भ्रमवश वह अपनी इच्छाओं - आकांक्षाओं और सुख-दुःखों के प्रति जितना जागरूक था उतना सामाजिक आवश्यकताओं के प्रति नहीं । छायावादी काव्य वर्णनात्मक कम, विश्लेषणात्मक अधिक है । खडीबोली की प्रतिष्ठा को उसने और भी बढाया ।

छायावाद की विशेषतायें-प्रकृति-प्रेम

छायावादी कविता की सबसे प्रमुख विशेषता प्रकृति के प्रति तन्मयता है । प्रकृति के प्रति इस अनुराग ने छायावादी कवियों को प्रकृति के कुछ अत्यंत मनोरम चित्र खींचने में सफल बनाया है । निराला की "यमुना के प्रति" पंत की "नौका विहार" आदि कविताओं में प्रकृति का जो सुन्दर चित्रण हुआ, वह हिन्दी केलिए नयी वस्तु है । इस काव्य में प्रकृति को चेतनसत्ता के रूप में चित्रित किया गया है ।

छायावादी कवि अपनी प्रेमानुभूतियों की व्यंजना प्रकृति की छवि में करते हैं । वे अपनी प्रेयसी के सौन्दर्य वैभव का साक्षात्कार कर अपने हृदय की प्रेम-भावनाओं की परितृप्ति पाते हैं । यहाँ प्रकृति दिव्य-सौन्दर्य से विभूषित है ।

मानवीकरण

प्रकृति के तत्वों पर मानवीय चेतना और अनुभूति का आरोप जब किया जाता है तो प्रकृति का मानवीकरण होता है । छायावादी कवियों

ने प्रकृति का मानवीकरण यथेष्ट किया है ।[1] प्रकृति का प्रत्येक चित्र छायावादी कवियों केलिए सौन्दर्य की एक झकाई है । प्रकृति इनके मनप्राणों में समाई है । छायावाद में प्रकृति के विविध रूपों से प्रसंगानुकूल, मानव-जीवन के क्रिया-कलाप को एकाकार करने की कोशिश की गयी है ।

पंत का प्रकृति-चित्रण जीवंत लगता है -
लहरों के घूँघट से झुक-झुक
दशमी का शाही निज तिर्यक् मुख
दिखलाता, मुग्धा-सा रुक-रुक ?[2]

कल्पनाशीलता

कल्पना की अतिशयता छायावाद की मूल भूत विशेषता है । छायावादी रचनाओं में भावुकता की बहुलता जो दिखाई पडती है वह कल्पनाशीलता के कारण ही है ।[3] नारी का स्वरूप कल्पनामय है । छायावादी कल्पना स्थूल के भीतर निहित सूक्ष्मता और सूक्ष्मता के भीतर निहित रूप को देखनेवाली कल्पना है ।

नारी की महत्ता

नवीन सांस्कृतिक चेतना के अनुरूप छायावादी काव्य में नारी के प्रति नया दृष्टिकोण मिलता है । छायावाद में प्रथम बार नारी को मानवी के

---

1. धीरे धीरे उतर क्षितिज से आ वसन्त रजनी
   मुक्ताहल अभिराम बिछा दे चितवन से अपनी ।
   (महादेवी वर्मा - यामा - पृ: 134)
2. सुमित्रानंदन पंत - तारापथ - पृ: 116
3. विजन-वन-वल्लरी पर
   सोती थी सुहागभरी - स्नेह-स्वप्न-मग्न -
   अमल कोमल-तनु-तरुणी-जुही की कली,
   दृग बंद किए शिथिल - पत्रांक में
   (निराला - अपरा - पृ: 14)

रूप में देखा गया जहाँ वह मानवी रमणी के रूप में सौन्दर्य का मोहक जाल भी बिछाती है और संगिनी के रूप में पराभूत मानव को शक्ति भी देती है। छायावाद में नारी को महिमा के सर्वोच्च सिंहासन पर प्रतिष्ठित करने की सफल कोशिश की गयी है । नारी तो मूल रूप में विश्व-बल का प्रतीक है, वह सरस्वती और लक्ष्मी सदृश है -[1]

छायावाद ने इस बात पर बल दिया है कि नारी पुरुष के विकास-पथ में बाधा बन कर उपस्थित नहीं होती, बल्कि वह तो महान लक्ष्य की ओर प्रेरित करनेवाली होती है । महादेवी को भारतीय संस्कृति में पली पतिव्रता नारी के प्रति ही स्नेह-श्रद्धा है । उनका यह विचार निम्नलिखित पंक्तियों से स्पष्ट होता है ।[2]

रीतिकालीन काव्य में मांसल सौन्दर्य का वर्णन हुआ है जबकि छायावादी काव्यों में आत्मिक सौन्दर्य की अभिव्यक्ति हुई है । नारी हमारे मन में श्रद्धा का संचार करती है एवं जीवन को विकास के पथ पर अग्रसर करती है ।

प्रेम-भावना

छायावादी काव्य में प्रेम-भावना अनेक रूपों, प्रकृति-प्रेम, नारी-प्रेम, शिशु-प्रेम, मानव-प्रेम, अज्ञात के प्रति प्रेम में व्यक्त हुई है ।

द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता का विरोध

छायावादी काव्य में द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मकता का विरोध

---

1. अचपल ध्वनि को चमकी चपला,
   बल की महिमा बोली अबला,
   जागी जल पर कमला अमला,
   मति डोली । ।निराला - तुलसीदास - पृ: 53।
2. गुलालों से रवि का पथ लीप, जलाती पश्चिम में पहला दीप,
   विहँसती संध्या भरी सुहाग, दृगों से झरता स्वर्ण-पराग । ।महादेवी वर्मा - यामा - पृ: 74।

हुआ है । वस्तु को कल्पना के स्पर्श से संजोकर अधिक मार्मिक चित्र उपस्थित किए गए हैं । द्विवेदीयुगीन नीतिमूलक आदर्शवाद का विरोध भी छायावादी काव्य में हुआ है ।

रहस्य भावना

इस युग के कवियों में परमतत्व के प्रति जिज्ञासा का भाव उभर कर आगे आया है । कामायनी के मनु के मन में परम तत्व के रहस्य को जानने की आकुलता दिखाई पडती है ।[1]

निराशावाद

अधिकांश कवियों ने अपनी व्यक्तिगत वेदना और निराशा का वर्णन किया है । महादेवी वर्मा ने अपनी पीडा का उल्लेख करते हुए कहा है ।

मैं नीर भरी दुख की बदली ।
स्पन्दन में चिर निस्पन्द बसा,
क्रन्दन में आहत विश्व हँसा,
नयनों में दीपक से जलते
पलकों में निर्झरिणी मचली ।[2]

---

1. महानील इस परम व्योम में,
अन्तरीक्ष में ज्योतिमति,
ग्रह, नक्षत्र और विद्युतकण
किसका करते से संधान ? ।प्रसाद - कामायनी - आशा सर्ग - पृ: 36।
2. महादेवी वर्मा - यामा - पृ: 233

वैयक्तिकता

छायावादी काव्य में वैयक्तिकता की प्रधानता है जिसमें वर्तमान से असंतोष, व्याकुलता, जीवन-कटुता, रूढियों के प्रति विद्रोह, मधुर अतीत का स्मरण, सुन्दर भविष्य की आकांक्षा आदि लक्षित होती है । इन भावनाओं ने कवि को बहिर्जगत से अंतर्जगत की ओर उन्मुख कर दिया । वैयक्तिकता के अत्यधिक विकास की स्थिति में छायावादी कवि आध्यात्मिक अनुभूति की ओर प्रवृत्त हुए । उनकी इसी प्रवृत्ति ने हिन्दी रहस्यावादी काव्य को जन्म दिया ।[1]

संगीतात्मकता

छायावाद के सभी कवि गीतकार रहे हैं । उसमें नाद-सौन्दर्य पर बहुत ध्यान दिया गया है । सच्चा कवि संगीत के माध्यम से ही अपने आन्तरिक भावोद्वेलन को अभिव्यक्त करता है । संगीतात्मकता तो अच्छी कविता का ही गुण है । रमणीय भाव की अभिव्यक्ति यदि कोमल शब्द और लय के द्वारा हुई हो तो काव्य संगीतमयी चारुता से अनायास अलंकृत होगा ।[2]

छायावाद ने सर्वथा नूतन अभिव्यंजना प्रणाली अपनायी थी । अलंकार, बिंब, प्रतीक, छन्द आदि में नवीनता का उपस्थापन तो छायावाद की देन है । यथार्थ में हिन्दी की छायावादी काव्यधारा भावनात्मक व्यक्तिवाद,

---

1. साहित्यिक निबंध - डा.कृष्णलाल हंस - पृ: 311
2. Music is the purest form of arts and therefore the most direct expression of beauty. Therefore the true poets seek to express the universe in terms of music - Ravindra Nath Tagore - Sadhana - P: 141

निराशा, वेदना एवं अतृप्त प्रेम को लेकर प्रकृति के मानवीकरण के साथ सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति करती हुई प्रवाहित हुई है । छायावादी गीत भाव प्रवणता, आत्मानुभूति, संक्षिप्तता, एकरूपता और संगीतात्मकता लिये हैं । इस में सौन्दर्य को भावात्मक प्रतिष्ठा प्राप्त हुई । खडीबोली का खुरदरापन दूर करने में छायावाद का महत्वपूर्ण योग है । प्रसाद ने रसात्मकता, निराला ने ओज, पंत ने कोमलता और महादेवी ने माधुर्य का दान भाषा को दिया ।

हिन्दी को छायावाद की देन

पूर्ववर्ती कविता केवल वर्णनात्मक थी, पर नवीनता का विकास पहले पहल छायावादी कविता में लक्षित हुआ । छायावादी कवियों ने सौन्दर्य को मानवीकृत करके चित्रित किया । वस्तु को भाव का रूप दिया । अमूर्त सौन्दर्य को उन्होंने ग्रहण किया । छायावाद ने आधुनिक हिन्दी काव्य और भाषा को एक नवीन शक्ति, सजीवता और सौन्दर्य प्रदान किया । शब्दों को अर्थ और भाव बोध और संवेदना के नवीन संस्कारों के अनुरूप ढालने की एकाग्र कोशिश छायावादी कवियों को सारे आधुनिक काव्य के इतिहास में महत्वपूर्ण बनाती है । यही नया संस्कार उस काव्य भाषा को सूक्ष्मता देती है । भाव और शिल्प दोनों ही क्षेत्रों में छायावाद ने नूतनता प्रदान की है । जिस तरह पतझड के उपरांत नूतन किसलय भव्य प्रतीत होता है उसी प्रकार छायावाद की भाव प्रवणता भी अत्यन्त मनोहर लगती है ।

पंत ने गंभीरतापूर्वक छायावादी रचनाओं का अध्ययन मनन करने के बाद अपना मत प्रकट करके लिखा है - "छायावादी कविता शब्दों से नए अर्थ, अर्थों से नयी चेतना, चेतना से नया कलाबोध और कला बोध से नयी

सौन्दर्य भंगिमा हृदय को स्पर्श कर नए रस का संचार करने लगो ।[1] गुण और संख्या दोनों हो दृष्टियों से छायावादो रचनायें सुसंपन्न रहो हैं ।

छायावाद खडीबोली कविता का एक आन्दोलन ही नहीं, नए भारत के नव जागरण को सांस्कृतिक चेतना को प्रामाणिक अभिव्यक्ति भो है । इसमें काव्य और जोवन दोनों क्षेत्रों में सामन्तवाद को चिरविजडित जडता के प्रति स्वाधीन चेतना का आह्वान किया गया ।[2]

छायावादो कवियों ने विषय एवं भावों के अनुकूल छंद चयन करने में नवोनता, मौलिकता एवं विविधता को महत्व दिया । छंदों के क्षेत्र में उनको देन अपूर्व है ।[3] उनके सभी छंद संगोतात्मक हैं । नवोन सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्ति केलिए छायावाद स्वाभाविक रूप से भाषा को नवोन शक्तियों के उद्घाटन को ओर अग्रसर हुआ । छायावादो काव्य आधुनिक हिन्दो साहित्य की महतो उपलब्धि है । उपर्युक्त गुणों से युक्त होते हुए भी छायावादो काव्य में कमज़ोरियाँ भो हैं । मुख्यत: यह जन-जीवन से दूर है ।

कमज़ोरियाँ

जनहृदय से संपर्क स्थापित कर अपनो भावनाओं का पूर्ण साधारणोकरण करने में छायावादो कवि असमर्थ सिद्ध हुए । जोवन संघर्ष को यथार्थता से पलायन

---

1. छायावाद का पुनर्मूल्यांकन - पृ: 101
2. डा.रामस्वामी ठाकुर - छायावादो कविता में शृंगारत्व- ज्योत्स्ना मई 1971 - पृ: 13
3. मत्त-भृंग-सम संग संग तम - सूर्यकान्त त्रिपाठी -
   तारा मुख - अम्बुज-मधु-लुब्ध, निराला परिमल - पृ: 52

करनेवाले इन कवियों को अनुभूति में सच्चाई न मिलती । अभिव्यक्ति की अस्पष्टता के कारण इस कविता में साधारणीकरणकेलिए आवश्यक प्रेषणीयता का अभाव है । जो इस वाद के ह्रास का कारण बना । छायावादी कवि का मन कल्पनालोक में रमता रहा और काल्पनिक आनंद को वह यथार्थ और शाश्वत आनंद मान बैठा ।

सामाजिक जीवन की विसंगतियों का चित्रण भी व्यक्तिवादी ढंग से किया गया । कविता की सामाजिक उपयोगिता सीमित रही । कवियों की घोर वैयक्तिकता, प्रकृति में चेतना का आरोप ; प्रेम की आध्यात्मिक अनुभूति की अभिव्यक्ति ने छायावादी काव्य को बोधगम्य होने से वंचित किया है ।

छायावाद का ह्रास

छायावाद का ह्रास इसलिए हुआ कि उसमें परिस्थिति को सम्हालने और उसकी आकांक्षाओं की पूर्ति करने की क्षमता मौजूद न थी । देश की राजनीतिक स्थिति जल्दी से बदलती जा रही थी । अब समाज को प्रकृति-सौन्दर्य की तरलता नहीं, मानव-जीवन सौन्दर्य की गरलता आवश्यक थी । छायावाद समाज केलिए आवश्यक शक्ति, शौर्य, प्रतिकार आदि देने में असफल हो गया जिससे उस का पतन अनिवार्य हो गया ।

छायावाद की भाषा सांकेतिक होने के कारण उसमें अस्पष्टता है । कल्पना की अधिकता से छायावादी कविता जीवन से हटी हुई दिखाई देती है । वह मानव को जीवन-संघर्षों से पलायन करने की प्रेरणा देता है ।

प्रतीक-योजना की अतिशय बौद्धिकता के कारण इसकी प्रेषणीय-शक्ति में बाधा पहुँचती है । छायावादी कवि कभी कभी जीवन की वास्तविकता से भागकर कल्पित एकांत में शरण लेना चाहता था । जीवन के प्रति छायावाद का दृष्टिकोण क्रियात्मक न होकर भावात्मक था जो युग की तेजी से बदलती हुई संघर्षपूर्ण परिस्थितियों को स्वीकार नहीं कर सका । इसलिए वह निष्क्रिय रहा । यही उसकी सबसे बडी कमज़ोरी है ।

प्रमुख कवि

छायावादी प्रमुख कवि चार हैं । जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला और महादेवी वर्मा छायावाद के प्रमुख कवि हैं । जयशंकर प्रसाद को छायावाद के प्रवर्तक का श्रेय प्राप्त है ।

जयशंकर प्रसाद

प्रसाद ने काव्य के क्षेत्र में तथा भाषा के क्षेत्र में अनेक प्रयोग किए । प्रसाद के बाल्यकालीन पारिवारिक वातावरण सर्जन केलिए प्रेरक था । वे बहुमुखी प्रतिभा के कलाकार थे । वे संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, फारसी आदि के विद्वान थे । उनकी प्रारंभिक रचनायें ब्रजभाषा में लिखी गयी थीं । बाद में उन्होंने खडीबोली में लिखना शुरू किया । "कानन कुसुम" प्रसाद की खडीबोली की कविताओं का पहला संग्रह है । इस संग्रह में विनय, प्रकृति और प्रेम विषयक कवितायें हैं ।

"प्रेम-पथिक" आदर्श प्रेम की व्यंजना करनेवाली रचना है । इसमें कवि का प्रेम पहले प्रकृति पर केन्द्रित होकर धीरे धीरे मानव पर केन्द्रित हुआ है ।

"झरना" में कवि का ध्यान प्रेम, विरह, सुख और दु:ख की ओर अधिक मुडा है ।

"आँसू" प्रसाद की एक उत्कृष्ट और मशहूर रचना है । यह एक विरह काव्य है । लघु होते हुए भी यह छायावाद की एक गौरवमयी रचना है । "आँसू" का मूल आधार लौकिक प्रेम है । इसमें विरह-व्यथित मानव-हृदय का करुण क्रन्दन बडे ही हृदयस्पर्शी शब्दों में व्यक्त हुआ है ।[1] कवि की वैयक्तिकता स्वच्छन्द रूप से प्रकट हुई है ।

बाँधा था विधु को किसने
इन काली जंजीरों से
मणिवाले फणियों का मुख
क्यों भरा हुआ हीरों से ?[2]

कवि की वैयक्तिक वेदना सार्वभौमिक वेदना का रूप धारण करती है । अब वह सृष्टि के प्रत्येक दु:खी व्यक्ति से सहानुभूति का अनुभव करता है ।

"लहर" में प्रेम, यौवन, सौन्दर्य और प्रकृति विषयक कविताओं के अतिरिक्त राष्ट्रीयता की भावना को उद्बुद्ध करनेवाली कवितायें हैं । इस संग्रह में कवि का मन प्रौढता की ओर बढा है ।

"कामायनी" छायावाद की सर्वश्रेष्ठ रचना है । इसमें मानव के भावात्मक विकास का चित्रण हुआ है । "कामायनी" के सर्गों का नामकरण मनोभावों

---

1. रो-रोकर सिसक-सिसक कर,
   कहता मैं करुण - कहानी
   तुम सुमन नोचते सुनते,
   करते जानी अनजानी ।प्रसाद - आँसू - पृ: 15।
2. जयशंकर प्रसाद - आँसू - पृ: 2।

के आधार पर किया गया है । श्रद्धा, मनु और इडा पात्र भी हैं और प्रतीक भी । मनु आत्मकेन्द्रित व्यक्ति का प्रतीक है । इडा बुद्धि तत्व का और श्रद्धा हृदय तत्व का प्रतीक । "कामायनी" में नव-जागरण का सुलझा हुआ जीवन-दर्शन प्रस्तुत हुआ है ।

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का व्यक्तित्व सबसे जटिल और वैरुद्ध्य पूर्ण है । उत्साह, स्नेह, क्रोध, क्षोभ, विद्रोह आदि सभी उनके पास से एक झटके की तरह ज़ोर से बाहर निकलते हैं । हिन्दी के प्रांगण में महाकवि निराला ने जब प्रवेश किया तब तक द्विवेदीयुगीन प्रवृत्तियों से विद्रोह और नव्यान्दोलन का सूत्रपात प्रच्छन्न रूप से हो चुका था । छायावादी काव्य में छंद-बंध से कविता को मुक्ति का उनका सफल प्रयास नि:संदेह ही कविता को उनकी बहुत बडी देन है । छायावादी काव्य को संगीतात्मकता प्रदान करने और वैयक्तिक अनुभूतियों के साथ ही साथ सांस्कृतिक मूल्य की स्थापना करने की दिशा में उनके प्रयत्न श्लाघनीय हैं ।

निराला विचार से क्रान्तदर्शी और आचरण के क्रान्तिकारी हैं । वे उस झंझा के समान हैं जो हल्की वस्तुओं के साथ भारी वस्तुओं को भी उडा ले जाती है । उनकी क्रान्तिकारी भावधारा का श्रोत उनकी गंभीर मानवीय करुणा है । वे युग-चेतना, संघर्ष-प्रियता, पौरुष और ओज के कवि हैं । उनका प्रथम काव्य संग्रह "परिमल" है । "विधवा" इस संग्रह की लोक-विश्रुत कविता हैं जिसमें दलित भारत की विधवा का हृदयविदारक चित्र प्रस्तुत किया गया है ।

"गीतिका" उनका दूसरा काव्य-संग्रह है । इसमें निराला, कवि, गायक, चिन्तक, चित्रकार और स्वच्छंद मनोवृत्ति के व्यक्ति के रूप में प्रकट हुए हैं । कवि ने जीर्ण रूढियों का विरोध किया और समयानुकूल स्वस्थ परंपराओं का समर्थन। निराला के काव्य में अनुभूति की ऊष्मा के साथ ही साथ जीवन का आवेग भी है। "गीतिका" के गीत तम से फूटकर ज्योति की धारा बन जाते हैं ।

निराला की भाषा कसी हुई भाषा है । अपनी भाषा को भावानुकूल ढालने केलिए उन्होंने स्वच्छंदता को अपनाया । कम शब्दों में अधिक कहने की दक्षता उन्हें प्राप्त है ।

श्याम तन, भर बँधा यौवन
नत नयन प्रिय-कर्म-रत मन,
गुरु हथौडा हाथ,
करती बार बार प्रहार -[1]

अलंकार योजना में भी निराला की अपनी मौलिकता और नवीनता दिखाई पडती है । उनके अलंकार में स्वाभाविकता और भावोद्रेक की क्षमता पाई जाती है । मुक्तछन्द का प्रयोग निराला की कविता की सबसे प्रमुख विशेषता है ।

निराला की अनुभूति और रचना-शक्ति का विकास उनके निजी जीवन और सामूहिक प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप हुआ है । "अनामिका" में कई प्रकार

---

1. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला - अनामिका - ।वह तोडती पत्थर।
पृ: 79

के गीत हैं । छोटे गीत, बडी रचनायें, अनूदित रचनायें और शोक गीत । बडी रचनाओं में "राम की शक्ति पूजा" काफी प्रसिद्ध है । "सरोज स्मृति" में कवि ने एक कवि के अर्थहीनता ग्रस्त पारिवारिक जीवन का विषम चित्र, जर्जर सामाजिक परंपरायें, मिथ्या भाग्यवाद, ज्योतिषाचार्यों के भाग्यलेख आदि की तरफ संकेत किया है । यह कवि की प्रिय पुत्री के शोक में मार्मिक रचना है । यहाँ उन्होंने अपना विद्रोह इस प्रकार प्रकट किया है । -

खंडित करने को भाग्य अंक ।
देखा भविष्य के प्रति अशंक ।[1]

तुलसीदास कवि की अन्तर्मुखी यात्रा का काव्य है । "कुक्कुरमुत्ता", "अर्चना", "आरा धना" आदि रचनाओं में छायावादी संस्कार हैं । इनके गीतों में चेतना की सहज अभिव्यक्ति हुई है । इस प्रकार निराला ने साहित्यिक, सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में विद्रोह प्रकट किया है । उन्होंने अंधकार में सदा प्रकाश ढूँढने का प्रयत्न किया है ।

<u>सुमित्रानंदन पंत</u>

सुमित्रानंदन पंत स्वभाव से कोमल, मृदुल और कल्पनाशील थे । उनका वस्तु-जगत से परिचय प्रकृति के माध्यम से हुआ । प्रकृति के प्रति भोली और निस्संग दृष्टि पन्त के काव्य को अन्य कवियों के काव्य से भिन्न कर देती है । प्रकृति के चित्रकार के रूप में उनको काफी ख्याति मिली है ।

---

1. निराला - अनामिका - पृ: 127

"वीणा", "ग्रन्थि", "पल्लव", "गुंजन", "युगांत" आदि उनके छायावादी काव्य हैं । वे महाकवि रवीन्द्र और अंग्रेज़ी रोमांटिक कवियों की रचनाओं से प्रभावित थे ।

अभिव्यक्ति की वक्रता और नवीन अलंकारों के प्रयोग ने ग्रन्थि को महत्वपूर्ण बना दिया ।[1] यहाँ कवि ने एक सात्विक कम्पन को मूर्त रूप दिया है । "ग्रन्थि" का कवि असफल प्रेम की वेदना को ही सर्वस्व मानता है । इस मधुर पीडा में उसे विलक्षण अनिर्वचनीय आनंद भी उपलब्ध होता है । यह रचना स्वच्छंद प्रेम की उन्मुक्त अभिव्यक्ति है ।

स्वप्न के सस्मित अधर पर, नींद में
एक बार किसी अपरिचित साँस का
अर्ध चुंबन छोड, मैं झट चौंक कर
जग पडी हूँ अनिल-पीडित लहर सी ।[2]

पंतजी की कल्पना-शक्ति अजेय, उसका नवोन्मेष अप्रतिम है । कल्पना ही उनकी कविता की विशेषता है, उसके आकर्षण का रहस्य है । प्रेम और सौन्दर्य की समक्ष मानसिक विवृति में पन्त की कल्पना समर्थ हुई है । पंत के सरस सार्थक शब्द, सुगेय छन्द और समधुर बिंब खडीबोली केलिये अपूर्व देन हैं ।

पंत केलिए प्रकृति सदा से ही काव्य की प्रेरणा-शक्ति रही है । "पल्लव" की भूमिका" में उन्होंने कहा है - "जब मैं छोटा-सा चंचल भावुक

---

1. अनिल-कल्पित, कमल-कोमल गात को
अंक भरकर रसिक । किसकी चाह की
बाँह तृप्त हुई ? तुहिन-जल से हसित
किसलयों को चूम किसका मन बुझा ? -सुमित्रानंदन पंत - ग्रंथि - पृ: 28

2. वही पृ: 25

किशोर था, प्रकृति मेरे हृदय में मोठे स्वप्नों से भरी हुई चुप्पी अंकित कर चुकी थी, जो पीछे मेरे भीतर अस्फुट तुतले शब्दों में | बज उठी थी, मेरे मन में बर्फ की ऊँची चमकीली चोटियाँ रहस्य भरे किशोरों की तरह उठने लगी थीं, जिनपर खडा हुआ नीला आकाश रेशमी चन्दोवे की तरह आँखों के सामने फहराया करता था और सर्वोपरि हिमालय का आकाशचुम्बी सौन्दर्य मेरे हृदय पर एक महान् संदेश की तरह एक व्यापक विराट आनन्द, सौन्दर्य तथा तपः भूत पवित्रता की तरह प्रतिष्ठित हो चुका था ।[1] उनकी कविता की मुख्य आधार-भूमि प्रकृति ही है । प्रकृति के प्रति कवि का यह आकर्षण निरन्तर बढता रहा । उनकी उत्तरकालीन रचनायें उसके प्रमाण हैं ।

"पल्लव" की अधिकांश रचनायें प्राकृतिक-सौन्दर्य पर ही रची गई हैं । यहाँ प्रकृति का शालीन वैभव हम पा सकते हैं । सौन्दर्य की संयमित अभिव्यक्ति में पन्त प्रसाद से आगे निकल जाते हैं । "पल्लव" में वियोग-पक्ष प्रमुख होने के कारण करुण निराशा की एक अश्रुपूर्ण झलक ही मूर्तिवती होती है ।

"गुंजन" में कवि ने अंतप्रकाश पाया है । व्यक्तिगत सुख की अपेक्षा विश्व-मानव कल्याण की कामना यहाँ अधिक है ।[2] "ग्राम्या" में पन्तजी जन-जीवन के और निकट आए हैं । कवि की नागरिक रुचि ग्राम जीवन के भोले और सरल यथार्थ को पकडती है । प्रकृति के प्रति उनकी अनुराग-भावना यहाँ जीवित है । ग्राम प्रकृति के उन्होंने कई सुन्दर चित्र दिये हैं जिनमें कहीं दूर-तक मखमल-सी फैली कोमल हरियाली है, कहीं दूर से आयी हुई सरसों की तैलाक्त गंध है ।

---

1. सुमित्रानंदन पंत - पल्लव की भूमिका
2. विश्व-वेदना में तप प्रतिपल,
   जग-जीवन की ज्वाला में गल,
   बन-अकलुष, उज्ज्वल औ" कोमल, तप रे
   विधुर-विधुर मन ।पंत - गुंजन - पृः ।।।

"युगान्त", "युग वाणी" और "ग्राम्या" की रचनायें इसी नवीन बोध का द्योतक है । "युगवाणी" में प्रकृति का स्थान मानव से पीछे रह गया है ।

वे मुख्यत: सुन्दर के कवि हैं । कवि ने युग और अपने प्रति किये गये विभिन्न प्रयोगों को "लोकायतन" में समेटा है । उनकी काव्य प्रतिभा की सर्वश्रेष्ठ परिणति यहाँ दृष्टिगत होती है । इस वृहताकार काव्य ग्रन्थ में महाकाव्य के उत्कृष्ट संबंधी सभी धारणाओं को समेट कर रखा है । "स्वर्ण किरण" और "स्वर्ण धूलि" में आध्यात्मिकता कवि का प्रधान स्वर बन गई है ।

पंत की प्रारंभिक कृतियाँ प्रकृति के प्रति उनका ऐन्द्रिय आकर्षण को व्यक्त करती हैं । यह आकर्षण धीरे धीरे विकसित होकर जिज्ञासा में परिवर्तित हुआ है । और उत्तरवर्ती रचनाओं में उसे नैतिक तथा आध्यात्मिक रूप मिला है । "उत्तरा", "रजत शिखर" "वाणी", "पतझर आदि उनके अन्य प्रमुख काव्यसंग्रह हैं ।

महादेवी वर्मा

छायावादी काव्य के चार स्तंभों में अन्यतम हैं महादेवी वर्मा । उनका समूचा काव्य वेदनामय है । यह वेदना लौकिक वेदना से भिन्न आध्यात्मिक जगत् की है जो उसी केलिए सहज संवेद्य हो सकती है जिसने उस अनुभूति क्षेत्र में प्रवेश किया है । उनकी रचनाओं में संगीत-कला, चित्र-कला और काव्य-कला का अपूर्व समन्वय वर्तमान है । भारतीय नारी के असन्तोष, निराशा और आकांक्षा के स्वर को छायावादी काव्य से जोडने का श्रेय महादेवी को प्राप्त है ।

महादेवी काव्य के मूल में करुणा को ही प्रधानता देती हैं । सृष्टि के आरंभ से लेकर अब तक की वैज्ञानिक उपलब्धियों के बीच भी करुणा का यह अखंड स्रोत अक्षय रूप में प्रवाहित होता रहा है । वेदना-प्रिय होने के कारण उनकी अनुभूति सुख-दुःख को अभिव्यक्त करते समय वैयक्तिकता से ओतप्रोत हो जाती है । पीडा उन्हें सर्वाधिक प्रिय है । पीडा ही उनकी बडी निधि है । इस पीडा में दृढता है, माधुर्य है, अपनत्व है, प्रेरणा है और आत्मीयता है ।

अपने जीवन की करुणा को उन्होंने गीतों में हार की तरह पिरोया है । उनकी वेदनानुभूति की गहराई प्रशान्त सागर की गहराई है । सागर के ऊपर तरंगें हैं, पर अतल में शान्ति का साम्राज्य है । उनका संपूर्ण जीवन पीडा का अश्रुतिक्त महाकाव्य है । उनके काव्य में स्वप्न-कथन, पत्र-प्रेषण, नाम-स्मरण आदि विरह की सभी अन्तर्दशाओं के वर्णन हुए हैं ।

प्रकृति महादेवी के काव्य को अलंकृत करने का कार्य अधिक करती है । वह उनकी पृष्ठ भूमि बनती है, स्वयं काव्य नहीं । उनके काव्य में तारक, ओस, बिजली, बादल आदि की बडी महिमा है । वास्तव में प्रकृति में उन्होंने अपनी ही आशा, निराशा, आकांक्षा उत्कंठा के चित्र आरोपित किए हैं ।

"नीहार" महादेवी वर्मा की प्रथम रचना है जो सरस तथा मर्मस्पर्शी गीतों का संग्रह है । इसमें कवयित्री के पीडा-मथित मानस के कोमलतम उद्गार की व्यंजना हुई है । यहाँ प्रकृति के उपकरणों में किसी अज्ञात अस्तित्व को देखने का प्रयास हुआ है ।

"नीहार" के गीतों में विरह के कारण अधिक छटपटाहट है । कृष्णोपासिका मीरां और साधिका महादेवी की तुलना समीचीन है । मीरां और महादेवी अपने अपने युग की अमर साधिका हैं । मीरा की वेदना प्राणगत है तो महादेवी की वेदना बुद्धिगत है । महादेवी घायल की वेदना को नहीं जान सकी हैं, क्योंकि वह घाव को चाहती है । वह प्यास चाहती है, पानी नहीं । इस काव्य-संग्रह में उनकी कुतूहल मिश्रित वेदना की स्वाभाविक अभिव्यक्ति हुई है ।[1]

"रश्मि" में जीवन-मृत्यु, सुख और दुःख पर भौतिक चिन्तन अभिव्यक्त हुआ है । अधिकांश गीत अद्वैतवादी विचारधारा और रहस्यवादी भावनाओं से प्रेरित हैं । अनेक गीत अज्ञात प्रियतम की रूप-स्मृति में उज्ज्वलित वियोग-वेदना से आपूरित हैं । "नीहार" और "रश्मि" में अधिकतया कवयित्री के मन की कोमल, स्निग्ध और उल्लासमयी भावनायें व्यक्त हुई हैं ।[2]

---

1. इस मीठी सी पीडा में
   डूबा जीवन का प्याला
   लिपटी सी उतराती है
   केवल आँसू की माला   (महादेवी वर्मा - नीहार - पृ: 8)
2. जब मुरली का मृदु पंचम स्वर,
   कर जाता मन पुलकित अस्थिर,
   कम्पित हो उठता सुख से भर,
   नव लतिका सा गात ।   (महादेवी वर्मा - रश्मि - पृ: 4)

"नीरजा" में वेदनापरक गीत ही अधिक हैं । प्रियतम ने जो वियोग, जो वेदना दी है उसने कवयित्री के हृदय में पर - दु:ख-कातरता का भाव भर दिया है । आत्मबलिदान की भावना को भी कुछ गीतों में अभिव्यक्ति मिली है । "नीरजा" में कवयित्री उस सामंजस्यपूर्ण भाव भूमि में पहुँच गयी हैं जहाँ दु:ख-सुख एकाकार हो जाते हैं और वेदना का मधुर रस ही उसकी समरसता का आधार बन जाता है ।

"सान्ध्य गीत" में सुख-दुख तथा विरह-मिलन में समन्वय दिखाने का प्रयास किया गया है । इस संग्रह में आत्मपरक गीतों की भरमार है । इसकी सामरस्य भावना और भी परिपक्व और निर्मल बनकर साधिका को प्रिय के इतना पास पहुँचा देती है कि वह अपने और प्रिय के बीच की दूरी को ही मिलन समझने लगती है ।[1]

"दीपशिखा" में साधिका की आत्मा की दीपशिखा अकम्पित और अचंचल होकर आराध्य की अखंड ज्योति में विलीन हो जाती है ।[2]

---

1. विरह का युग आज बीता,
   मिलन के लघु पल सरीखा,
   दु:ख-सुख में कौन तीखा,
   मैं न जानी औ न सीख । ॥महादेवी वर्मा - यामा - पृ: 227॥

2. मैं अश्रु-तरल, तेरे ही प्राणों की हल चल,
   पा तेरी साधों का सम्बल,
   मैं फूट पडी ले अक्षय स्वर वैभव ॥महादेवी वर्मा - दीपशिखा - पृ: 73॥

महादेवी की कविताओं में अभिव्यंजना पद्धति में लाक्षणिकता और व्यंजना का बाहुल्य है । उनकी कविताओं में भावनाओं की गंभीरता, अनुभूतियों की सूक्ष्मता, बिंबों की स्पष्टता और कल्पना की कमनीयता के परिणामस्वरूप गांभीर्य आया है । उनका काव्य गहराई का काव्य है । रूपात्मक बिंबों और प्रतीकों के सहारे उन्होंने जो मोहक चित्र उपस्थित किये हैं वे उनकी सूक्ष्म दृष्टि की शक्तिमत्ता के परिचायक हैं । उनके गीतों से लक्षणा पर आश्रित प्रयोगों के राशी-राशि उदाहरण अनायास ही प्रस्तुत किये जा सकते हैं ।[1] इन पंक्तियों में राग द्वारा किसी को खींच जाने की बात कही गयी है जिसमें मुख्यार्थ बाधित है । "खींचना" किसी प्राणवान् व्यक्ति का धर्म है, राग तो निर्जीव है । किन्तु कवयित्री का अभिप्राय है कि जिस प्रकार किसी के आकर्षण में पडा हुआ व्यक्ति उससे दूर नहीं जा पाता है उसी प्रकार राग के माधुर्य के वशग होनेवाला व्यक्ति अपने प्रेयान से दूर नहीं रह सकता ।

छायावाद : एक शैली विशेष

महादेवी ने अपनी सूक्ष्मतर रहस्यात्मक भावनाओं की अभिव्यक्ति केलिए प्रतीक-प्रयोग किया है । महादेवी के जीव व परमात्मा के अभिन्न संबंध को व्यक्त करनेवाले प्रतीक प्राय: उनके संकल्प के समान ही दुरूह है ।

महादेवी के शब्द-चयन में सहजता है, माधुर्य है, लालित्य भी है ।

अलि-गुंजित पद्मों की किंकिणि
भर पद-गति में अलस तरंगिणि ।[2]

---

1. कौन वह है सम्मोहन राग,
खींच लाया तुमको सुकुमार ? ।महादेवी वर्मा - यामा - पृ: 63।
2. वही पृ: 134

इनके प्रेम के प्रमुख प्रतीकों से महादेवी का व्यक्तित्व पूर्णत: स्पष्ट हो जाता है ।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि आधुनिक हिन्दी-साहित्य में छायावाद का महत्वपूर्ण स्थान है । छायावाद में सामूहिकता के विरुद्ध स्वच्छंदता, स्थूल के प्रति सूक्ष्म, बौद्धिकता एवं यथार्थ के प्रति भावुकता तथा कल्पना अभिधा प्रधान वर्णनात्मक अभिव्यंजना शैली के प्रति लाक्षणिक प्रतीकात्मक शैली की व्यापक प्रतिक्रिया प्रस्फुटित हुई है । छायावाद के चार महाकवियों के अतिरिक्त राम कुमार वर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, केदारनाथ सिंह मिश्र, नवीन आदि कवियों ने भी अपनी रचनाओं से छायावाद की वृद्धि की है । इनमें रामकुमार वर्मा विशेष उल्लेख योग्य हैं । कई कवि ऐसे भी हुए जिन्होंने छायावाद की प्रवृत्तियों को अपनी रचनाओं में सुरक्षित रखते हुए भी अपना पथ अलग रखा । इन्हें उत्तर छायावादी कवि कहा जाता है ।

उत्तर छायावादी कवियों में बच्चन, अंचल, नरेन्द्र शर्मा, भगवती चरण वर्मा और आरसी प्रसाद सिंह आदि कवि के नाम प्रसिद्ध हैं । समष्टि एवं सूक्ष्म सौन्दर्य या वस्तु एवं भाव जगत् की गंभीर अनुभूति और अभिव्यक्ति को सीधे और सरल शब्दों में उतार लाने का काम इन उत्तर छायावादियों ने किया है । वे छायावादी कवियों से इस बात में भिन्न हैं कि वे मन की उमंग, लालसा और उद्दाम श्रृंगार भावनाओं को निरलंकृत रूप में व्यक्त करते हैं । वे अनुभूति को व्यक्त करने केलिए चिन्तन नहीं करते, सीधे कहने का साहस बटोरते हैं ।

रोमांटिक आन्दोलन में बच्चन का स्थान

छायावाद की परिष्कृत परिमार्जित भाषा की लाक्षणिकता, प्रतीक-विधान और कोमल पद-विन्यास की मोहकता ने दो वर्षों तक के हिन्दी कवियों को आकर्षित किया । किन्तु इन कवियों का कथ्य भावनात्मक और वायवी अधिक था, जीवन से उद्भूत कम । हिन्दी जगत् में बच्चन के काव्य का प्रवेश एक नवीन बाँसुरी की स्वरधारा के समान हुआ था । उन्होंने अपनी गहरी अनुभूति और नवीन शिल्प-विधान के ज़रिए हिन्दी में एक नये युग का ही उद्घाटन किया है ।

बच्चन ने जिस युग से लिखना शुरू किया वह छायावाद का था । छायावाद में लाक्षणिकता, संश्लिष्टता तथा भावों की गूढ व्यंजना और भाषागत दुरूहता आदि की प्रधानता थी । निराला, प्रसाद, पंत और महादेवी जैसे छायावाद के महान व्यक्तियों के युग में उन्होंने उनके प्रभाव से मुक्त होकर सर्वथा नयी राह बनाने की कोशिश की । यह कार्य मौलिक कृतिकार का सहज प्रमाण है । उनकी प्रारंभिक काव्य रचनायें यौवन की उमंग और जीवोल्लास से शोभित हैं । "मधुशाला","मधुबाला" और "मधुकलश" के गीत उन्हें मस्ती के गायक बनाते हैं । ये रचनायें प्रबल जीवनाकांक्षा के उन्माद-आग्रह से भरी हुई हैं । "निश्चित रूप से छायावादोत्तर हिन्दी गीत-विधा को बच्चन ने नयी चेतना, दिशा, नया शिल्प तथा नवीन सौष्ठव दिया है ।"[1]

---

1. विनोद गोदरे - छायावादोत्तर हिन्दी प्रगीत - पृ: 118

जब बच्चन काव्य-क्षेत्र में आए उस समय छायावाद बिदा ले रहा था और प्रगतिवाद के चरण तेज़ी से बढ रहे थे । इसी के फलस्वरूप उनके काव्य में दोनों काव्य-प्रवृत्तियों के लक्षणों का आना स्वाभाविक हैं । छायावाद के सरस, सुन्दर पद-विन्यास, और संगीत के माधुर्य तथा प्रगतिवाद से यथार्थ जीवन की तिक्त-मधुर अनुभूतियों का संकलन करके उन्होंने अपनी कविता का निर्माण किया है । उनके गीतों के प्राण तत्व में संगीत, वेदना और पीडा के असंख्य तार अनुस्युत हैं । उनके गीतों में विरह का अंश संयोग की अपेक्षा कहीं अधिक है । प्रेमी हृदय के अनेक मनोवैज्ञानिक पक्षों का उद्घाटन स्वाभाविक और सहज रूपों से उनके काव्य में हुआ है । कवि के प्रेम-चित्रण से स्पष्ट होता है कि पुनर्जीवन और जिजीविषा की अटल शक्ति द्वन्द्व उनमें विद्यमान है । उनके काव्य में मात्र प्रकृति का उपयोग श्रृंगार का चित्रण करने का माध्यम बना है । बच्चन ने प्रकृति का चित्रण करने केलिए श्रृंगार के मधुर क्षेत्र से उपमानों का चयन किया है ।

बच्चन जी में जीवन के यथार्थ और दार्शनिक तत्व को कविता का रूप देने की अद्भुत प्रतिभा है । "छायावादी कवि ने लाक्षणिक वक्रता से भाषा को दुरूह बना दिया था । मगर बच्चन ने उसे इस वक्र-भंगिमा से बचाया । सहज-सीधी भाषा में, सहज-सीधी शैली में अपनी बात कहने के कारण बच्चन बहुत लोकप्रिय हुए ।[1] उनके गीतों में भावावेश के तीव्र प्रवाह से संगीत एवं लय का पर्याप्त निर्वाह होने के कारण गेयता आयी है । लोक-गीतों की रचना करते हुए बच्चन ने भावानुरूप लोक-गीतों की लयों को अपने गीतों में ढाला है । बच्चन अपनी पीढी के एकमात्र कवि हैं जिनकी दृष्टि नयी पीढियों की यात्रा की ओर बराबर लगी हुई है और जो उन्हें आशीर्वाद

---

1. आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी - हिन्दी साहित्य, उद्भव और विकास - पृ: 479

देने के स्थान पर उनका सहयात्री बनना अधिक पसंद करते हैं ।[1] "प्रत्येक कवि अपने पूर्ववर्ती रचनाकारों से उत्तराधिकार में बहुत कुछ लेता है, साथ ही वह यदि सशक्त है तो काव्य को प्रचलित धारा को मनोनुकूल दिशा में मोडने का प्रयत्न कर स्वयं को उस स्थान पर स्थित कर देता है जिसे देख कर साहित्य का इतिहासकार युग-विशेष की प्रवृत्तियों और प्रयोगों से अवगत हो जाता है । बच्चन छायावादोत्तर हिन्दी कविता के ऐसे ही मोड हैं"।[2]

हालावाद

मधुकाव्य सृजन का

"1930 के सत्याग्रह आन्दोलन में मैंने छोड दी और उसके बाद मेरे जीवन में जो भीषण तूफान आया और मेरे विचारों, भावनाओं में जो प्रबल उथल पुथल मची उसने मुझे ठीक उसी मनस्थिति में रख दिया जिसमें रूबाइयात उमर खैयाम प्राणों की प्रतिध्वनि हो गयी । एक-एक रूबाई ऐसी मालूम होने लगी जैसे मेरेलिए ही लिखी गयी हो ।"[3] यह समय बच्चन के व्यक्ति, राष्ट्रीय चेतना सभी केलिए दुःखपूर्ण ही था । एक ओर बच्चन ने जिस सत्याग्रह आन्दोलन केलिए विश्वविद्यालय को शिक्षा से मुँह मोड लिया था वह आन्दोलन दबाया जा चुका था । अब न शिक्षा

---

1. डॉ.रामदरश मिश्र - हिन्दी कविता - तीन दशक - पृः 53-54.
2. बच्चन - एक पहेली - चन्द्रदेव सिंह - पृः 53
3. खैयाम की मधुशाला - तीसरा संस्करण भूमिका - पृः 11

का क्रम ही जुटने की उम्मीद थी और वे ये आर्थिक दृष्टि से ही संतुष्ट थे । ऐसी ही अवधि में खैयाम ने बच्चन को जैसे एक ऐसी दिशा दी जिसकी ओर बढनेवालों के कदम भले ही लडखडा जायाँ, पर उन्हें न तो अपने घावों का ध्यान होता है, न विश्व की किसी उपेक्षा का, न नियति के कटु विधान का"[1] ।

हालावाद का उदय

हिन्दी में जिस समय हालावाद का उदय हुआ उस समय गाँधीजी देश को पराधीनता से मुक्त कराने केलिए असहयोग आन्दोलन चला रहे थे और उसके साथ साथ विदेशी सरकार का क्रूर दमन-चक्र चल रहा था । कवि इस संघर्षमय माहौल से पलायन करने का धीरे धीरे प्रयत्न करने लगा । जीवन में जब मानव परिस्थितियों से संघर्ष करने से स्वयं को असमर्थ, अनुभव करता है उस क्षण वह संसार में कोई ऐसा शान्तिमय एकान्त-तुनकर स्थल खोजने का प्रयास करता है जहाँ वह कुछ क्षणों केलिए वास्तविकता को भूल कर आनंदमय एवं उल्लासमय समय व्यतीत कर सके । वे मदिरा के मद में मदमत्त हैं । अपने कारुणिक वातावरण को अत्यन्त सरलता से विस्मृत कर सकते हैं ।[2]

"अपनी एक विशेष अवसाद और निराशा की स्थिति में फिट्ज्जेराल्ड ने 19 वी शती के मध्य में उमर खैयाम की पचहत्तर रूबाइयों का अंग्रेज़ी में

---

1. चन्द्र देवसिंह - बच्चन एक पहेली - पृ: 55-56
2. व्यर्थ कर दिन-रात निंदा
   विश्व ने जिह्वा थकाई,
   था बहाना, एक मन
   बहलाव का मधुपान मेरा (बच्चन - मधुकलश - पृ: 47)

अनुवाद किया, जो पहले पहल सन् 1859 ई में रूबाइयात उमर खैयाम के नाम से प्रकाशित हुई । ये विशिष्ट रूबाइयात खिन्न मन की निराशाजनक अभिव्यक्तियाँ हैं । इसमें एक प्रकार के पलायनवाद का स्वर स्पष्ट सुनाई पडता है ।[1] हिन्दी में यह दर्शन प्रधानता फिट्ज्जेराल्ड के अनुवाद के जरिए ही आया । रूबाइयात मनुष्य की जीवन के प्रति आसक्ति और जीवन की मनुष्य के प्रति उपेक्षा का गीत है । हिन्दी में मैथिली शरण गुप्त, केशवप्रसाद मिश्र, बच्चन तथा सुमित्रानंदन पंत द्वारा प्रस्तुत खैयाम की रूबाइयात के अनुवाद विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

उमर खैयाम की रूबाइयों से प्रेरित होकर हरिवंशराय बच्चन ने हिन्दी में मधुशाला काव्य की रचना करके, रूबाई लेखन की परंपरा की शुरूआत की । रूबाई काव्य का वह विधान है जिसके द्वारा उमर खैयाम जीवन एवं जगत के संबंध में अपना दार्शनिक दृष्टिकोण व्यंजित करता है । रूबाई में एक ही भाव, विचार की व्यंजना और सुगठित अभिव्यक्ति की शक्ति होती है । उसमें मानव के हृदय और मस्तिष्क को प्रतिध्वनित करने की निस्सीम उद्बोधिनी शक्ति है । हालावादी परंपरा के काव्य में मस्ती के जीवन को अपनाने वाले दर्शन का संदेश मिलता है ।

हिन्दी में हालावाद

सूफी कवियों ने शराब के नशे की तुलना प्रभु के प्रेम की तन्मयता से की । फारसी साहित्य के अनुकरण एवं प्रभाव से हिन्दी में जिस मादक

---

1. हिन्दी साहित्य कोश - पृ: 964

कविता का प्रणयन किया गया उसे हालावाद के नाम से पुकारा गया । वास्तव में हालावाद निराशावाद की कोख से उत्पन्न हुआ था । हालावादी साहित्य की उत्पत्ति कुछ तरुण कवियों की पूर्ण वैयक्तिकता से हुई थी । पद्मकान्त मालवीय, हरिवंशराय बच्चन, हृदय नारायण, पण्डित हृदयेश, बालकृष्ण शर्मा नवीन आदि हालावाद के प्रमुख कवि हैं ।

हाला का अर्थ है मदिरा । मदिरा को जीवन सार माननेवाले रूबाइयत के रचयिता फारसी शायर उमर खैयाम के पीछे ही यह वाद चलाया गया है । भारतीय काव्यधारा में खैयाम की मधुशाला का स्वागत खूब हुआ है । यही भाव एवं संदेश ग्रहण किया जाता है कि अत्यंत दुःखी पराजयवादी जीवन-दशा में मदिरा का सहारा निश्चित रूप से अनमोल शांति देता है । नश्वर संसार के लंबे चौड़े दार्शनिक सिद्धांतों के जगत में उन सबको ओर ध्यान न देकर प्रिय व्यक्ति के साथ सुराधारा में लीन होना सबसे शीतल शांतिदायक उपाय है ।[1]

खैयाम और बच्चन

बच्चन के काव्य में खैयाम जैसा जीवन के प्रति संसक्ति या आसक्ति का स्वर भी मुखरित हुआ है । पर खैयाम की संसक्ति या आसक्ति में कुंठा, पिपासा, वासना, खीज और काल के प्रति भय, शंका, निराशा और वीतराग की ध्वनि व्यापक है । यह बच्चन के मधुकाव्य में भी है, पर उतना व्यापक नहीं है । उनके मधु काव्य सृजन का उत्स खैयाम-काव्य का

---

1. डॉ. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर - आधुनिक हिन्दी काव्य तथा मलयालम काव्य - पृ: 45

आकर्षण है । उनके मधुकाव्य में खैयाम के कुछ तत्वों ~~तत्वों~~ का समाहार ज़रूर हुआ है । खैयाम के काव्य में जग-जीवन के संघर्ष के प्रति सूक्ष्मत: थकान और पलायन व्यक्त होता है । पर बच्चन के काव्य में ऐसा स्वर प्रधान नहीं हैं । खैयाम के काव्य में जिस प्रकार हाला, प्याला, साकीबाला और मधुशाला जीवन के प्रतीक बनकर उतरे हैं, बच्चन के काव्य में भी प्राय: इसी तरह उसकी अभिव्यंजना हुई है ।

खैयाम के काव्य में दार्शनिक आग्रह खूब है । बच्चन के काव्य में अल्हडता है । फिर भी खैयाम के काव्य की प्रेरणा बच्चन के मधुवादी काव्य-सृजन की मूल-शक्ति है । और मधु-काव्य ने उन्हें प्यार-जवानी, जीवन के जादू को मानने और गाने का सौभाग्यशाली अवसर प्रदान किया । बच्चन और खैयाम के व्यक्तित्वों की तुलना करने पर यह ज्ञात होता है कि अपनी परिस्थितियों के प्रति एक तीव्र असन्तोष की भावना बच्चन के मन में भी वर्तमान थी । अपनी कविता के द्वारा उन्होंने भी अपने समय की मान्यताओं की अनेक श्रृंखलाओं को तोडने का प्रयत्न किया । खैयाम लोगों के कोप-भाजन बनने के कारण अपनी कविता को लोकप्रिय नहीं देख सके, पर बच्चन का जीवन दर्शन और चिन्तन जनता के मनोनुकूल होने के कारण उनकी "मधुशाला" दिन-प्रति-दिन अधिकाधिक लोकप्रिय होती रही ।

तत्कालीन समाज में निराशा, उदासी, असफलता का साम्राज्य था, यह सत्य है, ऐसे ही समय में उमर खैयाम की मौज, मस्ती से युक्त रूबाइयों ने जनता को मादकता-सागर में निमग्न किया । उस मधु देश में जनता अपने जीवन के कोलाहल को भूलने का प्रयत्न करने लगा ।[1] हालावादी कवि

---

1. आधुनिक काव्य प्रवृत्तियाँ एक पुनर्मूल्यांकन - डॉ. गणेश खरे - पृ: 77

यातनाओं एवं संघर्ष से घबरा गये थे । वे संसार से पलायन करके हाला के मद में उन्मत्त होना चाहते थे और कल्पना की रंगीनी में आत्मविभोर होना चाहते थे । उनकी इसी पलायन-वृत्ति एवं निराशाजनक भावनाओं के कारण ही उनकी रचनाओं में स्वप्नों एवं कल्पनाओं की अतिरंजना परिलक्षित होती है ।

हालावाद सामाजिक तथा धार्मिक रूढियों के प्रति अखंल विद्रोह करता है । ये लोग संसार में रहते हुए भी स्वर्गीय सुख के प्रति लालायित हैं । जीवन के संघर्ष से पलायन का क्षणिक मादकता में मुक्ति ढूँढते हैं । वे काव्य-क्षेत्र में कल्पना की ऊँची उडान भरते हैं । इनके बडे आकर्षण सौन्दर्य, प्रेम और यौवन है । सीधी उन्माद भाषा में सरल अभिव्यक्ति हालावादी काव्य की एक विशेषता है ।

हालावाद का ह्रास

हिन्दी साहित्य की संपूर्ण धाराओं तथा संपूर्ण वादों में हालावाद की आयु सबसे कम रही । इसका कारण यही था कि इसकी उत्पत्ति कुछ तरुण कवियों की घोर वैयक्तिकता से हुई थी जिनका सामाजिक उत्तरदायित्व कुछ भी नहीं था ।[1] हालावादी जैसे अहंवादी दर्शन से शून्य नियतिवादी, निष्क्रियता के साहित्य पानी के बुलबुले की तरह क्षणिक जीवन बिताकर नष्ट हो जाते हैं ।

---

1. राजनाथ शर्मा - साहित्यिक निबंध - पृ: 372

"जीवन में खोना और पाना सब नियति के अधीन है । सांसारिक दृष्टि से छायावाद की वेदना और भी घनीभूत होकर निराशा में परिणत हो हालावाद का रूप धारण कर लेती है । और जिन ऐतिहासिक परिस्थितियों ने प्रगतिवाद स्थापित किया, उन्होंने ही हालावाद को भी सन् 1936 ई. में ही समाप्त कर दिया ।"[1]

बच्चन ने अपने मधुकाव्य से हिन्दी के असंख्य पाठ-श्रोताओं को अभिभूत किया । वे जीवन के सुन्दर पक्ष को समझने एवं रुचिकर रूप में उसे अभिव्यक्ति देने में सक्षम हैं । उनके मधुकाव्य में कवि का विद्रोही स्वर और जीवन की नयी मान्यता दिखाई पडती है । समाज के प्रति विद्रोह और भेद-भाव को भूल कर देश-प्रेम की मदिरा पीकर एक हो जाने का जो प्रयत्न बच्चन ने इन रूबाइयतों में किया है वह स्तुत्य है ।

मधुशाला - प्रेरणा स्रोत

सन् 1933 में बच्चन ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के एक कवि-सम्मेलन में "मधुशाला" का पाठ किया । इस कविता का श्रोताओं पर इतना प्रभाव पडा कि वे दंग रह गये ।[2] "मधुशाला" के द्वारा बच्चन को कवि-प्रतिभा प्रकाश में आयी । उन्होंने अपनी "मधुशाला" लिखने

---

1. हिन्दी साहित्य कोश - पृ: 964 - 965

2. "मस्ती के साथ झूम-झूमकर जब उसने अपने सुललित कंठ से "मधुशाला को सस्वर सुनाना शुरू किया तो सभी श्रोता झूम उठे । न नवयुवक विद्यार्थी ही नहीं बडे बडे भी झूम उठे । मधुशाला - पंद्रहवाँ संस्करण - "मधुशाला के सर्वप्रथम कवि-सम्मेलन के सभापति का संस्मरण - पृ: 8.

केलिए प्राप्त प्रेरणा का सारा श्रेय उमर खैयाम के प्याले को दिया है । "उमर खयाम ने रूप, रंग, रस की एक नई दुनिया ही मेरे आगे नहीं उपस्थित की, उसने भावना, विचार और कल्पना के सर्वथा नये आयाम मेरे लिये खोल दिये । उसने जगत, नियति और प्रकृति के सामने लाकर मुझे अकेला खडा कर दिया ।

कविता का पहला मोड़

"मधुशाला" विषाद, निराशा, कुंठा, यथार्थ और जीवन के काठिन्य की अभिव्यक्ति है । स्पष्टत: यह रचना सौन्दर्योपासक बच्चन के जीवन-प्रेम-रस से लबालब भरा मादक प्याला है । यह उनकी कविता का पहला आयाम है । इस रचना का उद्देश्य भौतिक जीवन को प्यारा बुझाना है । इसमें मधु को एक नई मस्तीयुक्त भाव-भूमि पर पाँव रखकर कवि ने अपने गीतों में भावना, कल्पना, प्रकृति-चित्रण तथा मानवीय सुख-दु:ख संवेदित रागात्मक अनुभूतियों को व्यक्त किया है ।

"मधुशाला" शराब पीकर नहीं लिखी गई थी । वह जिन्दगी का सबसे कडवा जहर पीकर लिखी गयी थी । बच्चन की संपूर्ण कविता जहर को अमृत बनाने की एक अटूट साधना है ।[1] "मधुशाला" पर रचयिता के व्यक्तित्व एवं कवित्व की स्पष्ट छाप लगी हुई है । "वास्तविकता से उठकर कल्पना को मदिरा से शक्ति संचित कर, मैं सपनों का संसार रचने लगा, मेरे जीवन में जो कुछ कुरूप था जैसे वह कविता के पारस को छूकर सुंदरता में मूर्तिमान हो उठा ।"[2]

---

1. नीरज - लोकप्रिय बच्चन - सं.दीनानाथ शरण - पृ: 95
2. बच्चन - नये पुराने झरोखे- पृ: 132

उत्तर छायावादी युग के गीति-तत्व को अवतारणा में बच्चन का सबसे अधिक योगदान है। "मधुशाला" की लोकप्रियता का आधार उसकी मस्ती और विद्रोह की ध्वनि है । उसकी विशिष्टता इस बात में है कि वह सभी अंदरी, बाहरी तत्वों को समेटते हुए एक विशिष्ट व्यक्तित्व का सृजन करने में सफल हुई है । "उसने टूटे हुए दिलों केलिए हसरतों, बीती यादों, स्वप्नों, उमंगों, आशाओं, अरमानों और विद्रोह की बडी भारी संपदा सुलभ की थी ।[1]

अपने "सोपान" की भूमिका में बच्चन लिखते हैं "कविता सचमुच पाठक और कवि के हृदय को जोडनेवाला साधन है या एक मानव हृदय को दूसरे मानव हृदय के साथ । जहाँ वह इससे कम या ज्यादा है, वहाँ अपनी सीमा से बाहर है और उतनी ही कम कविता है ।[2] "मधुशाला" बच्चन के उपर्युक्त कथन को सार्थक सिद्ध करती है । यौवन-आनंद जिसे बच्चन के कवि ने वाणी दी है वह मदिरा की मादकता लिए हुए है । लगता है जीवन का शाश्वत-सौन्दर्य केन्द्रीभूत होकर ध्वनित हो उठा है । "मधुशाला" में जीवन के अनेक रंग हैं, प्राणों की अनेक कहानियाँ हैं ।

"मधुशाला" के कवि के भीतर कहीं झुंझलाहट है, कहीं मरने की कामना है, कहीं मस्त जिन्दगी है, कहीं आँसू हैं, कहीं मुस्कान । इन्द्रधनुष के रंगों की भाँति जीवन की विभिन्न अनुभूतियाँ उनके काव्य में रक्षित हैं ।[3]

---

1. ओंकारनाथ श्रीवास्तव - हिन्दी साहित्य - परिवर्तन के सौ वर्ष - पृ: 387
2. बच्चन - सोपान की भूमिका - पृ: 8
3. लाल सुरा की धार लपट-सा, कह न इसे देना ज्वाला,
   फेनिल मदिरा है, मत इसको कह देना उर का छाला,
   दर्द नशा है, इस मदिरा का, विगत स्मृतियाँ साकी हैं ।
   पीडा में आनंद जिसे हो, आए मेरी मधुशाला ।

   - बच्चन - मधुशाला - पृ: 36

मधु से संबद्ध प्रतीकों का विनियोग करते हुए कवि ने "मधुशाला" में मानव-नियति की विवश यंत्रणा का निरूपण किया है । नैराश्य के वातावरण में भी उसकी प्रेम-व्यंजना एक वयस्क संसार रचती हुई गृहीता को करुण प्रभावों से बाँधती है । "मधुशाला" धर्म और ईश्वर को सार हीन तो कहती है, जीवन को अनित्य कहकर क्षण के मादक उपभोग का आमंत्रण भी देती है ।[1] बच्चन की मदिरा चैतन्य की ज्वाला है । उनका मधुकाव्य रंगों और ध्वनियों का काव्य है । "मधुशाला" ने उन्हें लोकप्रिय बनाया । कारण यह है कि उन्होंने उसमें आदर्श और वास्तविकता को अपने जादू के प्रतीकों के द्वारा एक दूसरे के अत्यंत सन्निकट ला दिया ।[2] मानव-जीवन के चरम लक्ष्य तक पहुँचने के भाव को व्यंजना "मधुशाला" की निम्नलिखित पंक्तियों में बडी सुन्दरता से की गई है -

मदिरालय जाने को घर से,
चलता है पीनेवाला ।
किस पथ से जाऊँ । असंमजस
में है वह भोला - भाला ।
अलग-अलग पथ बतलाते सब
पर मैं यह बतलाता हूँ
राह पकड तू एक चला चल
पा जाएगा मधुशाला ।[3]

बच्चन का नियतिवाद प्रयत्न एवं पुरुषार्थ के विरोध से प्रारंभ होकर गहन निराशा में डूबता प्रतीत होता है । वे लिखते हैं - " लिखा भाग्य में जैसा

---

1. डॉ.राजेन्द्र मिश्र - समकालीन कविता सार्थकता और समझ - पृ: 42
2. बाँकेविहारी भटनागर - बच्चन व्यक्ति और कवि - पृ: 31
3. बच्चन - मधुशाला - पृ: 32

बस, वैसा ही पाएगा हाला । लाख मटक तू हाय पाँव पर इससे कब कुछ होने का लिखी भाग्य में तेरे जो बस बड़ी मिलेगी मधुशाला ।[1]

बच्चन ने हालावाद में राष्ट्रीय एकता का स्वर निनादित किया । वह मधुशाला में पल्लवित एकता-भाव को सर्वत्र देखने के अभिलाषी थे ।[2] "मधुशाला" स्फुट गीतों का संकलन है । इसमें कुल 139 अष्टपदियाँ हैं । अष्टपदियों का रूप-विन्यास एक समान है और प्रत्येक बंध को अंतिम पंक्ति में मधुशाला शब्द की पुनरुक्ति होती है जिससे रचना में मादकता और सरसता का संचार होता है ।

इसमें बच्चन ने मदिरालय, मधुबाला, और हाला के प्रतीकों को स्वीकार करके उनका प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया है । सृष्टि की अनेक वस्तुओं में मदिरालय तथा हाला की कल्पना कर लेना बच्चन की मर्मज्ञता का द्योतक है । हाला पिलानेवाले चित्रकार, कवि, काल इत्यादि हैं । ये प्रतीक जीवन के अनंत गहरे सत्यों को अभिव्यक्ति करते हैं । कवि ने इसमें सृष्टि की असंख्य वस्तुओं में मधुशाला एवं हाला के दर्शन कर सभी प्रकार के आस्वादकों को तृप्त करने का प्रयत्न किया है ।[3]

---

1. बच्चन - मधुशाला - पृ: 70
2. सब जाति के लोग यहाँ पर साथ बैठकर पीते हैं
   सौ सुधारकों का करती है, काम अकेली मधुशाला ।
   - बच्चन - मधुशाला - पृ: 53
3. रामजीलाल बाधौतिया - हिन्दी साहित्य और विभिन्न वाद - पृ: 216

उनकी "मधुशाला" सबसे पहले प्रियतम का हो स्वागत करती है । कवि कहते हैं कि मैं अपने मृदुभावों के अंगूरों को हाला पहले तुम्हें भोग लगाऊँगा, फिर संसार उसका प्रसाद पायेगा ।[1]

कवि ने विश्वव्यापी विराट रूपकों को रचना करते हुए प्रकृति के कण-कण में मधुशाला के दर्शन भी किए हैं -

तारक मणियों से सज्जित नभ
बन जाए मधु का प्याला,
सोधा करके भर दो जाए
उसमें सागर-जल हाला,
मत्त समीरण साकी बनकर,
अधरों पर छलका जाए
फैले हो जो सागर-तट से,
विश्व बने यह मधुशाला ।[2]

मधुशाला हाला, प्याला और साकी प्रत्येक व्यक्ति की रुचि के अनुरूप अर्थ और मादकता का संचार करते हैं ।

जितना हो जो रसिक उसे है
उतनी रसमय मधुशाला ।[3]

---

1. मृदु भावों के अंगूरों की
आज बना लाया हाला,
प्रियतम, अपने ही हाथों से
आज जिलाऊँगा प्याला
पहले भोग लगा लूँ तेरा
फिर प्रसाद जग पाएगा - बच्चन - मधुशाला - पृ: 29
2. वही पृ: 44
3. वही पृ: 93

"मधुशाला" में कवि-प्रतिभा का स्वाभाविक स्फुरण है । मदिरा में उन्मत्त, विक्षिप्त और मदोन्मत्त करने की अतुलित क्षमता विद्यमान है । अनिक-सा अधरों के स्पर्श मात्र से ही मानव अपना सब कुछ विस्मृत कर उसी की अधीनता स्वीकार कर लेता है ।[1] सुमित्रानंदन पंत के अनुसार अपने किशोर तारुण्य के उन्मेष में बच्चन ने अपने सौन्दर्योपासक हृदय के मादक आनंद को वाणी की रस-मुग्ध प्याली में उडेलने का प्रयत्न किया है ।[2]

"मधुशाला" और मस्ती इन दोनों को एक दूसरे का पर्याय भी कह सकते हैं । यह मस्ती, प्यार-जवानी, जीवन की मस्ती है । "मधुशाला" की मस्ती उस एबसर्ड कवि की मस्ती हैं जिन्होंने खैयाम के मदिर-मधुर संसार में विचरण किया है । उसकी मूल शक्ति समाज, धर्म और राजनीति की रूढ़ि-सीमा को तोडनेवाली अभिव्यंजना में निहित है । यौवन के प्रत्येक उल्लास, अवसाद तथा प्रणय-संघर्ष के पीछे मस्ती-मदिरा की प्रधानता है ।

"मधुशाला" की भाषा ललित है । उसमें संगीत की झंकृति है । भाषा में प्रसाद-माधुर्य गुण का सूक्ष्म समन्वय है । "मधुशाला" की भाषा-भंगिमा में छायावादी भाषा की झंकार और व्यावहारिक भाषा की सुबोधता और मन की भाषा की मिठास है ।[3]

---

1. जिन अधरों को छुए,
   बना दे मस्त उन्हें मेरी हाला,
   जिस कर को छू दे, कर दे
   विक्षिप्त ~~कर~~/उसे मेरा प्याला +
   - बच्चन - मधुशाला - पृ: 93

2. सुमित्रानंदन पंत - अभिनव सोपान सोपान
   पर से - पृ: 20

3. घन-श्यामल अंगूर लता से
   खिंच खिंच यह आती हाला,
   अरुण कमल कोमल कलियों की
   प्याली, फूलों का प्याला
   लोल हिलोरें साकी बन-बन
   माणिक मधु से भर जाती
   हंस मत्त होते पी-पीकर
   मानसरोवर - मधुशाला
   -बच्चन- मधुशाला - पृ: 52

बच्चन ने खैयाम से जो कुछ भी लिया था उसे अनेक रूपों में व्यक्त किया । मधुशाला के विविध प्रतीक हाला, प्याला और साकी के विभिन्न परिवेशों का ऐसा चित्र उपस्थित किया जो सुन्दर ही नहीं, सहज भी था और सहज ही नहीं, चमत्कार-युक्त भी था ।

"बच्चन के मधुशाला कालीन काव्य के पर्यवेक्षण में हमें मानव की यौवनोचित इच्छायें मिलती हैं तथा इच्छाओं की अपूर्णता पर मन का अवसाद मिलता है । जीवन को जो भी अवधि मिली है उसका मुक्त उपभोग ही नियति के व्यंग्य का एकमात्र उत्तर है । चाहे हम इस मुक्त भोग को कितनी भी उपेक्षा क्यों न करें, लेकिन कवि के एक काल विशेष की मानसिक और वैयक्तिक तथा राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों को देखते हुए उसकी अभिव्यक्ति-कुशलता मानव-मन की स्वाभाविकता से इन्कार नहीं किया जा सकता ।"[1]

स्वयं बच्चन मानते हैं - "मधुशाला" में मेरे चेतन, अवचेतन, संस्कार, अनुभूति संचित स्मृति, कल्पना, भय, आशा, निराशा, हर्ष, विमर्श, संघर्ष, सम्मोह, व्यामोह, विद्रोह सबका बडा क्षण हुआ कैथारसिस परगेशन रेचन ।[2]

नरेन्द्र शर्मा लिखते हैं कि "मधुशाला" बच्चन जी की भैरवी है शाब्दिक, साकेतिक और तांत्रिक अर्थों में । बच्चन जी की मधुशाला-रूपी भैरवी सिद्ध है । इसका मधु मद्य नहीं, कारण है । काव्य प्रतीकात्मक है । उसे अभिधा से नहीं, व्यंजना से समझना चाहिए । वह नव भारत के नव यौवन या चढती जवानी के उन्माद को प्रतिबिंबित करती है ।[3]

---

1. बच्चन - एक पहेली - चन्द्रदेव सिंह - पृ: 61
2. बच्चन - क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 280
3. नरेन्द्र शर्मा - बच्चन व्यक्ति और कवि - पृ: 50-51

जीवन के कटु-विषमय प्रभाव से व्यथित एवं निर्दय कठोर काल के प्रहारों को सहनेवाले पददलित मानवों के प्रति कवि को सहानुभूति है । इसीलिए आपने संसृति को मधुशाला कहकर मानवतावादी दृष्टिकोण व्यक्त किया है -

क्षीण, क्षुद्र, क्षणभंगुर, दुर्बल,
मानव मिट्टी का प्याला,
भरी हुई है जिसके अंदर
कटु मधु जीवन की हाला,

मृत्यु बनी है निर्दय साकी अपने शत-शत कर फैला, काल प्रबल, है पीनेवाला, संसृति है यह मधुशाला ।[1]

"मधुशाला" में सामाजिक विषमता, ईर्ष्या, द्वेष एवं वैमनस्य को बढावा देनेवाले सामन्तवादी राज्य महल, बडे-बडे परिवार को तहस-नहस कर देने की भावना ओजस्वी स्वर में मुखरित हुई है । कवि साम्प्रदायिक मनोमालिन्य एवं ईर्ष्या-द्वेष को दूर कर विघटित शक्ति को सुसंगठित करने की शुभ-भावना व्यक्त करते हैं, फलस्वरूप गाँधी बापू भी प्रसन्न हो गए थे ।[2]

"मधुशाला" में गीत नहीं हैं, रुबाइयाँ हैं जिनमें ध्वनियों तथा बिंबों का विशेष आकर्षण है । शिल्प-विधान की दृष्टि से इसमें ध्रुव-अंतरादि संगीत तत्वों का विशेष आकर्षण है तथापि गेयत्व, अनूठी स्वर, लय एवं झंकृति हैं जिनमें गीत की आत्मपरकता तथा अनुभूति का रागात्मक उन्मेष है । "इस प्रकार "मधुशाला" एक तुकान्त मनोरंजन की सामग्री ही नहीं है, उस में

---

1. बच्चन - मधुशाला - पृ: 65
2. बच्चन - क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 310

जीवन की सतत् साधना का फल है । वह जीवन में घटनेवाली अनेक घटनाओं का एक सुन्दर एलबम है । विश्वचक्र की कठोरता हमें क्षत-विक्षत करती चली जा रही है । हमारी सामाजिक कुरीतियों से बचने केलिए "मधुशाला" एक गाइड है, निर्देशिका है और समाज संघर्ष के गीतों का वह एक सुंदर संकलन है ।

चरम लक्ष्य की प्राप्ति

"मधुशाला" मनुष्य-जीवन की अगम्य दार्शनिकता का ही प्रकटीकरण है । वह जीवन का अंतिम लक्ष्य है, सबके जीवन का लक्ष्य वही ईश्वर प्राप्ति है । भिन्न भिन्न दार्शनिकों ने अलग-अलग रास्ते बताये हैं, परन्तु कवि की दृष्टि में तत्वान्वेषी निष्कम्प चरणों से एक पथ को पकडकर अपने लक्ष्य पर पहुँच सकता है ।

चलने ही चलने में कितना
जीवन, हाय, बिता डाला ।
दूर अभी है, पर, कहता है
हर पथ बतलानेवाला,
हिम्मत है न बढूँ आगे को,
साहस है न फिरूँ पीछे,
किंकर्तव्यविमूढ मुझे कर
दूर खडी है मधुशाला ।[1]

---

1. बच्चन - मधुशाला - पृ: 32

इसमें कवि ने हाला, मधुशाला, मधुपान, साकी आदि के माध्यम से धार्मिक असहिष्णुता, कट्टरता एवं कठोरता को चुनौती दी है । भारतीय संस्कृति मंदिर, मस्जिद, गिरजाघर, मौलवी, धर्मग्रन्थ[1], यम[2], श्राद्ध[3], होली-दीवाली[4], विधवा की उपेक्षा[5], सुहागन का आदर[6] आदि के समावेश के कारण "मधुशाला" की लोकप्रियता बहुत बढ गई है । कवि को संसृति के कण-कण में प्रियतम रूपी साकी की छवि ही दिखलाई पडती है और संपूर्ण प्रकृति में मधुशाला ही दृष्टिगोचर होती है । वास्तव में "मधुशाला" में बच्चन की निराशा, दुःख और पराजय की भावनायें मस्ती और मौज के कृत्रिम आवरण में प्रकट हुई हैं ।

मधुबाला

"मधुबाला" बच्चन की तीसरी रचना है जो 1936 में प्रकाशित हुई । उसमें कवि प्रेमासक्ति की प्रचंड ज्वाला में दग्ध अपने अनियंत्रित आवेग और आवेश में अपने को तृप्ति का दास और "हर बात को खास" मानने केलिए बाध्य पाते हैं । उसमें यौवन की प्रणयासक्ति की ज्वाला प्रचंड है । उसमें नियंत्रित आवेग तथा आवेश जन्य स्वर है -

---

1. बच्चन - मधुशाला - पृ: 37
2. वही पृ: 69
3. वही पृ: 74
4. वही पृ: 42
5. वही पृ: 52
6. वही पृ: 48

हर एक तृप्ति का दास यहाँ,
पर एक बात है खास यहाँ
पीने से बढती प्यास, यहाँ,
सौभाग्य, मगर मेरा देखो
देने से बढती है हाला
मैं मधुशाला की मधुबाला ।[1]

"मधुबाला" में नये-पुराने, परंपरा-प्रगति, रूढि-क्रांति, आडंबर-अनावरण, छायावादी तथा व्यक्तिवादी रोमानियत के द्वन्द्व की कवितायें हैं, दोनों के मध्य सेतु स्थापन के प्रयास की कवितायें हैं ।

"मधुबाला" पन्द्रह कविताओं का संग्रह है । संग्रह की प्रथम कविता "मधुबाला" पन्द्रह छंदों की है । यह कामेषणा रूपी नायिका के रूप में मुखरित होनेवाली कविता है । इस रोमानी कविता में वैयक्तिक जीवन की मधु कटु तिक्त अनुभूतियों को छायावादी भाषा और प्रतीकात्मक शैली में सफलतापूर्वक अभिव्यक्त किया गया है । काव्य की यह "मधुबाला" जीवन की ग्रानी है जो श्यामा की रुग्णावस्था में कवि-जीवन में प्रवेश करती है ।[2]

फरारी प्रकाशी ने बच्चन के घर आश्रय प्राप्त कर रुग्ण श्यामा देवी की अनुपस्थिति में गृहस्थी के कार्यों में हाथ दिया । उससे माता-पिता का स्नेह प्राप्त कर लिया । धीरे धीरे प्रकाशी बच्चन के निकटतर आती गई । फलस्वरूप बच्चन साथ-साथ श्रष्टा-भोक्ता [3] बने । काव्य की यह

---

1. बच्चन - मधुशाला - पृ: 30
2. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन - व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 18
3. बच्चन - क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 296

मधुबाला कवि-जीवन की प्रकाशी है जिसका संकेत निम्नलिखित पंक्तियों में उपलक्षित होता है ।

तब इस घर में था तम छाया
था भय छाया, था भ्रम छाया
था मातम छाया, गम छाया
उषा का दीप लिए सिर पर
मैं आई करती उजियाला ।[1]

दूसरी कविता "मालिक मधुशाला" में एक क्रांतिकारी स्वर गूँज उठता है । सड़े गले समाज के बीमार नियम-उपनियम, आरोपित बंधन से दमित और रूढिग्रस्त मानव विद्रोह करने केलिए बाध्य होते हैं । उसी मानव का प्रतिनिधित्व करनेवाली है -"मालिक मधुशाला" । जाति, वर्ण, धर्म, संप्रदाय, लिंग, शिक्षा, धन के आधार पर विभाजित व्यक्तियों को एकता के सूत्र में बंधने का उपदेश इसमें है [2]-

"मधुपायी" कविता मानव प्रगति के मार्ग की धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, नैतिक, दार्शनिक रूढि, अंधविश्वास आदि पर प्रहार करती है ।मधुपायी की इच्छा है -

अब तो इस पृथ्वी-तल पर ही
सुख-स्वर्ग बसाने हम आए ।[3]

इस कविता में कवि छायावादी शब्द कलेवर से हटकर लोक प्रचलित भाषा की ओर बढ़े हैं । कविता का अंतिम पद इस बात का द्योतक है

---

1. बच्चन - मधुबाला - पृ: 27
2. आओ सब-के सब साथ चलें
   सब एक खाक ही के पुतले
   क्या ऊँच-नीच, क्या बुरे-भले,
   मैं स्वागत करनेवाला हूँ मैं ही मालिक मधुशाला हूँ ।
   -बच्चन - मधुबाला - पृ: 36
3. वही पृ: 41

कि मधु मादकता का अस्तित्व ही शाश्वत सत्य नहीं है । वह तो केवल स्वप्नवत् एक भुलावा मात्र ही है -

सब धोखा है, सारा छल है ।[1]

"पथ का गीत" मस्ती के मार्ग का आह्वान गीत है । इसके कवि वे हैं जो "जीवन-पथ की भ्रांति मिटाते हैं । इसमें कल्पना तथा भावना पर बुद्धि कुछ हावी होती हुई प्रतीत होती है । इस आह्वान-गीत में नारे बाजी ही ज्यादा दिखलाई पडती है ।

"सुराही" ऐन्द्रिक सुखेषणा की प्रेरणा है । उसमें मानव की ऐन्द्रिक भोगेषणा के फलस्वरूप उत्पन्न विषाद की स्थिति का वर्णन है । समाज के खोखले आदर्शों के प्रति आक्रोश का स्वर स्पष्ट है । इस दार्शनिक प्रतीकात्मक कविता में मुहावरों का प्रयोग दर्शनीय है ।

लघु, मानव का कितना जीवन, फिर क्या उसपर इतना बंधन,
यदि मदिरा का ही अभिलाषी, पी सकता कुछ गिनती के कण ।
चुल्लू भर में गल सकता है उसके तन का जामा साकी ।
मैं एक सुराही मदिरा की ।[2]

भाषा बोलचाल की है । सुराही मानव काया का प्रतीक है । मिट्टी की सुराही अर्थात् क्षण भंगुर मानव शरीर में जीवन की अनेक महत्वाकांक्षायें होती हैं । पर दुनिया नश्वर काया की सूक्ष्म वेदना को समझे बिना उसे केवल मधुपान का प्रचार-साधन ही समझती रही है ।

---

1. बच्चन - मधुशाला - पृ:44
2. हरिवंश राय - बच्चन - मधुशाला - पृ: 56

उन्मत्त बनाना खेल नहीं,
मधु से भी बुझती प्यास कहीं ;
उर तापों से पिघला मेरा,
यह नहीं सुरा की धार नहीं ।
उर के आसव से ही होती
है शांति हृदय की ज्वाला की ।
मैं एक सुराही हाला की ।[1]

"प्याला" क्षण भंगुर जीवन के प्रतीक के रूप में आयी है । कविता का मूल स्वर निराशामय है, परन्तु जीवन के सुख-उपभोग के प्रति ललक दर्शनीय है । दुनिया में मानव की नियति जिस मिट्टी से निर्मित है, उसी मिट्टी में मिल जाने पर निर्भर है । मस्ती और केवल मस्ती ही अब इस विषादमय जीवन को आनंदपूर्वक बनाने का साधन है । इस कविता में गंभीर चिन्तन-दर्शन या उदात्त ध्वनि की खोज व्यर्थ है ।

"हाला" शीर्षक कविता में जीवन के तरलोन्माद और जीवन की लालसा अभिव्यक्त हुई है । जीवन और व्यक्ति के अस्तित्व को रागात्मक ध्वनि इस पद में सशक्त लगती है ।[2]

---

1. बच्चन - मधुबाला - पृ: 57
2. विपदों की अंधवायु में
   तने रहो, जीवन के तरुवर ।
   अपने सौरभ की मस्ती में
   सने रहो, जीवन के तरुवर
   (बच्चन - मधुबाला - पृ: 77)

"प्यास" मानव को तृष्णा का प्रतीक है । इसमें जीवन-तृष्णा की व्यापक व्यंजना बादल, बिजली, सूरज, सर, निर्झर, सरिता, सागर आदि प्रकृति रूपों के सहारे हुई हैं । छायावादी कवियों का सा सजीव-सुन्दर प्राकृतिक सौन्दर्य-चित्रण इसमें ढूँढना व्यर्थ है । कवि विरोधियों को दो टूक उत्तर देते हुए अपनी निश्छलता व्यक्त करते प्रतीत होते हैं ।

"बुलबुल" व्यक्ति की अल्हड या स्वच्छंदतावादी रागात्मक अभिव्यक्ति का प्रतीक है । इसमें भाव तन्मयता है और शब्द योजना सरस है । ईरानी साहित्य में बुलबुल को विश्व मंगल एवं सेवा की भावना व्यक्त करनेवाला पक्षी माना गया है । बुलबुल का लक्ष्य लीन होकर गाना है । न वह निंदा से खीजती है, न प्रशंसा से फूलती है ।[1]

"इस पार उस पार" इस संग्रह की सर्वाधिक महत्वपूर्ण कविता है । इसमें कवि के जीवन की व्यथा की कहानी है । "इस पार" के प्रति अतिशय आसक्ति और "उस पार" के प्रति अतिशय जुगुप्सामय संताप की भी इसमें व्यंजना हुई है । "इसकी रचना उस अवसर पर हुई जब कवि की प्रथम पत्नी श्यामा मृत्यु से संघर्ष कर रही थी । इस कविता में क्षयग्रस्त जीवन का विषाद, अपूर्ण सुख भोग केलिए छटपटाहट, पूर्ण भोग केलिए अदम्य लालसा व्यक्त हुई है । कविता हृदय को तीव्रता के साथ मथती है ।[2] कवि ने

---

1. कर कोई निंदा, दिन रात
   सुयश का पीटे कोई ढोल
   किए कानों को अपने बंद
   रही बुलबुल डालों पर बोला । ।बच्चन - मधुबाला - पृ: 93।
2. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन का व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 188

धरती के सुख-ऐश्वर्य-साधनों का पूर्ण उपभोग करने की भावना एवं विषाद की सघनता में मधुर वेदना के अविस्मरणीय रूप को बड़ी कलात्मकता से चित्रित किया है ।

"पाँच पुकार" में कवि कहते हैं कि शाश्वत अनिवार्य सत्य मृत्यु के चंगुल से कोई बच नहीं सकता । बच्चन ने यहाँ पाँच पृथक् पृथक् अंशों में मधुप्रेमियों की भावनाओं का वास्तविक चित्रण कर, प्राकृतिक उपादानों के सहारे सुख-तपनों को सरल-सुमधुर शब्दों में चित्रित किया है ।

"पञ्च ध्वनि" में वे बताते हैं कि संपूर्ण प्राकृतिक उपादानों का निचोड प्रियतमा के सौन्दर्य में समाविष्ट हो गया है और उसी के चरणों से ही सर्वप्रथम नाद-संगीत निःसृत हो अखिल सृष्टि में फैल गया है ।[1]

प्रस्तुत संग्रह की अंतिम रचना "आत्म परिचय" बच्चन की अपनी कहानी है । इसमें कवि ने अपने काव्य-सृजन के सूक्ष्म हेतुओं का संकेत दिया है । "कविता का पाँचवाँ पद बच्चन के मधु काव्य की रीढ है ।[2] कवित्व की दृष्टि से यह सुन्दर रचना है । इस परिचय में उनका मौजमस्ती भरा वैयक्तिक जीवन-दर्शन व्यक्त हुआ है ।[3]

---

1. बच्चन - मधुबाला - पृ: 120
2. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - पृ: 104.
3. मैं यौवन का उन्माद लिए फिरता हूँ
   उन्मादों में अवसाद लिए फिरता हूँ
   जो मुझको बाहर हँसा, रुलाती भीतर
   मैं, हाय, किसी को याद लिए फिरता हूँ ।

   (बच्चन - मधुबाला- पृ: 123)

"मधुबाला" में विषयानुशासित आत्माभिव्यक्ति अवश्य निहित है । इसकी भाषा बहुत अल्हड है । उसकी लपेट में जीवन का जो भी मार्मिक सत्य आ गया है, वह मर्मस्पर्शी हो गया है । "मधुबाला" में कवि की सरस वाणी, अलौकिक काव्य-प्रतिभा तथा अनुपम दृष्टिकोण दर्शनीय है ।[1] इस संग्रह की कवितायें जीवन की मस्ती से परिपूर्ण, सरस, सुन्दर और भावना-प्रवीण हैं। उनमें मानवीय जीवन की ताज़गी और उत्फुल्लता निहित हैं । हाला, मधुशाला, मधुबाला की कल्पना के द्वारा जो मस्ती प्राप्त होती है वह मानवीय जीवन की सक्रियता केलिए अतीव आवश्यक है ।

"मधुबाला" में बच्चन ने मनुष्य का जो चित्र खींचा है वह सर्व शक्तिमान मनुष्य का चित्र होकर नियति अथवा भाग्य-चक्र के समक्ष गर्दन झुकाकर हार मान लेनेवाले मनुष्य का चित्र है ।[2] "मधुबाला" में कवि अपना निजी व्यक्तित्व बना लेते हैं । गर्व से वे कहते हैं कि पूँजीवादी शक्तियाँ उन्हें खरीद नहीं सकतीं, तथा प्रेम के अतिरिक्त वे किसी प्रलोभन में आने के नहीं है ।[3] उन्नत ललाट रखने तथा पूँजीवादी शक्तियों को ठुकरानेवाले बोध ने ही बच्चन जी को सच्चा कवि बनाया है ।

---

1. हिन्दी साहित्य और विभिन्न वाद - रामजीलाल बधौतिया - पृ: 217
2. इस पार नियति ने भेजा है,
   असमर्थ बना कितना हमको मधुबाला ।बच्चन - मधुबाला - पृ: 63।
3. अमृतों ने अमृत दिखलाया ; दिखलाया अपना अमर लोक
   ठुकराया मैं ने दोनों को रखकर अपना उन्मत्त ललाट
   बिन मगर गया मैं ज्ञ बिना मूल्य जब आया मानव सरस हृदय
   मिट्टी का तन, मस्ती का मन, क्षण भर जीवन, मेरा परिचय ।

   ।बच्चन - मधुबाला - पृ: 62।

मधुकलश
=====

"मधुकलश" में मधु का विशेष अंकन केवल "मधुकलश" नाम को पहली रचना में ही हुआ है । स्वयं "मधुकलश" के सातवें संस्करण में बच्चन ने कहा है - "मधुकलश" नाम को सार्थक करनेवाली तो सिर्फ पहली कविता है ।[1] "मधुकलश" में 12 लंबे गीत हैं । विषय की दृष्टि से इसके गीतों में मुख्यत: तन्मयता की ताल तथा स्वर लहरी का तार झंकृत होता है । इस संग्रह की कविता वस्तुत: "मधुबाला" की विशुद्ध मधु संबंधी कविताओं की अपेक्षा अधिक कलात्मक, संगीतात्मक, और नैसर्गिक तत्वों से निर्मित है । इसमें भरा हुआ जीवन-मधु चेतना के मधुमय और रागमय उल्लास का ही प्रतीक है ।

"मधुकलश" अस्तित्ववादी दर्शन का गीतमय रूपांतर है । यह सामाजिक परिवेश में व्यक्ति के अस्तित्व का तीखा भाव-बोध कराता है । लगता है कि पूर्व की दो कृतियों में अभिव्यक्त उत्साह तथा उल्लास "मधुकलश" तक आते आते समाप्त हो जाता है । कवि ने प्रत्येक मानसिक घात-प्रतिघात को द्रुतता एवं तन्मयता से ध्वनित किया है ।

"मधुकलश" इस संग्रह की प्रतीकात्मक कविता है जहाँ प्रत्येक शब्द जीवन-संगीत का लय-ताल, वाद्य, स्वर सभी अपने साथ लेकर आता है । जीवन में सुख-दुख के क्षण भी आते हैं, इतना ही नहीं प्रत्येक कर्म केलिए निश्चित घडियाँ भी होती हैं, अत: नियति सत्ता जान हास रूदन को भूल आनंदपूर्वक जीवन बिताना चाहिए ।[2] प्रस्तुत कविता द्वारा कवि ने

---

1. बच्चन - मधुकलश - सातवाँ संस्करण - भूमिका - पृ: 11
2. बच्चन - मधुकलश - पृ: 33

व्यक्ति की विवशता के प्रति खीज और टीस को सहृदयता और संयम के साथ पदों छंदों में स्थापित करने का सफल प्रयास किया है ।

कवि से संबंधित शीर्षक रचनायें यथा "कवि की निराशा", "कवि की वासना", "कवि का गीत" तथा कवि का उपहास तथा "पथ भ्रष्ट" शीर्षक रचनायें समाज के कुटिल विरोध से प्रेरणा ग्रहण करती हैं । उद्दाम लालसा या तृष्णा को निर्भीकता एवं सहजता से अभिव्यक्त करने का श्रेय सर्वप्रथम कविवर बच्चन को है । व्यक्तिपरक "गीतिकाव्य ने अनुभूतियों के प्रकाशन में ईमानदारी का ध्यान सदैव रखा है, पर यही ईमानदारी उनकी कठोर आलोचना का कारण भी बनी है ।[1] उन्होंने इस बात की ओर संकेत भी किया है -

मैं छिपाना जानता जो जग मुझे साधू समझता
शत्रु मेरा बन गया है छल रहित व्यवहार मेरा ।[2]

"कवि की निराशा" कविता श्यामाजी की रोगशैया के निकट बैठकर लिखी गई कविता है । कवि विश्व के विधान आमूल परिवर्तन हेतु स्वप्नों को लेकर आए किन्तु केवल निराशा ही हाथ आई ।[3] "कवि का उपहास" में अजेय पौरुष के प्रतीक व्यक्ति का आक्रोश व्यक्त हुआ है । व्यक्ति-जीवन की साहसिकता, महत्वाकांक्षा, दुर्दमनीय सुखेषणा के उन्मुक्त-राग के पीछे अभावग्रस्त व्यक्ति की मानसिक हलचल "पथ भ्रष्ट" में दिखलाई पडती है । इसमें नियति से अपराजित होकर भी अपराजेय और क्रियाशील बने रहने का संदेश नवीन भंगिमा से प्रस्तुत किया है ।[4]

---

1. डॉ.दशरथ राम - लोकप्रिय बच्चन - सं. डॉ.दीनानाथ शरण - पृ:70
2. बच्चन - मधुकलश - कवि की वासना - पृ: 42
3. कवि की निराशा - मधुकलश - पृ: 49
4. बच्चन - मधुकलश - पृ: 77

"री हरियाली", "माँझी" तथा "लहरों का निमंत्रण" शीर्षक कवितायें आन्तरिक प्रेरणा की कवितायें हैं, जिन्हें कवि ने निराशा के सघन अंधकार के मध्य कहीं विद्युत-कौंध जानेवाली आशा के स्फूर्तिदायक क्षणों में लिखी हैं । "जब मेरे चारों ओर संघर्ष था तब इन गीतों से मैं ने कभी अपना मन बहलाया, कभी दूर के स्वप्न रचे, कभी अपने में बल संचय किया, कभी अपने आदर्श बनाए ।[1]

"काम क्या समझूँ न हो यदि
गाँठ उर की खेलने को ?[2]

कवि जीवन-संग्राम में थककर पीछे हटना नहीं चाहते, बल्कि आगे ही बढने का अटल निश्चय करते हैं । उस पार वाली दूर की कल्पना के पास जाकर उसे देखकर पर्दाफाश करने की प्रबल उमंगों को भय रोक नहीं सकता क्योंकि

एक तिनका भी बना सकता
यहाँ पर मार्ग नूतन ।[3]

यहाँ कवि के बाहू संघर्ष रूपी लहरों से उलझने जूझने को सदैव लालायित रहते हैं ।

"मेघदूत के प्रति" कालिदास के "मेघदूत" की ही भावानुवाद अवश्य है । भावानुवाद होते हुए भी कवि की विशिष्ट प्रतिभा की परिचायक भी है । बच्चन ने लिखा है । "अपने चारों ओर के दुःख संसार को ऊपर उठने में "मेघदूत" ने मेरी बडी सहायता की । उस समय मैं ने बहुत-सा

---

1. बच्चन - मधुकलश - सातवाँ संस्करण - अपने पाठकों से - पृ: 13
2. वही पृ: 15
3. बच्चन - मधुकलश - पृ: 105

कल्पना-प्रभा, देशी-विदेशी साहित्य पढा, पर जो संतोष मुझे "मेघदूत" से मिला वह किसी अन्य रचना से नहीं ।[1] संस्कृत मेघदूत के साथ अंतर्भावित साम्य एवं कालिदास के भावों का काव्यमय समादार प्रशंसनीय है ।

संग्रह की अंतिम कविता "गुलहज़ारा" बच्चन के मन की असह्य पीडा को व्यक्त करती है । कवि को गुलडज़ारा के क्रमिक-विकास, ह्रास परिहास, संत्रास की स्मृतियाँ, मर्मान्तक पीडा से द्रवित कर देती हैं । मृत्यु शय्या पर पडी श्यामा बच्चन के लाख प्रयत्न करने पर नहीं बचा पा रही है तो असहाय चीत्कार भर उठता है ।[2]

"मधुकलश" ने बच्चन के कृतित्व की उच्चतम भावभूमियों का उद्घाटन किया । सरल होने के साथ व्यंजनापरक भाषा-शक्ति में सामर्थ्य के दर्शन उन्होंने कराये । जीवन की अतृप्ति और अभावों को तृप्त करने केलिए कवि के युवकोचित जोश ने मधु-काव्य का माध्यम खोजा था । प्रेम का उपभोग इनके काव्य का प्राण तत्व बना और मनोवैज्ञानिक स्थिति पर प्रेम का उपभोग अनुचित नहीं था तभी तो तडप कवि के स्वर में थी:-

"क्या किया मैं ने नहीं जो कर चुका संसार अब तक
वृद्ध जग को क्यों अखरती है क्षणिक मेरी जवानी ।[3]

---

1. बच्चन - मधुकलश - अपने पाठकों से - पृ: 15
2. "मृत्यु-शय्या पर पडे अति रुग्ण की अंतिम हँसी सो यत्न करके खिल रही है, एक लघु कलिका निराली सांत ठंडी से प्रकृति अब प्राण उसके ले रही है हाथ से अपने उसी ने था जिसे कल तक सँवारा - आज उपवन से हमारे मिट रहा है गुलहज़ारा ।बच्चन - मधुकलश - पृ: 126।
3. वही पृ: 42

अब बुद्धी नैतिकता के खंडन का युवकों ने दिल खोलकर स्वागत किया । नवयुवक नैतिकता नहीं मानते । अत: युवकों ने इसे पसंद किया । उनमें जोश था जो वे बच्चन जी के स्वरों में मुखर रूप में देख रहे थे ।

"झेलने को इस बडे तूफान के झौंके-झकोरे
मानवी संपूर्ण साहस वक्ष बीच सँजो रहा है ।[1]

रामस्वरूप चतुर्वेदी ने "मधुकलश" में व्यंजित तत्युगीन काव्यात्मक अनुभूति की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा है - "न सिर्फ उस पुस्तक में उस युग की काव्यात्मक अनुभूतियों का काफी बडा खजाना है, बल्कि उस काल की काव्यात्मक समस्याओं की कुंजी भी है जिसके बगैर उस युग को नहीं समझा जा सकता ।[2]

सुमित्रानंदन पंत ने एक स्थान पर लिखा है "बच्चन की रचनाओं का सबसे बडा गुण यह भी है कि उनकी पंक्तियाँ बिजली की तरह कौंध कर मन में प्रवेश कर जाती हैं और अपने ही प्राणों में प्रकाश के चांचल्य उठती है । मधुकलश की कुछ रचनायें इस कथन के साक्षी हैं ।

निष्कर्ष

"मधुकलश" के गीतों में प्रतीक, रूपकादि का भावसंगत विशिष्ट प्रयोग हुआ है । उसकी भाषा में प्रवाह और प्रौढता है । सभी गीत सजीव चित्रों की सृष्टि मानसिक पटल पर सहज ही अंकित करते हैं ।

---

1. बच्चन - मधुकलश - पृ: 94
2. रामस्वरूप चतुर्वेदी - नयी कविता - संयुक्तांक - पृ: 506.

तीसरा अध्याय

प्रगति के पथ पर

हालावाद के प्रवर्तक के रूप में हरिवंशराय बच्चन विशेष मशहूर हैं । प्रथम पत्नी श्यामा के साथ उनका संबंध आत्मीयतापूर्ण और हार्दिक था । बच्चन के काव्य जीवन से श्यामा का गहरा संबंध था । वह देहाती लडकी थी, काव्य-कला से अनभिज्ञा थी । पर धीरे धीरे उसमें कलात्मकता का विकास होने लगा । वह बच्चन के काव्य-व्यापार की प्रेरक शक्ति बन गई । श्यामा के साथ जीते समय बच्चन ने हाला, प्याला, साकी आदि प्रतीकों को स्वीकार करके "मधुशाला" की रचना की । यह कृति उनकी लोकप्रियता का आधार बनी ।

प्रफुल्लचन्द्र ओझा मुक्त ने "एक अंतरंग झाँकी" में कहा है कि "वे कवि बच्चन से अनभिज्ञ थे । श्यामा के माध्यम से वे इस सत्य से अभिज्ञ हुए कि बच्चन कविता करते हैं । एक दिन बच्चन के घर पर आए मुक्त से श्यामा ने किसी चीज़ ढूँढकर देने को कहा । भाभी के कहे अनुसार मुक्त ने संदूक खोला तो उन्हें बडे सुन्दर अक्षरों में लिखी कविताओं से भरी दो तीन कापियाँ मिली । भाभी से मुक्त को मालूम हुआ कि ये बच्चन की कवितायें हैं । मुक्त ने उन्हें कापी करके कुछ प्रतिष्ठित पत्रिकाओं को भेज दिया । जब वे प्रकाशित हुईं बच्चन बहुत नाराज़ हुए । इस प्रकार पहली बार पाठकों के सामने बच्चन की कवितायें आईं जिसमें श्यामा का बडा हाथ था ।[1]

---

1. प्रफुल्लचन्द्र ओझा "मुक्त" - बच्चन - निकट से - सं.अजितकुमार-ओंकार नाथ श्रीवास्तव - पृ: 93

"सन् 16 नवंबर 1936 में मंद ज्वर से पीडित होकर श्यामा का निधन हुआ जिसने बच्चन को पंख कटा पक्षी बनाया । उसको मृत्यु के बाद बच्चन का मन एकाकी रह गया । वे बेसहारा बन गये । श्यामा वास्तव में पत्नी ही नहीं, उनकी मित्र भी थी । पत्नी की मृत्यु के गहनविषाद के कारण कविता न लिखने के दृढसंकल्पी विधुर कवि ने चार सौ दिन तक भावनाओं के बाँध को खूब नियंत्रित किया । किन्तु शोक में तडपते हुए उन्होंने क्षीणतर होते हुए स्वर से कह ही डाला ।[1]

निशा निमंत्रण

पत्नी श्यामा की मृत्यु के फलस्वरूप बच्चन के मन में गंभीर प्रतिक्रिया हुई । ये प्रतिक्रियायें "निशा-निमंत्रण" में अधिक अभिव्यक्त हुई हैं । "निशा निमंत्रण" में बच्चन को अवसादजन्य मनस्थितियों का साक्षात्कार होता है । इस कृति में उन्होंने शोक गीतों को अत्यंत परिष्कृत भूमि प्रस्तुत की है । इसमें उनकी प्रणय की पिपासा, निराशा और कुंठाओं की अभिव्यक्ति हुई हैं ।

"निशा-निमंत्रण" के गीत आकार में लघु, भावपूर्ण, संगीतात्मक और विशिष्ट वृत्तियों के परिचायक हैं । कवि की सारी वेदना "निशा निमंत्रण" के गीतों के रूप में मुखर हो गई । यह रचना बच्चन के वियोगी हृदय के आँसू रूपी मोती है । इनके गीतों की सबसे बडी विशेषता घन विषाद है ।

---

1. आओ, सो जायें, मर जायें । बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 47।

इसमें आहत हृदय के उच्छ्वासों का प्रस्फुटन बडी स्वाभाविक संयत शैली में हुआ है । सत्य मिट गया, सपना टूट गया, संगिनी छूटी, वे एकदम अकेले रह गये और इन कठोर दु:खों को सहते हुए अपने जीवन में सदा दु:खी रहने का आदर्श बना लिया ।

अप्रतिम उपहार

"निशा निमंत्रण" के सौ गीतों के पृष्ठाधार के रूप में सघन अवसाद, अतीत की स्मृति, नियति के निर्मम प्रहार की मर्मांतक पीडा, अनायास बिछुडनेवाले साथी संगी की विरह-विदग्ध व्यंजना, अकेले कंठ की पुकार आदि का सुंदर चित्रण प्राप्त होता है । "यह रचना स्वर्गगता श्यामा की स्वर्णिम स्मृति को चिरस्थायी बनाये रखने का अप्रतिम उपहार है ।[1]

विधुर मानव की मानसिक प्रतिक्रिया

खडी बोली के गीत-संग्रहों में निशा-निमंत्रण" एक अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है । अपने विरह-विषाद के यथार्थ को गीतों में स्थापित करने में बच्चन ने असाधारण सफलता पायी है । "यह एक असहाय, अकेले, विधुर मानव की मानसिक प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उतरे शब्द-चित्रों का सजीव एलबम है ।[2]

करुणा के स्वर

व्यक्ति व्यक्ति के जीवन की घटनायें, उसके संघर्ष, उसकी जय-पराजय,

---

1. कृष्णचन्द्र पण्डया - बच्चन - व्यक्तित्व और कृतित्व - पृ: 116
2. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन - व्यक्तित्व और कवित्व- पृ: 46

आशा-निराशा, प्राप्ति-अप्राप्ति और प्रेम-घृणा के दायरे अलग हो सकते हैं । पर उनको मानसिक प्रतिक्रिया से प्रसूत सुख-दु:ख की अनुभूति समान होती है । "निशा निमंत्रण" के गीत निश्चय ही व्यक्तिवादी स्वरों से युक्त हैं । अमिट भाव चित्रों से सज्जित करुणा के स्वरों में डूबे छोटे छोटे गीत इस संग्रह में मिलते हैं ।

मानसिक यात्रा

"निशा निमंत्रण" में दिन ढलने से लेकर दिन निकलने के पूर्व तक की मानसिक यात्रा का वर्णन है । इसमें प्रकृति के पल-पल परिवर्तित होते दृश्यों का क्रमबद्ध इतिहास है । "इसके गीतों में एक व्यक्ति को केन्द्र मानकर उसके जीवन-साथी के असमय, अशुभ अवसाद का रागमय चित्रण अत्यधिक सुचारु ढंग से किया गया है । मगर इस राग का आधार प्रणय की रूमानियत न होकर जीवन के सुख-दु:ख के भिन्न पहलू हैं ।[1]

प्रेम के आँसू

विश्व साहित्य का अधिकतर भाग मनुष्य के आँसुओं से गीला है । संसार में तरह तरह के आँसू हैं - धनी और निर्धन के आँसू, प्रेमी के आँसू, सुखी-दु:खी के आँसू आदि । इन आँसुओं में सबसे कीमती, स्थायी और मर्मस्पर्शी आँसू प्रेम के आँसू हैं । बच्चन के "निशा-निमंत्रण" में इन्हीं का संकलन हुआ है ।

"निशा-निमंत्रण" में बच्चन ने हृदय की सूक्ष्मतम अनुभूतियों और एकाकीपन के गहनतम विषाद को सच्चाई और गहराई से व्यक्त किया है । पीर में

---

1. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 49

जो मिठास है वह कवि को प्रिय है । इसके गीतों से यह प्रतीत होता है कि विषाद और अंधकार के कुहासे में कवि बद्ध हैं ।[1]

"अब वे मेरे गान कहाँ हैं ?
टूट गई मरकत की प्याली,
लुप्त हुई मदिरा की लाली,
मेरा व्याकुल मन बहलानेवाले अब सामान कहाँ हैं ?[2]

"निशा-निमंत्रण" में एक गहरी उदासी व्यक्त हुई है । "क्या भूलूँ क्या करूँ" में श्यामा की मृत्यु पर बच्चन ने लिखा है : "उसकी मृत्यु में आधा मैं भी मर गया था, मेरे जीवन में आधा वह भी जी रही है ।"[3] "निशा-निमंत्रण" के गीत बच्चन के कथन को सार्थक सिद्ध करते हैं ।

प्रेम सृष्टि की चिरन्तन आदि शक्ति है । वह मानव की स्वाभाविक स्वच्छंद वृत्ति है । वह कविता की सबसे महान प्रेरक शक्ति है । युग के अनुसार उसके रूप में परिवर्तन होते रहे हैं । "प्रेम वह शैल शिखर है जिससे गीत की निर्झरिणी कल-कल, छल-छल करती गिरती हुई लोक-हृदय के विराट सागर में लय हो जाती है । संयोग और वियोग ही इसके दो कूल हैं । हास और अश्रु प्रेम को पल्लवित और पुष्पित करते हैं । अश्रु तो प्रेम को अधिक भास्वर बना देता है ।[4] "निशा-निमंत्रण" के गीत उक्त बात के साक्षी हैं ।

---

1. नईमा खान - बच्चन - एक युगान्तर - सं. नीरज:नईमा खान - पृ: 29
2. बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 93
3. बच्चन - क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 316
4. आशा किशोर - आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य का स्वरूप और विकास - पृ: 275

विरह गीतों का सर्वश्रेष्ठ संकलन

"निशा-निमंत्रण" के गीत सायंकाल से प्रात: काल की अवधि के बीच कवि की मनोभूमि के समस्त आंदोलन को स्पष्ट करते हैं । वास्तव में यह रचना हिन्दी में विरह गीतों का सर्वश्रेष्ठ संकलन है । बच्चन का आतुर हृदय-पंछी शून्याकाश में व्यर्थ भटकता रहता है, नीड का पथ वह भूल गया है । वह नीड जिसमें प्राणी अनंत सुख और शान्ति अनुभव करता है -

अंतरिक्ष में आकुल-आतुर,
कभी इधर उड, कभी उधर उड,
पंथ नीड का खोज रहा है पिछडा पंछी एक अकेला
बोल चली संध्या की वेला ।[1]

इन पंक्तियों में कवि के भटकने और "आकुल अन्तर" की अभिव्यक्ति जिस प्रतीक के माध्यम से व्यक्त हो सकी है वह प्रतीक पंछी के रूप में जो प्रकृति का एक चेतन उपादान है जिसे कवि ने यहाँ अपनी मनस्थिति के सादृश्य स्वरूप अंकित किया है ।[2] उदास वातावरण को चित्रित करनेवाले शब्द कितने व्यंजक हैं - "आकुल आतुर" । प्रस्तुत गीत कवि के जीवन की ओर संकेत करता है । बच्चन का आत्माभिव्यंजन अन्तिम अनुच्छेद में आकर चरम बिंदु पर पहुँच जाता है । यह पूरा गीत अपने पूरे व्यक्तित्व के साथ उभरा है ।

अगले गीत में कवि की विरह भावना अधिक उद्विग्न हो उठती है । क्योंकि बुलबुल और पाटल, षट्पद और शतदल के मिलन को देखकर कवि के

---

1. बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 29
2. कैलाश वाजपेयी - आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प - पृ: 130

नयन से आँसू गिर पड़े । संध्या गगन से विदा ले रही है । रात्रि का आगमन है ।[1] सूर्यास्त के साथ कवि की आशायें टूट गई हैं । रजनी के अंधकार में शोक छा गया है । रात्रि विरह व्यथा को बढाती है । कवि उन बीते क्षणों को याद कर रहे हैं । सुख के आलोड़ित सागर को पीड़ा के मरुस्थल में परिवर्तित देखकर कवि अपने आँसुओं को नियंत्रित करने में असफल होते हैं । कवि निराशांधकर से घिरे हैं ।

काल्पनिक साथी

भाग्य द्वारा प्रताडित कवि ऐसे व्यक्ति की खोज में है जिससे दो बातें कर वे अपने आपको हल्का महसूस कर सकें । वे चाहते हैं कि यह साथी संसार के ईर्ष्या-प्रेम, मोह-स्वार्थ से अलग हो । इसलिए निमंत्रण की निशा में वे एक काल्पनिक साथी, की तलाश करते हैं । वे उस काल्पनिक साथी के साथ रोने, हँसने, गाने और सोने में कोई संकोच न रखते हैं । निशा की सुखद नींद में जब समस्त संसार लीन है तब कवि उस साथी को जगाये रखना चाहते हैं जिससे बातें करते हुए वे पीडा की घडियों को काट सके ।

श्यामा कवि के जीवन से हमेशा केलिए बसी, फलत: खिन्नता, निराशा और अवसाद की मलिनता ही शेष रह गयी । बच्चन काल्पनिक साथी को संबोधित करते हुए प्रणय की अपूर्ण कथा को संपूर्ण करने का आग्रह करते हैं -

---

1. बुलबुलों ने पउटलों से,
   षटपदों ने शतदलों से,
   कुछ कहा - यह देख मेरे गिर पड़े आँसू नयन से ।
   चल बसी संध्या गगन से । (बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 30)

पूर्ण कर दे वह कहानी,
जो शुरू की थी सुनानी,
आदि जिसका हर निशा में, अन्त चिर अज्ञात ।
साथी, सो न, कर कुछ बात ।[1]

कवि का मन विरह-व्यथा से अत्यंत तप्त है । उन्हें ऐसा महसूस होता है कि उनके साथ रोनेवाला कोई नहीं । इसी की तीखी वेदना "निशा निमंत्रण" के निम्नलिखित गीत की पंक्तियों में अभिव्यक्त हुई है ।[2] कवि को जीवन ठहरा-सा लगता है । और कभी कभी वे प्रिया को उलाहना देते हैं :-

क्षण भर को क्यों प्यार किया था ?
अर्द्ध रात्रि में सहसा उठकर,
पलक संपुटों में मदिरा भर,
तुमने क्यों मेरे चरणों में अपना तन-मन वार दिया था ?
क्षण भर को क्यों प्यार किया था ?[3]

बच्चन ने प्रिया को मात्र प्रणय-केलि की संगिनी नहीं माना है उसकेलिए वह सह भोक्ता एवं शक्ति भी है ।

---

1. बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 60
2. आज घिरे हैं बादल, साथी ।
   भरा हृदय नभ विगलित होकर
   आज बिखर जाएगा भू पर,
   चार नयन भी साथ गगन के आज पडेंगे ढल-ढल, साथी
   (बच्चन - निशा-निमंत्रण- पृ: (62)
3. वही पृ: 82

बीते दिन कब आनेवाले ?
मुझमें है देवत्व जहाँ पर,
झुक जाएगा लोक वहाँ पर,
पर न मिलेंगे मेरी दुर्बलता को अब दुलारनेवाले ।[1]

प्रेम की अभिव्यक्ति केलिए बच्चन ने प्रकृति की सहायता ली है । उनकेलिए प्रकृति भी दु:खी दिखाई देती है । चाँदनी से उन्हें दिलासा मिलता है ।[2]

कवि विक्षुब्ध-से हो जाते हैं । उनकी स्मृतियाँ धोखा-सा देने लगती हैं ।[3] निशा निमंत्रण में ध्वनित दुख ज़रूर ही बच्चन के जीवन का भुक्त दु:ख है । इसके गीत सीधे मर्म को कुरेदते हैं । वे स्वयं रोये हैं, खूब दूसरों को रुला सके हैं । "निशा निमंत्रण" के तेरह पंक्तियोंवाले गीत हिन्दी कविता की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि कहे जा सकते हैं ।[4]

अकेलापन

व्यक्ति की एकाकीपन की अनुभूति को यहाँ वाणी मिली है । इसके

1, बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 94
2. दे रही कितना दिलासा,
आ, झरोखे से ज़रा-सा
चाँदनी पिछले पहर की पास में जो सो गई है ।
रात आधी हो गई है । ।बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 72
3. क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं ।
अगणित उन्मादों के क्षण हैं,
अगणित अवसादों के क्षण हैं,
रजनी की सूनी घड़ियों को किन किन से आबाद करूँ मैं ।वही - पृ: 116।
4. डा. शिवकुमार मिश्र - नया हिन्दी काव्य - पृ: 132

अन्तर्गत व्यक्ति की निःसंग स्थिति का चित्रण किया गया है -

ऐसे मैं मन बहलाता हूँ ।
सोचा करता बैठ अकेले,
गत-जीवन के सुख-दुःख झेल,
दंशनकारी सुधियों से मैं उर के छाले सहलाता हूँ ।
ऐसे मैं मन बहलता हूँ ।[1]

रात पीडादायिनी होने पर भी संसार की दृष्टियों से ओझल है। कोई उससे व्यंग्य करने केलिए तैयार नहीं । मगर कवि संदेह करते हैं कि रात कहाँ तक साथ दे सकी ? जब प्रकृति भी साथ नहीं निभा सकती तो काल्पनिक साथी कैसे साथ रह सके ? यही सोचकर वे उस साथी से भी विदा ले लेते हैं । उस साथी को आभार प्रकट करते हैं क्योंकि उसीने उनके एकाकीपन में अवलंबन दिया था । पर जगत में और भी दुःखी हैं, औरेों को भी उसकी आवश्यकता हो सकती है । इसीलिए वे उस से विदा लेते हुए कहते हैं ।[2]

विरह के करुण, मधुर प्रसंगों से "निशा-निमंत्रण" के प्रेमगीत भरे हैं । बच्चन विरह में मिलन के सपने देखते हैं । मिलन में उसका स्थायित्व है ।[3]

---

1. बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 92
2. जाओ जग में भुज फैलाए,
   जिसमें सारा विश्व समाए,
   साथी बनो जगत में जाकर, मुझसे अगणित दुखिया जन के ।
   अजाओ कल्पित साथी मन के । ।बच्चन - निशा-निमंत्रण - पृ: 123।
3. हो मधुर सपना तुम्हारा ।
   पलक पर यह स्नेह-चुंबन,
   पोंछ दे सब अश्रु के कण,
   नींद को मदिरा पिलाकर दे भुला जग-क्रेर कारा ।
   ।बच्चन - निशा-निमंत्रण - पृ: 48।

दु:खियों के प्रति सहानुभूति

दु:खियों के प्रति गहरी सहानुभूति बच्चन की कविता की निजी विशेषता है । "वास्तव संसार के दु:ख के असाध्य रोग ने बच्चन के हृदय को अत्यंत व्यापक और उदार बना दिया । "निशा-निमंत्रण" इस दृष्टि से अत्यंत सुंदर काव्य है ।"[1] अनुभूतियों का सहज, अकृत्रिम स्वरूप, वेदना की गहराई, प्रगाढता आदि दृष्टियों से यह रचना अद्वितीय है ।

आचार्य नंद दुलारे वाजपेय के अनुसार "व्यक्तित्व का पर्यवसान यदि शब्द की कसौटी माना जाय तो "निशा-निमंत्रण" ही उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना होगा । यहाँ आकर उनकी वेदनात्मक प्रेरणा अतीव घनीभूत हो उठी है और साथ ही उसके एकान्त चित्रण की पराकाष्ठा भी हो गई है ।"[2]

भाषा

बच्चन की भाषा की सबसे बडी विशेषता उसकी शब्द-योजना तथा मधुर पदावली है । उनकी पदावली व्यावहारिक, और सार्थक ~~और तार्किक~~ है । इसलिए इसमें आत्म संपृक्ति, उत्तेजना और आत्माभिव्यक्ति का सीधापन उजागर हुआ है । गीतों पर उर्दू की सादगी से प्रभावित सहज, मसृणता एवं ऋजुता का राज है ।[3]

---

1. गजानन माधव मुक्तिबोध-नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र - पृ: 67
2. नंद दुलारे वाजपेय - साहित्य चिन्तन - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी - पृ: 58
3. याद सुखों की आँसू लाती, दु:ख की, दिल भारी कर जाती,
   दोष किसे दूँ, जब अपने से अपने दिन बर्बाद करूँ मैं
   क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं । (बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 116)

"निशा-निमंत्रण" की भाषा बिंब विधायिनी अधिक हो गई है । इसमें जो भाषा प्रयुक्त हुई है वह एकदम उद्गारों की वाहिनी है इसमें व्यक्ति की पीडा की वीणा का राग है -

"साथी, साथ न देगा दुःख भी ।
काल छीनने दुःख आता है,
जब दुःख भी प्रिय हो जाता है,
नहीं चाहते जब हम दुःख के बदले में लेना चिर सुख भी ।
साथी, साथ न देगा दुःख भी ।[1]

संगीतात्मकता

संगीत तत्व का निर्वाह अच्छे ढंग से निशा-निमंत्रण" के गीतों में हुआ है । स्वयं गायक होने के नाते बच्चन के काव्य में संगीतात्मकता का आना स्वाभाविक है । "निशा-निमंत्रण" के अधिकांश गीत गेय हैं । तीखी-तादो भाषा शैली में स्वानुभूत जिंदगी को संवेदनशील अभिव्यक्ति करते हुए एक खास तरह की ताजगी का परिचय बच्चन ने दिया ।

मृत्यूपासना

उत्तर छायावादी व्यक्तिपरक कविता की विशेषताओं में एक है मृत्यूपासना । बच्चन के काव्य में मृत्यूपासना की सशक्त भावना दृष्टिगत होती है ।[2]

---

1. बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 120
2. फिर न पडे जगती में गाना,
   फिर न पडे जगती से जाना,
   एक बार तेरी गोदी में सोकर ।
   फिर मैं जाग न पाऊँ । (बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 46)

प्रतीक

प्रतीक अनुभूति को काव्यानुरूप व्यक्त करने का एक महत्वपूर्ण उपकरण हैं । प्रतीकों का निर्माण कवि की प्रतिभा और सूक्ष्म दृष्टि का प्रमाण है। अधिकांश प्रतीक "मैं" सापेक्ष हैं । अनुभूति सापेक्ष अस्तित्व को प्रबल तथा प्रभावशाली रूप में अभिव्यक्ति देने केलिए इन प्रतीकों का प्रयोग किया गया है ।

अंधकार बढता जाता है ।
मिटता अब तरु-तरु में अंतर,
तम की चादर हर तरुवर पर,
केवल ताड अलग हो, सबसे अपनी सत्ता बतलाता है ।[1]

यहाँ ताड निराशांधकार में घिरे व्यक्ति के अस्तित्व का प्रतीक है । बच्चन के प्रतीक सर्वाधिक समर्थ हैं । "निशा-निमंत्रण" का शिल्प कथ्य के अनुकूल है । "निशा-निमंत्रण" अत्याधुनिक इसलिए है कि उसमें जितनी उत्तमता से यथार्थ के प्रति भावनात्मक रिश्ते का दिग्दर्शन कराया गया है, वह हिन्दी साहित्य जगत में दुर्लभ है ।[2] अनुभूति बच्चन के गीतों का प्राण है, गीतों की शक्ति है । "निशा-निमंत्रण" के गीत भी इसकेलिए अपवाद नहीं है ।

"निशा-निमंत्रण" के गीत शैली की इन पंक्तियों को सार्थक बनाते हैं - "हमारे सबसे मधुर गीत वे ही हैं जिनमें दुःख भरी बातें होती हैं" ।[3] आत्मनिष्ठ प्रेमानुभूतियों के गायक के रूप में बच्चन की कविता में

---

1. बच्चन - निशा निमंत्रण - पृ: 32

2. गजानन माधव मुक्तिबोध - नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र - पृ: 66

3. Our sweetest songs are those that tell of saddest thoughts - Shelley - To A Skylark.

भोग, शोक, निराशा आदि अभिव्यक्त हुए हैं ।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि -निशा-निमंत्रण" विधुर बच्चन के तटस्थ अन्तर्मन को फूटी हुई शोक की बाढ है । इस संग्रह के गीतों में अनुभूति की मार्मिकता, सरल भाषा से शोभित होकर उभरी है । यह ज्ञातव्य है कि मुगल सम्राट शाहजहाँ ने मुमताज की स्मृति को बनाये रखने केलिए ताजमहल का निर्माण किया है । ठीक उसी तरह बच्चन ने श्यामा की स्मृति को सुरक्षित रखने केलिए "निशा-निमंत्रण" रूपी ताजमहल का निर्माण किया है । सच पूछ जाए तो सारी कथा एक ही मनोदशा, एक ही भाव-सूत्र, श्यामादेवी के स्वर्गारोहण-शोक में संग्रथित है ।

एकांत संगीत

"निशा-निमंत्रण" के पश्चात् बच्चन ने "एकांत संगीत" की रचना 1939 में की । "एकांत संगीत" में कवि के यौवन की असफल प्रणयासक्ति और जीवन की गहन निराशा का स्वर गूँज उठता है ।[1]

"निशा-निमंत्रण" के दबे स्वर और मूक-विषाद की सहज स्वाभाविक ऋजु अभिव्यक्ति "एकांतसंगीत" में मुखरित हुई है । असल में यह रचना अकेले व्यक्ति की तन्हाइयों का संगीत है जो उसका अपना है जिसे वह किसी को समर्पित न कर अपने को ही अर्पित कर सकता है । "एकांत संगीत" एक ऐसी कृति है जिसमें एक हताश प्रेमी की गुनगुनाहट स्पष्टता सुनाई पडती हैं । बच्चन की ये पंक्तियाँ उनके निराश हृदय का परिचय देती हैं -

---

1. अपने पर मैं ही रोता हूँ,
   मैं अपनी चिता सँजोता हूँ,
   जल जाऊँगा अपने कर से रख अपने ऊपर अंगारे ।
   खिडकी से झाँक रहे तारे । (बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 33)

"मैं जोड सका यह निधि सयत्न -
खण्डित आशायें, स्वप्न भग्न,
असफल प्रयोग, असफल प्रयत्न,
कुछ टूटे-फूटे शब्दों में, अपने टूटे दिल का क्रन्दन ।[1]

निराशा

निराशा जीवन का एक अंग है, महत्वपूर्ण क्षण है, जीवन-प्रक्रिया में उसका आना अनिवार्य है । इसलिए बच्चन के जीवन-दर्शन से निराशा का अभिन्न संबंध न होकर सामयिक उपयोगिता है । इसके गीत संगीत की स्वर-माधुरी केलिए अनुकूल हैं ।

"एकान्त संगीत" का पहला गीत "अब मेरा निर्माण करो" ट्रेनिंग कॉलेज कमच्छा के बोर्डिंग हाऊस में लिखा गया था ।[2] मानव की स्वाभाविक और आधिकारिक तृष्णा और इच्छा की अवहेलना के विरोध में "एकांत संगीत" के प्रथम गीत में ही कवि ने विद्रोह प्रकट किया है ।"[3]

---

1. बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 33
2. एकांत संगीत - भूमिका - पृ: 12
3. कहने को सीमा होती है,
   सहने की सीमा होती है,
   कुछ मेरे भी वश में
   मेरा कुछ सोच-समझ अपमान करो -
   (बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 27)

"एकांत संगीत" के गीतों की प्रभावान्विति सशक्त है । बच्चन का मन अनुभूतियों का केन्द्र है । श्यामा को मृत्यु से हारा हुआ अकेलापन बार बार आहत स्वर में रो उठता है, जीवन की निराशा, असफलता और भाग्यहीनता का क्रन्दन करता है । अकेलापन का यह स्वर निम्नलिखित पंक्तियों में गूँज उठता है -

कितना अकेला आज मैं ।
संघर्ष में टूटा हुआ,
दुर्भाग्य से लूटा हुआ,
परिवार से छूटा हुआ, कितना अकेला आज मैं ।"[1]

"एकांत संगीत" काव्य-प्रेम के अवसाद के घनत्व को मुखर करता है । बच्चन का हर्षविषाद न तो आदर्श का छल ओढता है और न धरती-आकाश के बीच झूलता, परिवेश के बीच और अपने-अपने रूप में बहुत उघडा हुआ होता है । "एकांत संगीत" के गीत इस बात को स्पष्ट करते हैं । इस रचना में तपनों के टूट जाने और प्यास के अतृप्त रह जाने से उत्पन्न अकेलापन, पराजय, उदासी आदि अभिव्यक्त हुए हैं । एक ओर तो कवि की यह अदम्य प्यास और स्वप्न कि वे अनियंत्रित भाव से "प्रिया" को प्यार करें और उसे पाकर सारे संसार को पा ले -

"जब करूँ मैं प्यार,
हो न मुझपर कुछ नियंत्रण
कुछ न सीमा, कुछ न बंधन
तब करूँ जब प्राण प्राणों से करें अभिसार ।[2]

---

1. बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 126
2. बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 71

पत्नी की मृत्यु से विकल, भाग्य के चक्र से कुचले, निराशावादी-क्षणवादी-पराजयवादी बच्चन को इसमें साकार रूप में देखा जा सकता है ।[1] "एकांत संगीत" में बच्चन की श्रेष्ठ गीतियाँ संकलित हैं । ये गीत मधुर भावों से भरे हुए हैं । विप्रलंभ श्रृंगार और करुण रस का अद्भुत परिपाक इनकी गीतियों में हुआ है -

मेरे पूजन, आराधन को
मेरे संपूर्ण समर्पण को,
जब मेरी कमज़ोरी कह कर मेरा पूजित पाषाण हँसा,
तब रोक न पाया मैं आँसू ।"[2]

बच्चन ने विशेष रूप से पीड़ा को ही गीतों का आधार माना है या कुछ आवेगपूर्ण भावनाओं की अभिव्यक्ति की ही । "एकांत संगीत" के गीत एक आत्मकेन्द्रित व्यक्ति के कठिन विषाद के तीव्र हाहाकार को ध्वनित प्रतिध्वनित करते हैं -

"ओ अँधेरी से अँधेरी रात !
आज गम इतना हृदय में,
आज तम इतना हृदय में
छिप गया है चाँद-तारों का चमकता-गात !"[3]

---

1. अंधकार से मैं घिर जाता,
   रोना ही रोना बस भाता,
   ध्यान मुझे जब-जब यह आता,
   दूर हृदय से कितने मेरे
   मेरे जो सबसे प्यारे भी ।
   नभ में दूर दूर तारे भी ।(बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 34)
2. बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 63
3. वही पृ: 87

यहाँ उनके मन रूपी आकाश में दु:ख रूपी अँधकार फैला हुआ है । उनका जीवन पहले प्रकाशमान था । आज चाँद-तारों का चमकता गात अर्थात् सुख छिप गया है ।

मानसिक तनावों एवं भावों की तीव्रता का चित्रण "एकांत संगीत" के गीतों में मिलता है ।[1] "एकांत संगीत" में कवि प्रकृति की ओर से भी विमुख होकर केवल अपनी वेदना में केन्द्रित हो जाते हैं । भावनाओं की गहराई तथा शिल्प की सादगी ने इसके प्रभाव को घनीभूत बना दिया है । कवि का व्यक्तित्व कितना दमित और प्रताडित है, इसका प्रमाण "एकांत संगीत" की निराशा और विफलता भरी रचनाओं में प्राप्त है । जीवन की क्षण भंगुरता इसके गीत में परिलक्षित होती है -

नियति ने लौह चक्र उठाया ।
सबका नाश हुआ ।
अगणित ग्रह-नक्षत्र जगन के
रूप उडे, कुछ धुवाँ-धुवाँ-सा अंबर में छाया !
तुम्हारा लौह चक्र आया ।[2]

"एकांत संगीत" के गीत गहरी कचोट का अनुभव कराते हैं । बच्चन के गीतों का राग मूलत: करुण और वेदनात्मक हैं : करुण राग की स्वस्थ जलन ही उन्हें अच्छी लगती है ।

---

1. मुझको गए तुम छोडकर
   सब स्वप्न मेरा तोडकर
   अब फाड आँखें देखता अपना बृहद संसार में
   कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं । बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 48
2. वही पृ: 96

"जीवन में शेष विषाद रहा ।
कुछ टूटे सपनों की बस्ती,
मिटनेवाली यह भी हस्ती,
अवसाद बसा जिस खंडहर में
क्या उसमें हो उन्माद रहा ।
जीवन में शेष विषाद रहा ।"[1]

इस प्रकार निराशा और अपराजेय जिजीविषा के बीच, नियति के विरुद्ध, समाज के विरुद्ध अग्निपथ के ओजस्वी कवि प्रतिपल आगे ही बढने की शपथ ली, शाश्वत मानव के सफल-विफल महासंघर्ष को सांस्कृतिक, सामाजिक राजनीतिक एवं आर्थिक आवरण से मुक्त, उसके मूल रूप में सफलतापूर्वक व्यक्त करते हैं -

"यह महान दृश्य है -
चल रहा मनुष्य है
अश्रु-स्वेद-रक्त से लथ पथ,
लथ पथ, लथ पथ ।"[2]

सहज,-स्वाभाविकता बच्चन के गीतों की विशिष्टता है । विरह की बांसुरी की यह तान कितनी आँख नहीं भिगोयेंगी ?

"मैं भूला-भूला सा जग में ।
अगणित पंथी हैं इस पथ पर,
है किंतु न परिचित, एक नज़र,
अचरज है मैं एकाकी हूँ, जग के इस भीड-भरे जग में
मैं भूला-भूला सा जग में ।"[3]

---

1. बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 104
2. वही - पृ: 99
3. बच्चन-एकांत संगीत- पृ: 75

आत्मानुभूति की सघनता

प्रेम की वियोगजन्य पीडा, उदासी, टूटन, असंतोष आदि इस संग्रह में मुखर हुए हैं । बच्चन का प्रेम प्रत्यर्थ है । इसलिए उनकी व्यथा बहुत मूर्त और स्पष्ट है । यह रचना प्रभाव में तीव्र और मर्मस्पर्शी है । इसमें आत्मानुभूति की सघनता है ।

डॉ.नगेन्द्र के शब्दों में "निशा निमंत्रण" और "एकांत संगीत" का रचना काल बच्चन केलिए आत्मसाक्षात्कार का समय है । इन कविताओं में भाग्य-चक्र के नीचे कुचले हुए मानव के चीत्कार और ललकार दोनों के मिले जुले स्वर स्पष्ट सुनाई देते हैं ।"[1]

शब्द की समाहार-शक्ति तथा मुहावरों के प्रयोग एवं भाषा-ऋजुता के बल पर बच्चन का काव्य पाठक को आकर्षित करता है । "एकांत संगीत" के कुछ गीतों में निराश व्यक्ति को शक्ति के स्वर-संदेश में पहली बार भाषागत ओजगुण आया है । बच्चन ने भाषा की मृदुता, तरलता, सरलता, स्वाभाविक प्रवाहमयता को नये ढंग से उभारा है ।

खोया सभी विश्वास है,
भूला सभी उल्लास है,
कुछ खोजती हर सांस है,
कितना अकेला आज मैं ।[2]

---

1. डॉ.नगेन्द्र - आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ - पृ: 85
2. बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 126

प्रेम के क्षेत्र में ही नहीं, अन्य क्षेत्रों में मिलनेवाली पराजय तथा असफलताओं ने भी रोमांस के प्रति कवि की आसक्ति को पल्लवित किया है । बच्चन ने अपनी रचनाओं में स्थान स्थान पर उसे स्वीकार किया है -

व्यर्थ गया क्या जीवन मेरा !
प्यासी आँखें, भूखी बाहें
अंग अंग को अगणित चाहें
और काल के गाल समाता जाता है प्रतिक्षण तन मेरा !
व्यर्थ गया क्या जीवन मेरा !¹

बच्चन की भाषा का मुख्य गुण प्रत्यक्षता और सरलता है । फिर भी छायावाद की लाक्षणिकता एकांत संगीत के गीतों में कहीं कहीं दिखलाई पडती है -

आशीष हथेली में भर कर ।²

यद्यपि कवि की निराशा इस गीत संग्रह में मुख्यत: दिखाई पडती है फिर भी कहीं कहीं आशा की किरणें भी फूट पडती हैं ।

"सुख जहाँ विजित होने में है,
अपना सब कुछ खोने में है
मैं हारा भी जीता हो हूँ जग के ऐसे समरांगण में
है हार नहीं यह जीवन में ।³

निष्कर्षत: यही कहा जा सकता है कि "एकांत संगीत" विधुर बच्चन के हृदय की उद्गार है । "निशा निमंत्रण" में उनके साथ एक कल्पित साथी था ।

---

1. बच्चन - एकांत संगीत - पृ: 32
2. वही पृ: 30
3. वही पृ: 64

"एकांत संगीत" में आकर वे अन्तर्मुखी होकर अपने विरह दु:ख को वाणी देने का प्रयास करते लगते हैं ।

आकुल अंतर

"निशा निमंत्रण", "एकांत संगीत" और आकुल अंतर" को इकाई जीवन के गहनांधकार में पैठने, उससे संघर्ष करने और उससे बाहर निकलने की भाव-यात्रा है । "निशा-निमंत्रण", और "एकांत संगीत" से बचे क्रन्दन को बच्चन ने "आकुल अंतर" में व्यक्त किया है । इस संग्रह के गीतों में कवि की प्रणयासक्ति में दु:ख की एकांत, समत्व भावना अधिक है ।

स्वयं बच्चन के कथनानुसार "निशा-निमंत्रण" में जिस अवसाद की छाया उतरी थी, उसके अंतिम और सघनतम रूप को देखने केलिए मैं "एकांत संगीत" सुनता हुआ "आकुल अंतर" की गुहा में पैठ गया । वहाँ अंधकार सघनतम है, वहीं प्रकाश की पहली किरण है ।[1] इसमें मानवीय पीडा से जूझने, उबारने, उभरने और आस्था के साथ दृढचरणों से बढने और संवरने की अविस्मरणीय और विस्मयकारी शक्ति संजोयी है ।

"बच्चन जब इलाहाबाद यूनिवेर्सिटी में लेक्चरेर थे तब उनका परिचय आइरिश नामक एक लडकी से हुआ जो एल.टी. करने केलिए इलाहाबाद आई थी । आइरिश ने प्रथम दृष्टि में बच्चन को आकर्षित किया । आइरिश के प्रति उनके आकर्षण ने उनके अंदर सगात्मकता का जो दीप जलाया था, उसकी लौ को भ्रम, भय, संशय, संदेहों की आँधी के झकोरे बराबर कँपाते रहे थे । "आकुल अंतर- निश्चय अंधकार से ऊपर उठने का संकेत देता है, पर प्रकाश के प्रति किसी

---

1. बच्चन - आकुल अंतर - अपने पाठकों से - पृ: 9

ललक का नहीं, वस्तुत: उसके प्रति एक उदासीनता, एक निरपेक्षता का भाव है ।"[1]

"मैं पुलक उठता न सुख से,
दु:ख से तो क्षुब्ध होता,
इस तरह निर्लिप्त होना
लक्ष्य तो मेरा नहीं था ।
हाय, क्या जीवन यही था ।"[2]

"आकुल अंतर" का मूल स्वर शायद इसी उदासीनता, निर्लिप्तता का है और उसके ऊपर उस धैर्य, साहस, शौर्य का कि अब जो कुछ आए, सुख, दु:ख, हर्ष, विषाद, उसे बिना किसी शिकायत के सहना है, सहना चाहिए । "आकुल अंतर" में करुण-रस का ~~प्रिय~~ परिपाक हुआ है । यहाँ शोकजनित दशायें तीव्र होती हैं क्योंकि इसमें मिलन की आशा नहीं रहती । यहाँ जल-जल कर मर जाने की बात होती है -

"इनकी तुलना करने को कुछ
देख न, हे मन, अपने अंदर,
वहाँ चिता, चिंता की जलती,
जलता है तू शव-सा बनकर,
यहाँ प्रणय की होली में है
खेल जलाना या जल जाना ।
यह दीपक है, यह परवाना ।"[3]

---

1. बच्चन - नीड का निर्माण फिर - पृ: 202.
2. बच्चन - आकुल अंतर - पृ: 50.
3. वही पृ: 81.

किसी के आगे हाथ पसारे बिना, बिना किसी आश्रय ढूँढे, बच्चन जीवन के आँधी-तूफान में से अपना मार्ग स्वयं बनाने में लगे रहे । वह सत्य की खोज में अकेले जुटे रहे तथा जीवन और दुनिया का नया अर्थ पाने केलिए बेचैन रहे -

गहनांधकार में पाँव धार
युग नयन फाड, युग कर पसार
उठ-उठ, गिर गिर कर बार-बार
मैं खोज रहा हूँ अपना पथ
अपनी शंका का समाधान ?
मैं जीवन की शंका महान ।[1]

विकलता

"आकुल अंतर" में कवि स्पष्ट करते हैं कि "सागर की लहर" में, अम्बर की वायु में, कलिका की गन्ध में, मधुवन के पुष्प में, कोकिल की कूक में, गायक के गान में, बादल के राग में तथा कवि के गीत में उनकी विकलता ही मुखरित होती है ।[2] लेकिन उनके एकाकीपन को भी संसार के लोग समाप्त कर रहे हैं । अत: वे अपने हृदय को पाषाण बन जाने केलिए कहते हैं -

किन्तु दिल की आग का
संसार में उपहास कब तक ?
अग्नि को अन्दर छिपाकर
हे हृदय, पाषाण बन जा !
जान कर अनजान बन जा ।[3]

---

1. बच्चन - आकुल अंतर - पृ: 105
2. वही - पृ: 19-20
3. वही - पृ: 25

अपने अखण्ड साहस, अटूट और अजेय ओज एवं जोवन-मंत्र केलिए "आकुल अंतर" के गोत प्रशंतनोय हैं । इसमें कवि ने संघर्ष के शिखर पर चढकर तोव्रतापूर्ण प्रबल-प्रचंड जल-ज्वालामय गान किया । "आकुल अंतर" मानवोय पोडा से जूझने, उबरने, उभरने और आस्था के साथ दृढ चरणों से बढने और संबरने की अविस्मरणोय कृति है ।[1]

जग, जोवन, काल, नियति, प्रेम, प्रकृति व संघर्ष के प्रति कवि अब "निशा निमंत्रण" और "एकांत संगोत" को तरह भावुकता तथा आत्मकेन्द्रिता से ग्रस्त न होकर जोवन के प्रति अधिक शंकालु हैं । बच्चन ने इस संग्रह में जग-जोवन के यथार्थ और सत्य को मार्मिक स्वर दिया है -

"टूट पडे मधु ऋतु मधुवन में
कल हो तो क्या मेरा है,
जोवन बोत गया सब मेरा
जोने को तैयारो में ।"[2]

जोने को प्रेरणा

जोवन के प्रणय-संघर्ष और विषाद से टूटे हुए व्यक्ति को इन गोतों को पढकर हर हाल में संघर्ष करते हुए जोने का संदेश मिलता है -

"तन में ताकत हो तो आओ !
पथ पर पडो हुई चट्टानें,
दृढतर हैं वोरों को आनें,
पहले सो अब कठिन कहाँ है -
होकर एक लगाओ ।

---

1. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - पृ: 128
2. बच्चन - आकुल अंतर - पृ: 38

तन में ताकत हो तो आओ ।"[1]

इस संग्रह के कुछ गीतों में कोमलकान्त पदावली का आकलन हुआ है -

झंझा-झनझन, घन-घन गर्जन,
कोकिल कूजन, केकी क्रन्दन,
अखबारी दुनिया की हलचल,
संग्राम संधि, दंगा-फसाद ।[2]

कवि को प्रतीत होता है कि उनका बीता जीवन, बीती उन्माद की घडियाँ फिर वापस आ सकती हैं । समय सब कुछ संभव बना सकता है । वे स्वयं जाँचने-परखने की कोशिश करते हुए अपने आपपूछते हैं -

बीते सुख की याद सताती ?
अभी बहुत कोमल है छाती,
दुःख तो वह है जिसे सहन कर
पत्थर की छाती हो जाए ।
तू ने अभी नहीं दुःख पाए ।[3]

तभी ऐसा महसूस होता है कि यह दशा किसी परिवर्तन का पूर्वाभास है । ~~दशा किसी परिवर्तन का पूर्वाभास है~~ यहाँ यथार्थ जीवन को अपनाने, उसे उसी रूप में जी पाने की इच्छा प्रकट होती है ।"[4]

---

1. बच्चन - आकुल अन्तर - पृ: 106
2. वही - पृ: 55
3. वही - पृ: 48
4. रस की कमी नहीं है जग में,
   बहता नहीं, मिलेगा मग में,
   लोहे के पंजे से जीवन,
   की यह लता दबाओ ।
   तन में ताप हो तो आओ ।

(बच्चन - आकुल अंतर - पृ: 105)

कवि को अपना एकाकीपन, स्वयं गुनाह का कारण लगने लगता है । निम्नलिखित पंक्तियाँ इस मनोदशा को व्यक्त करती हैं । कवि को निराशा के अंधकार से निकल, जीवन की चहल-पहल के बीच आने को बाध्य करती हैं । कवि को लगता है कि पीडा की सघनता ही पीडा-मुक्ति का कारण है, इसलिए जग-जीवन के सत्य को मार्मिक स्वर प्रदान करते हैं -

"तू अपने में ही हुआ लीन,
बस इसीलिए तू दृष्टिहीन,
इससे ही एकाकी-मलीन,
इससे ही जीवन-ज्योति क्षीण,
अपने से बाहर निकल देख
है खडा विश्व बाँहें पसार ।
तू एकाकी तू गुनहगार ।[1]

निष्कर्ष

संक्षेप में "निशा निमंत्रण", "एकांत संगीत" और "आकुल अंतर" के गीतों में जीवन के दु:ख के दुर्दमनीय स्वर गूँज उठते हैं । बच्चन के इन गीतों में जीवन में भोगे हुए दु:ख की महत्ता है, इसलिए वे सीधे मर्म को कुरेदते हैं । "निशा-निमंत्रण", "एकांत संगीत" और "आकुल अन्तर" में बच्चन की अवसादजन्य मन:स्थितियों का साक्षात्कार होता है । इन कृतियों में उन्होंने शोक गीतों की अत्यंत परिष्कृत भूमि प्रस्तुत की है । इन संग्रहों की मुख्य प्रवृत्ति अवसाद उनके शीर्षक से ही प्रकट होता है ।

---

1. बच्चन - आकुल अंतर - पृ: 119

भावों का तारल्य, भाषा की सरलता, कल्पना का सौकुमार्य एवं संगीत का माधुर्य इनके गीतों में रक्षित हैं । इनमें विधुर बच्चन की अन्तर्मुखी वृत्ति, वैयक्तिक चेतना, और मधुर मसृण भावुकता अभिव्यक्त हुई हैं । "आकुल अंतर" के बाद बच्चन के काव्य जीवन में नया मोड आता है । "आकुल अंतर" के धुँधले किंतु निश्चित प्रकाश की ओर बढते हुए बच्चन "आकुल अंतर" से निकलकर "सतरंगिनी" के आँगन में पहुँच गये ।

चौथा अध्याय

बच्चन के काव्य में प्रतिबिंबित सामाजिक, राजनैतिक, वातावरण

कवि अपने युग का प्रतिनिधि होता है । उसके कृतित्व में उसका युग प्रतिबिंबित होता है । प्रत्येक साहित्य का इतिहास इसका पात्र है ।

बच्चन ने जब साहित्य-जगत में पदार्पण किया उस समय भारतीय राजनीति हलचल के दौर से गुज़र रही थी । अंग्रेज़ों ने दमन-नीति अपनायी थी । सन् 1930 में कवि बच्चन एम.ए.प्रीवियस की परीक्षा उत्तीर्ण हुए, पर पारिवारिक, आर्थिक तथा राजनैतिक हलचलों के कारण कवि ने पढाई छोड दी और बेघर पर चर्खा चलाने, सभा-जुलूसों में जाने और नारे लगाने लगे ।

बच्चन जागरूक विचारक एवं प्रतिभासंपन्न कलाकार हैं । इसलिए राजनैतिक वातावरण के प्रत्यक्ष तत्व से वे आँख मूँद नहीं सके । स्वयं कवि ने मान लिया है कि "रचनाकार का क्षेत्र इतना बडा है कि उसमें राजनीति भी आ सकती है । राजनीति ने आज हमारे जीवन के विविध क्षेत्रों को प्रभावित कर रखा है । आज की राष्ट्रीयता राष्ट्र के यथार्थ जीवन से देश को परिचित कराती है और कमियों को दूर करने का उपाय बतलाती है । "आज की राष्ट्रीयता है समग्र देश की सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक, नैतिक स्थितियों का वर्णन और इनके स्तर ऊँचा कर विश्व के सम्मुख एक आदर्श राष्ट्र का उदाहरण प्रस्तुत करना और तब इस दृष्टि से आज के जीवन को देखा जाता है ।"[1]

---

1. चन्द्र देव सिंह - बच्चन : एक पहेली - पृ: 116.

बच्चन ने वैयक्तिक सुख दु:ख को होलम्बे काल तक काव्य का विषय मान लिया । समय बदलने पर उन्होंने अपने काव्य का विषय भी बदल दिया । इसलिए कवि ने बडी ईमानदारी के साथ स्पष्ट कर दिया था ।

"कल सुधारूँगा हुई संसार में जो भूल
कल उठाऊँगा भुजा अन्याय के प्रतिकूल ।"[1]

सचमुच बच्चन की कल की कविता ने यह सिद्ध कर दिया कि समय आने पर यह कवि अपने कर्त्तव्य से चूकेगा नहीं । बंगाल के दुर्भिक्ष और गाँधी की हत्या पर लिखी रचनायें कवि की युग-चेतना के प्रति आस्था को पूर्ण रूप से प्रकट करती हैं । राष्ट्रीय काव्य में समष्टि की भावना निहित होती है । राष्ट्रीय काव्य का क्षेत्र व्यापक है । बंगाल के भीषण अकाल को विषय बनाकर बच्चन ने "बंगाल का काल" शीर्षक खंड काव्य लिखा । उसमें अकाल जन्य पीडा को बच्चन ने बडे प्रभावोत्पादक ढंग से व्यक्त किया है ।

1942 से तो बच्चन की कृतियों में सार्वजनिक भावना का दृष्टिकोण पर्याप्त विस्तृत होता गया है । "सतरंगिनी", "हलाहल", "बंगाल का काल", "सूत की माला", "खादी के फूल" आदि रचनाओं में राष्ट्र-प्रेम, विश्व-प्रेम एवं मानव-प्रेम जैसे उदात्त विषयों को ग्रहण किया गया है । "इन कविताओं में जहाँ कवि संवेदनशील शाश्वत मानव की सफलता एवं विफलता के संघर्ष को लेकर चला है, जहाँ उसका उद्देश्य उसे धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक बंधनों से मुक्त करने का है, वहाँ कवितायें नि:संदेह उच्च कोटि की बन पडी हैं ।"[2] इन कविताओं में कवि अपने "स्व" से "पर" की ओर उन्मुख हुए हैं और भौतिक जगत की उपलब्धियों, झंझावातों और समस्याओं के प्रति

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 153.
2. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 140.

जागरूक होकर काव्य-सृजन की ओर उन्मुख हुए हैं । इस दृष्टि से "सतरंगिनी" की कविताओं को लिया जा सकता है ।

सतरंगिनी

आशा की नयी किरण

"सतरंगिनी" में पहली बार बाहर के विश्व में फैले जीवन के अपरिमित सौन्दर्य को कवि ने खुली आँखों से देखा है । निराशा को दूर हटा कर सात रंगोंवाली आशा की किरणों का साक्षात्कार किया है -

"तूफान, वर्षा, बाढ, जब आगे खुला यम दाढ जब,
मुस्कान तेरी बन गई, विश्वास, आशा दायिनी सतरंगिनी ।"[1]

इसकी कवितायें कवि के स्वच्छ-हृदय की उपज हैं । "सतरंगिनी" आग से राग के संसार में पदार्पण का बोध कराती है । इस कृति के गीतों से प्रतीत होता है कि कवि निराशा के घने कोहरे को चीर कर किसी नव किरण-बाला का आह्वान करने केलिए गा रहे हैं । पुन: कवि को टूटी हुई प्याली लबालब भरी उनके ओंठों से छूने की है -

"हे अँधेरी रात पर दीया जलाना कब मना है"[2], "नीड का निर्माण फिर फिर नेह का आह्वान फिर फिर"[3] आदि गीतों में यथेष्ट कलात्मकता तथा एक निराश प्रेमी को आशावादिता का संगीत गूँज उठता है ।

निर्माण की आकांक्षा

"सतरंगिनी" से बच्चन के जीवन में कुछ स्थिरता दिखाई पडती है ।

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 7
2. वही - पृ: 62
3. वही - पृ: 105

डॉ.राम विलास शर्मा लिखते हैं - "पहले के निराशा और वेदना प्रधान गीतों की तुलना में यहाँ उत्साह, गति और प्रणय की उमंग हैं । व्यथा से घुल-घुल कर मरने के बदले निर्माण की आकांक्षा है । रास्ते के नुकीले काँटों को याद के साथ आगे बढ़ चलने की उत्कंठा है ।"[1] दु:ख और निराशा की कंटीली भूमि को पारकर कवि ने सतरंगिनी की रचना की है । यह प्रेम के आकर्षण एवं उसकी उपलब्धि का रंगीनी चित्रण करता है । प्रेम के समक्ष कवि पूर्णता आत्मसमर्पित दिखायी पडते हैं -

"तुम गा दो मेरा गान, अमर हो जाये" ।[2]

आरंभिक रचनाओं में कवि ने मानव को नियति का दास, दुर्बल और असहाय रूप में ही चित्रित किया है । लेकिन परिस्थिति के बदलने और जीवन-अनुभव में परिवर्तन आने से उनका अभावात्मक दर्शन क्रमश: भावात्मक होने लगा । फलत: वे मनुष्य की असीम क्षमताओं के प्रति आस्थावान हो उठते हैं । मनुष्य के देवत्व का साक्षात्कार करते हैं -

पहाड टूटकर गिरा,
प्रलय पयोद हो घिरा,
मनुष्य है कि देव है
कि मेरुदण्ड है तना ।
अजेय तू अभी बना ।[3]

इस रचना में कवि संसार के सतरंगे अस्तित्व को पहचानने की क्षमता रखते हैं ।

---

1. राम विलास शर्मा - संस्कृति और साहित्य - पृ: 18
2. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 138
3. - वही - पृ: 99

प्रथम बार आशा और आकांक्षा के स्वर झंकृत होते हैं ।

"सतरंगिनी" से बच्चन के काव्य-विकास का तीसरा मोड शुरू होता है । "पिछली तीन कृतियों में कवि का निराश, दु:खित और आश्रयहीन रूप दिखाई पडता है । "सतरंगिनी" में तो जीवन की संकट-स्थिति से बाहर होकर "मिलन यामिनी" के स्वप्न संजोने लगते हैं ।

"सतरंगिनी" एक ऐसी रचना है जिसमें कवि अपने अवसाद और विषाद से हटकर अपनी विजय का उद्घोष करते हैं । यहाँ पर "निर्माण", "जुगनू" आदि रचनाओं में उनका स्वर आस्था और निर्माण की ओर अग्रसर हुआ है । कवि कहते हैं कि मनुष्य का बनाया हुआ नीड यदि टूट जाये तो उसे दुबारा बनाने का हौसला भी मनुष्य को रखना चाहिए ।

"सतरंगिनी" में प्रेम का आमंत्रण, आकर्षण और उपलब्धि नये प्रकार से व्यक्त हुई है । प्रणय की दुर्निवार पुकार सुनने केलिए कवि बैठे हैं । "सतरंगिनी" का पाँचवाँ सप्तक सबसे अधिक आकर्षक, मधुर और कलापूर्ण है -

"मैं पुरानी यादगारों
से विदा भी ले न पाया
था कि तुमने ला नए ही
लोक में मुझको बसाया ।"[1]

प्रणयिनी के व्यक्तित्व की महत्ता

इसमें अपनी नवीन प्रणयिनी के व्यक्तित्व का विश्लेषण बच्चन ने अत्यंत भावपूर्ण भाषा में किया है -

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 133

"दो नयन जिनसे कि मैं
संसार का विस्तार देखूँ,
दो नयन जिनसे कि फिर मैं
विश्व का श्रृंगार देखूँ ।"[1]

"सतरंगिनी" कवि के अंदर में उद्भूत प्रणय का नवल ज्वार है ।

"दो नयन", "जादू", "मृग तृष्णा", "प्यार और संघर्ष", "नई झन्कार", "मुझे पुकार लो", "कौन तुम हो तुम गा लो", "जयमाला" शीर्षक गीतों में कवि को प्रणय-भावना पूरे आवेग के साथ मुखरित हुई हैं । इन गीतों को मादकता से अनेक पाठक और श्रोतागण विभोर होते हैं । यह कवि-जीवन के विषम से विषम काल में आशा और विश्वास को प्रदायिनी बन गई । इसमें बच्चन की प्रेमिका आइरिस की व्यंजना हुई है । वह तो वास्तव में उनकी जिजीविषा है ।

भाषा

"सतरंगिनी" की भाषा उर्दू-प्रधान है । ऐसा होने पर भी यह कविता-संग्रह हिन्दी का अभिन्न अंग लगता है । इसके गीतों में प्रतीक योजना अभिव्यक्ति की सहज भाव संप्रेषणीयता की दृष्टि से विशिष्ट है । उदाहरणस्वरूप "मयूरी", "नागिन" आदि रचनायें उल्लेखनीय है" ।

"मयूरी
नाच - मगन - मन नाच !
गगन में सावन घन छाये, न क्यों सुधि
साजन की आए,
मयूरी, आँगन, आँगन नाच !"[2]

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 110
2. वही - पृ: 53

यहाँ "मयूरो" पद मन की उल्लसित भावना का प्रतीक है । वस्तुतः "सतरंगिनो" अपने संपूर्ण गीतों के साथ मनुष्य की तरंगित गीतिमय भावना का प्रतीकात्मक प्रस्फुटन है । मयूरोवाला गीत सतरंगिनो का सर्वाधिक मार्मिक एवं सहृदय-हृदय-संवेद्य गीत है । पैरों में थिरक प्रेम की मीठी गुलाबी संवेदनायें हृदय में चांचल्य ला देती हैं । मयूरी माने आवेगमय आनन्दमय प्रेमासिक्त हृदय है जिस पर विश्व का सब कुछ न्योछावर है - प्रेम की गरिमा, उसका विराटत्व एवं उसका वैभव हृदय में उन्माद भर रहा है ।

मयूरो, उन्मन-उन्मन नाच । मयूरो झूम, छमाछन नाच ।[1]

शब्द एवं चित्र का बार बार प्रयोग के माध्यम से एक ऐसे सम्मोहक जाल की सृष्टि की गई है जिसमें प्रेमिका का हृदय एवं प्रेमी का इन्द्रधनुष मन ही अभिभूत नहीं है, पाठक भी इस वशीकरण से अभिभूत हैं । पाठक का हृदय भी मयूरी के मग्न हृदय की तरह नाचने लगता है । पाठक भाव विभोर बन जाते हैं ।

प्रतीकात्मकता

प्रतीकात्मक कविताओं में काव्य-वस्तु के स्थान पर काव्य-भाव की व्यंजना ही अधिक व्याप्त रहती है । बच्चन ने मयूरी के मग्न मन के हृदय नृत्य के ज़रिये आदर्श नारी का, परिणीता का वर्णन किया है । मयूर को नृत्य करते देख मयूरी का भी मन नाच उठा । उसका मदोन्मत्त मन प्रेमी के सान्निध्य के लिए व्याकुल हो उठता है । वह असंभव को संभव करना चाहती है । वह आत्मसमर्पण के लिए तड़पती है ।

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 54

"नागिन" एक प्रतीकात्मक कविता है । यह लंबी कविता विश्व विमोहक माया की प्रभावशाली अभिव्यंजना है । "सतरंगिनी" जीवन के दारुण दु:ख से ऊपर सुख की मधुर अभिव्यक्ति है ।

"तू मनमोहिनी रेखा-सी,
तू रूपवती रति रानी-सी,
तू मोहमयी उर्वशी सदृश,
तू मानमयी इन्द्राणी-सी ।[1]

सामान्यत: परमात्मा तक पहुँचने में माया बाधक बनती है । परन्तु कवि-जीवन में आई नागिन (आइरिस) परमात्मा (तेजो जो) के प्राप्ति-मार्ग में बाधक न होकर बराबर मार्ग से हटती रही" ।

सृजन की इन्द्रधनुषी भावना

पचास गीतों का यह संकलन बच्चन के जीवन की सुखद अनुभूति के साथ आशा, उल्लास, आनंद और सृजन की इंद्रधनुषी भावना को उच्छ्वासमयी शैली में व्यक्त करता है । इस संकलन के गीतों को सात खंडों में विभाजित किया गया है । दूसरे खंड की "अंधेरे का दीपक", "यात्रा" और "पथ की पहचान" जडता के विरुद्ध जीवन की अमर शक्ति तथा विजय-यात्रा के उद्गीत हैं । जीवन-पथ में आनेवाली कुछ बाधायें कभी कभी व्यक्ति-चेतना, प्रेरक बन जाती हैं, किन्तु जो शूल मार्ग को अवरुद्ध करती हैं उन्हें दूर फेंकने की क्षमता भी व्यक्ति में होनी चाहिए ।

साँस चलती है तुझे
चलना पडेगा ही मुसाफिर

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 37

एक कोने में हृदय के
आग तेरे जग रही है ।
देखने को मग तुझे ।[1]

"कामना" शीर्षक कविता अतीत के विषाद से मुक्त हो आशावादी सरगम लिए हुए हैं ।

तीसरे खंड की कवितायें महानाश की छाती पर नव निर्माण करने की दुर्निवार इच्छा करनेवाले व्यक्ति का चित्र अंकित करती हैं । जीवन की संपूर्ण परिभाषा आशा और उमंग में समाई हुई है ।

तुम यदि तू ने आशा छोडो
तो अपनी परिभाषा छोडो
तुझे मिली थी यह अक्षरों की केवल एक निशानी
मानो, देख कर मनमानी ।[2]

दूसरी शादी के बाद बच्चन के जीवन में जो परिवर्तन आया उसका संकेत "सतरंगिनी" में हुआ है । "नीड का निर्माण फिर फिर" शीर्षक कविता में बच्चन के स्वर में साहस, संकल्प और आत्था का आलोक दिखाई पडता है यह कविता निराशा से आशा की ओर गमन, उजडकर बसने की लालसा का नशा पाठकों में उत्पन्न करती है ।

"नाश के दुःख से कभी
दबता नहीं निर्माण का सुख
प्रलय की निस्तब्धता - से
सृष्टि का नव-गान फिर-फिर ।"[3]

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 73.
2. वही - पृ: 104
3. वही - पृ: - 108

चौथे खंड के गीत समीक्षा के विषय न होकर पढने और गुनगुनाने के गीत हैं ।

झंझा के गायक

बच्चन प्रणय के ही गायक नहीं, वरन् झंझा के भी गायक हैं -

"तुम करोगी आज मेरे
प्राण की पूरी समीक्षा
तुम करोगी आज मेरे
धैर्य की पूरी परीक्षा
आज फिर मुझको पडेगी
शक्तियाँ बिखरी सँजोयी ।
अँखमिचौनी आज फिर तुम
खेलने, आई, सलोनी ।"[1]

"वैयक्तिक भावना-धारा की आधार भूमि होती है भौतिक अस्तित्व की स्वीकृति । इसीलिए इसमें आशंका और संदेह का विशेष योग होता है । वैयक्तिक कविता मानव-मुक्ति की कविता होती है, इसे न तो कोई बन्धन स्वीकार होता है, न नियम । फलस्वरूप आत्मिक अभिव्यक्तिकामी" रचनाकार किसी सिद्धान्त का सहारा न ढूँढ कर अपनी स्थितियों का ही प्रकटीकरण करता है ।"[2] इस प्रसंग में बच्चन गा उठते हैं -

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 117
2. चन्द्र देव सिंह - बच्चन एक पहेली - पृ: 77

काल सागर में न क्षण-कण,
ये कहीं खो जायँ
आदि होते ही न इनका,
अंत भी हो जाय ;
समय दुहराता नहीं यह
स्नेह का उपहार,
सुमुखि, ये अभिसार के पल,
चल करें अभिसार ।"[1]

"पंचम रंग के "जयमाल" और "लौटा लाओ" में कवि अग्निपथ पर आरूढ हो, चिरतृषित अधरों पर सुधामयी एक बूँद चाहते हुए भूतकालीन भूलों को भविष्य में सुधारने की बात करते हुए वर्तमान में अभिसार के पलों को निर्बाध भोगने की इच्छा व्यक्त करते हैं ।"[2]

षष्ठ खंड की कविताओं में छोटे छोटे शब्दों में भावों को भर कर कवि ने गागर में सागर भर दिखाया है । यहाँ लघु छंदों में, नूतन वर्ष के हर्ष, जीवन-उन्मेष, प्रणय, पौरुष, स्नेह के गीत गाये गये हैं -

"नवल हृदय,
नवल दृष्टि
जीवन का नव भविष्य
जीवन की नवल सृष्टि ।"[3]

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 151
2. डॉ. श्रीमती सुधा बहन कनु भाई पटेल - बच्चन : जीवन और साहित्य - पृ: 87
3. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 159

सातवें खंड की रचनायें अभिव्यंजना में सक्षम और संगीतात्मक सिद्ध हुई हैं । "सतरंगिनी" के गीतों का सृजन व्यक्ति को नई सृजनात्मक आशा से अनुप्राणित है । इसमें आकर कवि प्रथम बार अपने बाह्य जीवन में फैले अपरिमित सौन्दर्य को आन्तरिक सौन्दर्य की अपेक्षा अधिक प्रमुखता देने लगे । "सतत् मानसिक उद्वेलन और संघर्ष के पश्चात् अन्ततः बच्चन जी ने अपने अवसाद पर नव-आशा की सतरंगिनी-रश्मियों का मोहक अवगुंठन डाल दिया है । उस आवृत करुण-मृदुलता की सम्मिलित छवि मनोहारी बन पड़ी है ।"[1] इस रचना में संकल्प और सृजनात्मक आशा की अशेष शक्ति इनको आगे की ओर ठेलती हुई प्रतीत होती है । तभी तो वे निराशा के घोर घने अंधकार में भी दीप्ति ढूँढने में सफल रहे हैं :-

मृत्यु-पथ पर भी बढ़ूँगा
मोद से यह गुनगुनाना
अंत यौवन, अंत जीवन का मरण क्या
दो नयन मेरी प्रतीक्षा में खड़े हैं ।[2]

"सतरंगिनी" के गीतों को दुःख के क्षणों में गाकर भी रस मिलता है और सुख के क्षणों में गाकर भी ।"[3]

---

1. रेणु मलहोत्रा - बच्चन का परवर्ती काव्य - एक मूल्यांकन - पृ: 16
2. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 174
3. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 69

प्रकृति- चित्रण

यहाँ उन्होंने प्रकृति के आधार पर मानवीय भावाभिव्यक्ति की है । कवि की कामना है कि जैसे शिशिर के अंत में वृक्ष के जीवन में पत्तों के द्वारा नवीन समृद्धि का संचार होता है, वैसा ही सार्थक जीवन में प्रिया का प्रवेश हो -

जिस तरह शिशिर रात में कंकाल तरु पर
फैलती पत्रावली सहसा विहंस कर
वृक्ष जीवन में अगर तुम इस तरह से
आ नहीं सकती, सहज हो तो न आओ ।
प्यार को संघर्ष मत सुन्दरि बनाओ ।[1]

हलाहल

प्रकाशन - क्रम की दृष्टि से "सतरंगिनी" के बाद "हलाहल" (1946) आता है । "हलाहल" का मूल स्वर टूटे हुए व्यक्ति-मन की विजय का स्वर है । यह रचना व्यक्तिवादी अस्तित्व की जय का स्वर है । "मधुकलश" का अमित अभि का निर्माण तथा, सर्वथा तेज "हलाहल" से ही बनता है । स्वयं कवि के अनुसार "जीवन के संपूर्ण नाट्य में से सृजन का अदम्य स्वर कैसे उभर आता है - यही "हलाहल" की प्रेरणा और भावभूमि है । मैं यह मानता हूँ कि मृत्यु की काली चट्टान पर ही जन्म का अंकुर फूटता है । महाकाव्य अंधकार में भी किरण के मेहंदी रचे हाथ झाँक जाते हैं । जीवन शाश्वत है और अनश्वर है,

---

1. बच्चन - सतरंगिनी - पृ: 120

वह सृजन को जीवन बनाए हुए हैं । मनुष्य को पराजय स्वीकार नहीं करनी है, संहार से, मृत्यु से । ..... मृत्यु की छाया में भी मनुष्य को जीना और गाना चाहिए ।"[1]

आस्था और अनास्था के स्वर

बच्चन ने ठीक ही लिखा है - "हलाहल का अमरत्व दार्शनिक के तर्कों पर नहीं, कलाकार के तर्कों पर आधारित है ।"[2] आस्था के स्वर उसमें प्राप्त होते हैं, परन्तु आनास्था के स्वरों को दबाने में नितांत असमर्थ रहे हैं । इस प्रकार आस्था, अनास्था का व्यक्ति-द्वन्द्व पर आधारित "हलाहल" स्तुत्य है, त्याज्य या वर्ज्य नहीं । कम-से-कम कवि ने विखंडित को सहेजने-समेटने का कुछ प्रयास किया ही है ।

"हलाहल" वेदना की बाँसुरी का एक और स्वर है जो भीतर पैठता है तो पैठता ही चला जाता है । "निशा निमंत्रण", "आकुल अंतर" और "एकांत संगीत" में बच्चन की अनास्था और अनस्थिरता की प्रबल वाणी मौजूद है । "हलाहल" में बच्चन जी ने अपने को पुनः पुरानी भूमियों की ओर लौटाया है । यह पुरानी भूमि थोडे बहुत संस्कारों के साथ लौटी है । यह संस्कार कवि के चिन्तनशील होने का प्रमाण है ।

---

1. बच्चन : व्यक्ति और कवि - सं-बाँकेविहारी भटनागर - पृ: 64
2. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 318

पौराणिक आधार

पौराणिक कथा के अनुसार भी समुद्र मन्थन में अमृत के साथ विष निकला था दोनों सहोदर हैं । इसीलिए "मधुकाव्य" के साथ बच्चन "हलाहल" की आवश्यकता भी समझ गए । बिना स्याह के सफेद का वैसा महत्व नहीं, तभी तो कहा है :

गरल पी भी मेरी आवाज़
अमरता का गाएगी गान,
इसे भी मैं देने के हेतु
इसे तुम्हारा मानूँगा एहसान ।[1]

"हलाहल" की महिमा व आवश्यकता है - तभी तो पीनेवाले का महत्व है । यह वही प्रसाद है जिससे मीरा तथा शिव को अमरत्व मिला । शिव की तरह पर - उपकारी और मीरा की तरह निर्लिप्त होकर पीनी होती है । मधुशाला के समान मेले में नहीं - अकेले में :-

"तुरा पीने को थी बाज़ार
हलाहल पीने को एकांत,
तुरा पीने को सौ मनुहार,
हलाहल पीने को मन शांत,
हलाहल पीने में भी साथ
किसी का चाहो, तो नादान,
अकेलापन है पहला घूँट
हलाहल का, लो इसको जान ।"[2]

---

1. बच्चन - हलाहल - पृ: 38
2. वही - पृ: 48

जीवन प्रकाश जोशी कहते हैं - "हलाहल" की व्यक्तिपरक अभिव्यंजना के पीछे मनुष्य की नियति है । आगे जग का क्रूर-विधान है । बीच में आकांक्षाओं के धुधकते अंगारे हैं ।"[1]

सन् 1936 में "बसुधा" में रहते हुए कवि ने लगभग 100 पद लिख डाले थे जिसकी एक पंक्ति "हमारी तुकबन्दी के हेतु बहुत होंगे लघु-लघु कृमि कीट[2], सच साबित हुई । सभी पद दीमक के द्वारा नष्ट हो गए । तदुपरांत 10 वर्ष के अंतराल में नए पुराने अनुभवों का संगम होने लगा । पहले केवल श्यामा की मृत्यु का प्रभाव "हलाहल" की प्रेरणा थी, बाद में माता सुरसती की मृत्यु का प्रभाव भी संचित हुआ । फलस्वरूप सन् 1946 में पूर्व कल्पना से कुछ भिन्न रूप में प्रकाशित हुआ ।

हलाहल जिन्दगी की कटुता तथा उसकी विकट परिस्थितियों का प्रतीक है । कवि हलाहल से भी अमृत पाने की आशा रखते हैं । दुःख से संसार का कोई प्राणी बच नहीं सकता । निरंतर संघर्ष के परिणामस्वरूप सुखामृत प्राप्त होगा ही । इसीलिए कवि स्वानुभव की बात कहते हैं -

मुझे आया है मधु का स्वाद
हलाहल पी लेने के बाद ।[3]

"हलाहल" में परमाणु की अपरिमित ऊर्जा की विराट् से होड एवं भारतीय दार्शनिक चिंतकों के अहम ब्रह्मास्मि के अस्तित्ववाद की प्रकाशमान भाव-धारणा अन्तःसलीला के समान प्रवाहमान है । मनुष्य की शक्ति अजेय है । कवि को दिन-रात इसी का अचरज ह रहता है कि कहाँ से बल तथा विश्वास पाकर मिट्टी का लघुकाय बबूला कंधों पर आकाश उठाए रहता है ।"[4]

---

1. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन: व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 140
2. बच्चन - हलाहल - भूमिका - पृ: 11
3. बच्चन - हलाहल - पृ: 50
4. वही - पृ. 99

बच्चन का कवित्वमय कार्यकलाप गतिशील है । उच्च मानवतावादी भावना, मानव के प्रति तीव्र अभिरुचि, प्रेममूलक भावनाओं और प्रेमानुभूति के चित्रण में निपुणता, यह सब बच्चन के कवित्व के विकास के प्रत्येक चरण पर अनुभवगोचर होते हैं । "हलाहल" की भाषा सरल और सरस है । यह जीवन के यथार्थ गरल का काव्य है । प्रतीकात्मक होते हुए भी यह रचना अभिधा-शैली संपन्न है ।

हलाहल जीवन में क्षय रूप
करेगा पल-पल जीवन क्षीण,
इसे, पर जीने की अनुभूति
बडी हो अद्भुत और नवीन ।[1]

हलाहल की सफलता

कवि इस बात को स्वीकार करते हैं "मरण से आरंभ करके मेरी कल्पना अमरता की ओर गई है।"[2] "कामू ने संपूर्ण मानव-व्यापारों को "एब्सर्ड" माना है और मृत्यु के नैराश्य का चित्रण किया है । किन्तु उसे भी यह मानना पडा कि यदि कोई तत्व ऐसा है जो समस्त एब्सर्डिटीस" के भीतर से अर्थ को जन्म दे सकता है, तो वह है कला । कला ही मानव-जीवन को सार्थकता और अभिप्राय प्रदान कर सकती है ।"[3] यही बात कवि ने "हलाहल" के माध्यम से व्यक्त की । "हलाहल" की सफलता, उसकी सहजता व सरलता एवं मनुष्य की सत्ता को जगत् के संदर्भ में स्थापना करने में है जो खडीबोली की अपने समान गुण-धर्मवाली काव्य-कृतियों में अपना पार्थक्य बनाए रखने में समर्थ है" ।[4]

---

1. बच्चन - हलाहल - पृ: 50
2. बच्चन - नए पुराने झरोखे - पृ: 133
3. बच्चन : बच्चन - व्यक्ति और कवि - सं. बांकेविहारी भटनागर - पृ:64
4. प्रो.कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन: व्यक्तित्व एवम् कृतित्व - पृ: 138

रूपक

कवि कहते हैं कि यह दुनिया विष-घट की तरह है । प्रत्येक वस्तु अपने मूल रूप में विषमय है । मधु और कहीं है तो वह नारी के अधरों में है । यहाँ संसार को विष-घट मानकर उसी के आधार पर नारी के अधरों की मधुरता को सार कहने से रूपक बना है -

जगत घट को विष से कर पूर्ण
किया जिन हाथों ने तैयार,
लगाया उनके मुख पर, नारि,
तुम्हारे अधरों का मधु सार ।[1]

रूपक के साथ साथ रूपकातिशयोक्ति में भी अप्रस्तुत-विधान हुआ है ।

हलाहल की उमड़ी है धार,
करूँगा मथकर इसको पार,
यहाँ जो भी आता है पास ।
उसे मिलता हूँ बाहु पसार ।[2]

पौराणिक गाथा के अनुसार समुद्र मंथन के समय थोड़ा-सा विष भी निकला था, जिसे देखकर देव और दानव दोनों भय भीत हो गए थे । यहाँ संसार-सागर से हलाहल की प्रचंड धारा निकली है । किन्तु कवि डरते नहीं । उनका दृढ संकल्प है कि वे इस हलाहल की धारा को मथ कर पार करेंगे । हलाहल उन तमाम विपत्तियों और विभीषिकाओं के लिए आता है जिन्हें इस संसार रूपी-सागर में रहते हुए कवि को भोगना पड़ा । इस हलाहल

---

1. बच्चन - हलाहल - पृ: 35
2. वही - पृ: 48

को मथ कर पार होने का आशय यह है कि कवि बडी बडी मुसीबतों के सामने भी घुटने टेकनेवाले नहीं हैं । वे विश्वास करते हैं कि वे इस हलाहल की धारा को साहसपूर्वक मथ कर पार कर जाएँगे ।

संगीतात्मकता

बच्चन के प्रत्येक शब्द में उनका अपना संगीत गूँज उठता है । पीडा, व्यथा, वेदना को करुण रागिनी से संयुक्त होकर कवि के संगीत ने गीतों को आकर्षक बनाया है । "हलाहल" के गीतों में शब्द और संगीत-भावना और अनुभूति एक ही तार में इस प्रकार आबद्ध हैं कि मानो संगीत अन्तः सलिला सरस्वती के समान फूट पडेगा । कहीं भी शब्द और संगीत में संघात नहीं उत्पन्न होता, परस्पर आबद्ध हुए गीतों को गति प्रदान करने में वह सहयोग देते दिखाई देते हैं ।

जन-जीवन में प्रवेश

"सतरंगिनी" और "हलाहल" के बाद कवि बच्चन आत्मगत समस्याओं से मुक्त होकर जन जीवन में प्रवेश करने लगते हैं । "बंगाल का काल", "सूत की माला", "खादी के फूल" आदि तीसरे प्रकार की रचनाओं में आ जाते हैं । इसमें कवि के राष्ट्रप्रेम को वाणी मिली है । बच्चन ने जीवन में बंगाल का काल, द्वितीय महायुद्ध, स्वतंत्रता-प्राप्ति, बापूजी की हत्या आदि का दृश्य देखा था । अतः इन घटनाओं का उनपर विशेष प्रभाव पडा है । ये तीन रचनायें उनकी बहिर्वृत्ति की परिचायक हैं ।

बंगाल का काल

"बंगाल का काल" में बच्चन अपनी निजी समस्याओं को भूलकर सामाजिक समस्या "बंगाल" के अकाल की ओर मुड़े हैं । यह बच्चन की पहली मुक्त छंदवाली रचना है ।[1] इसके माध्यम से कवि बंगाल के अकाल के गौरवान्वित पृष्ठों को पलटते हैं । यह संगठन की शक्ति एवं एकता के महत्व को प्रतिपादित करनेवाली रचना है । इसमें आत्म गौरव, क्रान्ति, आक्रोश, शौर्य, शक्ति आदि भावनाओं का समावेश हुआ है ।

युग-जीवन के संघर्षों से आन्दोलित होकर बच्चन ने "बंगाल का काल" में देश के संकट के स्वरों को पाठकों तक पहुँचाया है । इस कृति के द्वारा बच्चन के बंग-प्रेम, बंग-सेवा और बंग-प्रचार अत्यंत सरल रूप में व्यक्त हुए हैं । बच्चन बंगाल के दु:ख से अत्यंत दु:खी थे । "यह पूरी कविता, जो लगभग 1000 पंक्तियों में है करीब 36 घंटों के अनवरत परिश्रम से लिखी गई । सुबह बैठा तो न नाश्ते केलिए उठा, न दिन के खाने केलिए, न चाय केलिए, न रात के खाने केलिए । बारह बजे रात को दिमाग चक्कर खाने लगा । मैं थोडी देर को लेट गया पर नींद नहीं आ रही थी, सोचा - इससे तो

---

1. यह भी एक रहस्य की बात है कि बंगाल के प्रति जब मैं अपनी व्यग्रता और आवेग को वाणी देने लगा तो दस बारह बरस की आदत और अभ्यास के बावजूद छंदों की सारी कडियाँ तडककर टूट गईं । मैं मुक्त छंद में लिख रहा था । विषय नया था, उद्भावना नई थी, दृष्टिकोण नया था -
‖बच्चन - बंगाल का काल - तीसरे संस्करण की भूमिका - पृ: 10 ‖

अच्छा है बैठकर काम हो कर डालूँ । दूसरे दिन अपराह्न में जाकर मैंने रचना के नीचे हस्ताक्षर किए ।"[1] बच्चन ने बंगाल के काल का मार्मिक वर्णन किया है -

मगन हो मृत्यु नृत्य करती ।
नग्न हो मृत्यु नृत्य करती ।
देती परम तुष्टि को ताल,
पड गया बंगाल में काल,
भरो कंगालों से धरती -
भरो कंगालों से धरती ।[2]

बच्चन ने 'बंगाल का काल' में बंगाली जनता के प्रति अटूट श्रद्धा और सहानुभूति दिखलाई है -

वही बंगाल -
देख जिसे पुलकित नेत्रों से,
भरे कंठ से,
गद्गद् स्वर से,
कवि ने गाया राष्ट्रगान वह -
बंदे मातरम्,[3]

शोषितों के प्रति सहानुभूति तथा शोषकों को निंदा, क्रान्ति को भावना, शैली को सरलता आदि निम्नलिखित पंक्तियों में पाई जाती हैं ।

भूख भयानी भयावनी है,
अगणित पद, मुख, करवाली है,

---

1. बच्चन - बंगाल का काल - भूमिका - पृ: 10
2. वही - पृ: 22-23
3. वही - पृ: 24

बडे विशाल उदरवाली है ।
भूख धरा पर जब चलती है,
वह डगमग - डगमग हिलती है ।
वह अन्याय चबा जाती है,
अन्यायो को खा जाती है,
और निगल जाती है पल में
आततायियों का दु:शासन
हडप चुकी अब तक कितने ही
अत्याचारी सम्राटों के
छत्र, किरीट, दंड, सिंहासन ।[1]

संतप्त हृदय की वेदना, पीडित प्राणियों की पुकार की प्रतिध्वनि और भाषा की सरलता उनकी प्रगतिशील कविताओं की विशेषता है । "बंगाल का काल" भी तत्कालीन परिस्थिति जन्य संवेदना का काव्य है । मानव की भूख और आत्मा का संघर्ष है -

घोषित कर दो दिक दिगंत में
भूख नहीं है भीख चाहती,
भूख नहीं है भीख माँगती,
भीख माँगते केवल कादर,[2]

"बंगाल का काल" देश केलिए एक बहुत बडी समस्या था । पराधीन भारत का सचेतन साहित्यकार उससे आँखें बचाकर कैसे निकल जाता, यद्यपि

---

1. बच्चन - बंगाल का काल - पृ: 53
2. वही - पृ: 44

दु:ख के साथ लिखना पड रहा है कि चाहे देश को जगाने और जनता में पुनर्जागरण के शंख फूंकनेवाले अनेक भले हो हो - ये भी-पर - कम-से-कम हिन्दी काव्य को "बंगाल का काल" जैसे साधारण घटना लगा और दो एक छिट-पुट रचनाओं के कहीं कुछ नहीं लिखा गया ।[1]

"बंगाल का काल" में बच्चन ने मानव की दुर्बलता पर आक्रोश प्रकट किया है । बंगाल की भूखी और अलौकिक शक्ति में विश्वास करनेवाली जनता को जब कवि ने अन्न के अभाव में करवटें बदल बदल कर प्राण खोते देखा तो उसे अपनी पराधीनता पर कम, बंगाल की अकर्मण्य जनता की शक्तिहीनता पर अधिक दु:ख हुआ ।

बच्चन हिंसा में विश्वास रखते हैं । "बंगाल का काल" में कवि संतोष को घातक मानते हैं, ईश्वर का भरोसा और भुजबल का ही श्रेष्ठ मानते हैं -

मन से अब संतोष हटाओ,
असंतोष का नाद उठाओ,
करो क्रांति का नारा ऊंचा ।"[2]

"जो कवि सामयिक जीवन की जितनी ही महान् हलचलों के बीच गुज़रेगा और साथ ही जितना ही अनुभव प्रवण होगा, उसकी साहित्यिक संभावनायें उतनी ही विशाल होंगी ।"[3] उक्त कथन बंगाल का काल" के प्रसंग में सार्थक है । "भाव-प्रवण बच्चन का कवि देश-प्रेम, आत्म-गौरव, उत्सर्ग, आक्रोश, प्रतिशोध, उद्बोधन, कर्तव्य, क्रांति, आशा, विश्वास, आस्था, दृढता,

---

1. चन्द्रदेवसिंह - बच्चन : एक पहेली - पृ: 87
2. बच्चन - बंगाल का काल - पृ: 46
3. डॉ.नन्ददुलारे वाजपेय - आधुनिक साहित्य - पृ: 460

पौरुष, करुणा और आत्मानुवीक्षण जैसे गुणों से मंडित है तथा अनुभूति की गहराई तथा कथन की साफगोई उसमें चार चांद लगा देती है ।"[1]

"बंगाल का काल" शैली शिल्प के नवीन प्रयोग के होते हुए भी रिक्त है ।"[2] "बंगाल का काल" में छन्दहीन शैली में बंग-गौरव एवं उसकी दीनावस्था की तथ्योक्तियाँ हैं । "बंगाल का काल" सामयिक भावना को लेकर लिखी गयी कला कृति है, पर वह अपने वैभव से देश-काल की सीमाओं को लांघकर शाश्वत बन गई है । आज भी उसका महत्व है, कल भी उसका महत्व कम नहीं होगा । युग-युग तक वह मानव को जागृति का संदेश देती रहेगी और उसे अपने अधिकारों केलिए लडने मरने की प्रेरणा लेती रहेगी ।"[3]

"कविता का अंतिम प्रभाव व्यक्ति अथवा समाज पर कुछ संस्कार छोड जाता है । संस्कार बनानेवाले उपाय कष्टकर ही होते हैं । यह कविता का ही काम है कि आपको आनंद भी दे और आपके संस्कार भी बनाए । यह कविता केलिए ही शक्य है कि दु:खद से दु:खद परिस्थितियों से आनंद का रस खींच ले ।"[4] बच्चन का उपर्युक्त कथन "बंगाल का काल" में सार्थक सिद्ध हुआ है । उन्होंने सीधी, सरल और सपाट शैली में अपनी बातें कहकर साहित्य को जनता के निकट ला दिया है । "बंगाल का काल" में अव्यवस्था और आर्थिक असन्तुलन के प्रति अपनी खीझ उन्होंने व्यक्त की है ।

---

1. प्रो.कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व - पृ: 14
2. डॉ. नगेन्द्र - लोकप्रिय - बच्चन - सं.प्रो.दीनानाथ शरण - पृ: 104
3. डॉ. दशरथ राम - लोकप्रिय बच्चन - प्रो.दीनानाथ शरण - पृ: 80
4. बच्चन - बंगाल का काल - तीसरे संस्करण की भूमिका - पृ: 20

सूत की माला

"सूत की माला" में बापू के बलिदान से संबंधित 111 गीत हैं।
"सूत की माला" और "खादी के फूल" गाँधीजी की मृत्यु पर लिखे गये गीतों के संग्रह हैं। गाँधीजी के असामयिक तथा मार्मिक अंत ने कवि को झकझोर दिया। बच्चन का आन्तरिक संवेदनाओं का कवि तो पहले से ही लोक-जीवन और भौतिक जगत की ओर उन्मुख हो चुका था, उसमें महात्मजी का देहावसान। विश्व की इतनी बड़ी घटना पर मौन साध जाना "बच्चन" जैसे संवेदनशील कवि केलिए वश की बात नहीं थी। यद्यपि महात्मा जी की मृत्यु पर भी कवि की करुण मात्र रुदन या नियति का व्यंग्य भर नहीं, अपितु अनेक तर्कों से युक्त है जो उनकी भावुकता से अधिक चिन्तनशीलता का परिचायक है।"[1]

"सूत की माला" में क्रांतिकारी, मानवतावादी और देश-प्रेम का स्वर प्रतिध्वनित हुआ है। इस पर गाँधीवादी विचार-धारा छायी हुई है। यह काव्य-सृजन बहुत गरिमापूर्ण है। उनकी राय में गाँधीजी मनुष्यत्व का देवत्व तुल्य रूप है। उनकी हत्या से मानवता की हत्या हुई है। बापू के महान बलिदान से कवि-हृदय में यह पुण्य आशा जागृत होती है कि संभवत: इससे साम्प्रदायिकता का कालुष्य प्रक्षालित हो सकेगा। अत: एव वे प्रत्येक जन से याचना करते हैं -

> यदि साहस है तो हम लें हाथ मशालें,
> इस ज्वाला में हम, फिर उनको सुलगा ले ;
> कालिमा कुटू में उनको ऐसा बालें ;
> वह बदल जाय, पूरब से फटती पैर में।[2]

---

1. चन्द्रदेव सिंह - बच्चन: एक पहेली - पृ: 105.
2. बच्चन - सूत की माला - पृ: 105.

"सूत की माला" में कवि गाँधीजी के गौरव की श्रेष्ठता व्यक्त करते हुए बताते हैं :-

अवनी गौरव से अंकित हो नभ के लेखे,
क्या लिए देवताओं वे हो यश के ढेके,
अवतार स्वर्ग का हो पृथ्वी ने जाना है
पृथ्वी का अभ्युत्थान स्वर्ग भी तो देखे ।[1]

गाँधी संपूर्ण भारत के कण-कण में व्याप्त महामानव थे ।

वह सवा लाख से लडा अकेलो हिम्मत पर, वह लडा अहिंसा और सत्य की ताकत पर, वह पडा एक के हाथों से कैसे गिरकर, साम्राज्य ब्रिटिश को सेना जिससे हार गई ।[2]

बच्चन "सूत की माला" में युगात्मा के सम्मुख प्रणत होकर देश के संकट के स्वरों से प्रज्ज्वलित राष्ट्र-प्रेम के सुनहले दीपों से लोकपुरुष की आरती उतारने में चरितार्थता का अनुभव करते हैं । सभी गीत सरल भाषा और मार्मिक भावों को लिए हुए हैं । उसमें बच्चन ने अपनी वेदना व्यक्त करते हुए लिखा है -

है दिवस एक सौ आठ आज तक बीते
जब से बापू के प्राण उडे अंबर में
जब से मेरी लेखनी आज तक रोई
गीतों के छंदों
में, पद-अक्षर
स्वरों में ।[3]

---

1. बच्चन : सूत की माला - पृ: 146
2. वही पृ: 28
3. वही पृ: 110

खादी के फूल

इसमें एक सौ आठ गीत हैं । ये सारे गीत बच्चन के लिखे नहीं है, पंत के भी कुछ गीत इनमें हैं । दोनों के गीतों में गांधीजी के महान गुणों का प्रतिपादन है । बच्चन ने गांधी का गुण गान यों किया है -

हे भावी मानवता के आदर्श एक असमर्थ
समझने में तुमको वर्तमान,
वर्ना सच्चाई और अहिंसा की प्रतिमा बह जाती
दुनियाँ से होकर लोहू लुहान ।
जो सत्यं, शिवं, सुन्दर, सुचितर होता है,
दुनिया रहती उसके प्रति अंधी अजान,
वह उसे देखती, उसके प्रति नत शिर होती जब कोई
कवि करता उसको आँखें प्रदान ।[1]

यहाँ बच्चन के बारे में प्रो.दीनानाथ शरण जी की पंक्तियाँ उद्धृत करना समीचीन होगा -

नये रूप-रंगों में सजकर तरल-सुघड बन जाना,
सिखलाया बच्चन ने हिन्दी को हिन्दी बन जाना,
बिना छिपाये कहना अपने सहज मनोभावों को
सीधा सरल बोलना हिन्दी ने बच्चन से पाया ।
हिन्दी कविता को जनता तक बच्चन ने पहुँचाया ।[2]

---

1. बच्चन - खादी के फूल - पृ: 229
2. दीनानाथ शरण - रसवंती - सं.प्रेमानारायण टंडन - पृ: 49

"व्यक्ति मन की ऐसी कौन सी अनुभूति है जो बच्चन ने नहीं लिखी - पालने से पलँग तक, पनघट से मरघट तक, आंगन से चौराहे तक, एकांत से भीड तक, जहाँ तक जितना कुछ जीवन है, वह सब बच्चन की कविता है ।"[1]

"खादी के फूल" में कवि की आत्मिक निकटता देखी जा सकती है -

भारत का गाँधी व्यक्त नहीं तब तक होगा,
भारती नहीं जब तक देती गाँधी अपना
जब वाणी का मेधावी कोई उतरेगा,
तब उतरेगा पृथ्वी पर वाणी का सपना ।[2]

बहिर्मुखी दृष्टिकोण

तीसरे उत्थान की कृतियाँ है "सूत की माला", "बंगाल का काल", "खादी के फूल" । इन रचनाओं में जब उन्होंने नये जीवन-जगत का अनुभव किया वे दूसरों के आँसू, दूसरों के हास को भी महत्व देने लगे ।

बच्चन की कविताओं में छायावादी कवियों की तरह किसी विशेष शब्द का मोह नहीं दीखता । "सूत की माला" में उर्दू के बहु प्रचलित लफ्ज़ हैं ।

लाओ वे फरसे, बरछ, बल्लमा भाले,
जो निर्दोषों के लोहू से हैं काले,
लाओ वे सब हथियार, छुरे, तलवारें,
जिनसे बेकस-मासूम औरतों, बच्चों,
मर्दों को तुमने लाखों शीश उतारे ।[3]

---

1. नीरज - लोकप्रिय बच्चन - सं.दीनानाथ शरण - पृ: 95
2. बच्चन -खादी के फूल - पृ: 162
3. बच्चन - सूत की माला - पृ: 107

प्रेषणीयता में योगदान

बच्चन को तो अनुभूति और अभिव्यक्ति का मोह है, भाषा का नहीं, और इसीलिए भाषा कहीं अस्पष्टता नहीं उत्पन्न करती, वरन् प्रेषणीयता में योग देती है जो प्रशंसनीय है ।

बापू जी के जीवन का था हर एक काम
भारत माता के चरणों में सादर प्रणाम,
वे अपने बलि को आज सौंपते हैं माती,
हे देश, आज
तू ले उनका अंतिम प्रणाम ।[1]

भाव पक्ष की ओर झुकाव

"सूत की माला" और "खादी के फूल क्रांतिवादी प्रभाव को द्योतक हैं । "खादी के फूल" में उन्होंने विश्ववंद्य महात्मा गाँधी के चरणों में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की । हालावादी कवि अब समाज, देश और जाति से प्रभावित दिखाई पडते हैं । उनका झुकाव कला-पक्ष की अपेक्षा भाव-पक्ष की ओर अधिक है ।

देश प्रेम की भावना

कवि सामाजिक प्राणी होता है, इसलिए समाज उसके ऊपर समय समय पर प्रभाव डालता ही रहता है । अपनी शिराओं को कंपित करनेवाली अनुभूतियों के आकर्षक वक्ता के रूप में कवि जन-जीवन से संबंध स्थापित

---

1. बच्चन - सूत की माला - पृ: 38

करनेवाला है । देश-प्रेम की कविता अनगत शिलाखंडों में प्रवाहित होनेवाली निर्मल जल की कल्लोलिनी है । राष्ट्र-प्रेम की गंभीर, सहज, सरल व स्पष्ट वेगवती वाग्धारा इन दो रचनाओं में प्रवाहित हुई है ।

अनगढ शब्दों का प्रयोग

"इन दोनों कृतियों में गीतों को पढते हुए सबसे अखरनेवाली बात है तुकबन्दियों केलिए अति अनगढ, अकाव्यात्मक शब्दों का प्रयोग । "ऐसा लगता है कि गांधीजी की निर्मम हत्या पर कवि कवितायें लिखकर जल्दी से जल्दी प्रकाशित करने की फिक्र में है । एक महापुरुष की मृत्यु पर कवि की महत्वाकांक्षा उसके सृजन पर किस कदर हावी हो जाती है - आलोच्य कृतियों को पढकर कुछ ऐसा ही लगता है" ।[1]

शोक गीत

"सूत की माला" के कुछ गीत शोकगीत हैं । शोक गीत को करुण गीत भी कहते हैं । इसका कारण यह है कि करुणा का स्थायी भाव शोक है । किसी की मृत्यु से संबद्ध दु:ख का भाव शोकगीत का प्रधान लक्ष्य होता है । सामाजिक स्तर पर किसी महापुरुष की मृत्यु पर लिखे शोकगीतों में उसकी चारित्रिक विशेषता और उच्चादर्शों का उल्लेख तथा उसके जीवन-संदेश को वर्णित किया जाता है । इस दृष्टि से "खादी के फूल" और "सूत की माला" श्रेष्ठ रचनायें हैं जिनमें बापू के महाप्रयाण से संबद्ध गीत हैं । कुछ शोक गीतों में सांगीतिकता का निर्वाह पूर्ण रूप से हुआ है -

---

1. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन - व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 262

उठ गये आज बापू हमारे
झुक गया आज झण्डा हमारा ।[1]

बापू के प्रति बच्चन को जो श्रद्धा होती थी यही श्रद्धा "सूत की माला" तथा खादी के फूल में प्रतिफलित हुई है । "यद्यपि इसमें गुप्त जी जैसा न इतिवृत्त वैशिष्ट्य है, पंत जी के काव्य जैसा लोक मंगलत्व, न निराला जी के काव्य जैसा उदात्त तत्व है और न दिनकर के काव्य जैसा दबता उभरता ओजतत्व है ।[2] बापू के स्वर्गारोहण के पश्चात् जितने गीत बच्चन ने लिखे, पिछले संपूर्ण हिन्दी काव्य में किसी एक व्यक्ति को लक्ष्य कर इतने गीत किसी ने अर्पित नहीं किये । यह बच्चन की राष्ट्रीय भावना के घनत्व का प्रमाण है ।

---

1. बच्चन - सूत की माला - पृ: 2
2. रेणु मलहोत्रा - बच्चन का परवर्ती काव्य - पृ: 19

पाँचवाँ अध्याय

प्रणयपत्रिका मिलनयामिनी

बच्चन के काव्य-विकास की चौथी मोड "मिलन यामिनी" और "प्रणय-पत्रिका" में देखी जा सकती है । इनमें उनका सौन्दर्यबोध एक नये परिप्रेक्ष्य में स्थापित हुआ है । कवि की दृष्टि यहाँ फिर एक बार प्रणय की ओर मुडी है । क्योंकि तेजी के आगमन से उनका जीवन प्रकाशमान हो गया । संयोग श्रृंगार का आकर्षक चित्र "मिलन यामिनी" के गीतों में प्राप्य हैं । इसमें कलात्मक सूक्ष्मता के साथ संयम का निमज्जित निखार भी है ।

वैयक्तिक प्रेमानुभूति को सीधे और सहज ढंग से अभिव्यक्त करने में बच्चन को अत्यधिक सफलता मिली है । प्रेम की वास्तविक [illegible]ति उनके काव्य में उतरती है । बच्चन के प्रणयपरक गीतों में अन्तर्मुखी वृत्ति, वैयक्तिक चेतना और मधुर भावुकता है । वैयक्तिक प्रणय एवं व्यक्ति मन की मानसिकता के विभिन्न आयाम उनके गीतों के अंतरंग के विभिन्न छोर हैं । उनकी प्रणय-भावना में एक अजीब क्रम है । प्रेम वियोग की विदग्धता से प्रारंभ होकर मिलन की स्निग्धता में समाप्त होता है । गीत और काव्य उनकी भोगी हुई जिन्दगी का पर्दाफाश करते हैं ।

"मिलन-यामिनी" में 99 कवितायें हैं । इन्हें 33-33 के तीन भागों में विभक्त कर दिया गया है । यह संग्रह कहीं कहीं कुछ उतार-चढाव के बावजूद उत्तरोत्तर भावनाओं के उस शिखर की ओर ले जायगा जो "मिलन यामिनी" लिखते समय बराबर मेरी दृष्टि में रहा है ।"[1]

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - आमुख - पृ: 7

"मिलन यामिनी" में बच्चन ने प्रेयसी को प्रेरक शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है । उनकी सच्ची धारणा यह है कि प्रेयसी का प्यार और संरक्षण जीवन को कटु और विरोधी परिस्थितियों से संघर्ष करने की प्रेरणा देता है -

"प्रेरणाओं की सरस अधिकारिणी तुम
आज मेरे प्राणों को कर दो ऋणी तुम ।"[1]

"मिलन यामिनी" वास्तव में बच्चन के हृदय की तीव्रतम प्रेमानुभूति की अभिव्यक्ति है । इस संग्रह की कविताओं में हार्दिक मिठास लक्षित है । संयोग शृंगार के चारु-चित्र निम्नलिखित पंक्तियों में देखा जा सकता है -

"चाँदनी फली गगन में, चाह मन में,
कुछ अँधेरा, कुछ उजाला, क्या समा है,
कुछ करो, इस चाँदनी में सब क्षमा है ।"[2]

इस संग्रह का मूल स्वर जीवन का स्वर है । स्वयं बच्चन जी भी की राय है - "मिलन यामिनी" राग के संसार को जीने भोगने की अनुभूति है ।[3]

"मिलन यामिनी" में लय-युक्त संगीतात्मक छंद और सुचिंतित शब्दों का प्रयोग हुआ है । उसके गीतों में प्रवाह और ओज समा गए हैं । जीवन प्रकाश जोशी के मतानुसार "संयोग शृंगार की जो सरस पदावली और शृंगारी भावना को उद्दीप्त करनेवाले प्रकृति के वातावरण की रंगीन सृष्टि "मिलन यामिनी" के गीतों को पढते हुए अनुभव होती है, वह अन्यत्र दुर्लभ है ।"[4]

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - आमुख - पृ: 29
2. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 19
3. बच्चन - नीड का निर्माण फिर - पृ: 354
4. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 62

"गोद में तुम हो, गगन में चाँदनी है,
काल को यह भी निशा तो नापनी है,
मधु-सुधा की धार में दो याम वह लें ;
है रूपहली रात, हैं सपने सुनहले ।"[1]

मिलन की मादकता

बच्चन मूलत: प्रेम के कवि हैं । उनका प्रेम-मिलन के क्षणों का वर्णन आप्लावनकारी है एवं संपूर्ण प्रकृति को अपने प्रवाह में समेटे हुए बहता है । "मिलन-यामिनी" मिलन की मादकता और उमंग को मुखर करते हैं । प्रत्यक्षत: व्यक्तिगत जीवन की कविता होने के कारण बच्चन की कविता का मूल आधार है अनुभूति और यही उनकी सबसे बड़ी शक्ति है । वे जीवन के सर्वमान्य मौलिक तथा मूर्त सत्यों के द्वारा और जीवनगत तरल कल्पना की मदद से ही व्यक्ति की अनुभूति का साधारणीकरण करते हैं । यहाँ मिलन की स्थिति तक पहुँचने की आशा और साधना की सफलता में विश्वास के स्वर मुखर हुए हैं ।

लक्ष्य प्राप्ति की अदम्य आशा

बच्चन में अभीष्ट को प्राप्त करने या गन्तव्य तक पहुँचने की आशा इतनी प्रबल है कि उन्होंने लक्ष्य या मंजिल को साधक तक स्वयं आने की भावना अभिव्यक्त की है -

मैं लेता हूँ हर साँस अमर विश्वास लिए,
मैं पहुँच न पाऊँ जीते जी अपनी मंजिल,
पर मरने पर मंजिल मुझ तक पहुँचेगी ही ।[2]

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 36
2. वही - पृ: 65

साफ-सोधी अभिव्यक्ति

"मिलन यामिनी" में वे आन्तरिक सत्य की खोज में लीन दिखाई देते हैं । इस रचना में गंभीर भावनिधियाँ और अनुभूतियाँ हैं । जीवन के कठोर से कठोर सत्यों तथा उलझे से उलझे विचारों को बिना तनिक भी जटिल, बिल्कुल साफ सीधे ढंग से व्यक्त कर देना बच्चन की अपनी विशेषता और उपलब्धि है । कवि ने चंचल प्रेमिका को बिजली के रूप में तथा स्वयं को मेघों के रूप में प्रस्तुत किया है -

पास मेरे तुम, तुम्हारे पास मस्ती,
बादलों की गोद में बिजली विहँसती,
मैं भरा-उमँडा, भरा उमँडा गगन भी,
आज रिमझिम नेह, रिमझिम हैं नयन भी ।[1]

तेजी से जब बच्चन की शादी हुई तब उन्होंने समझा कि पिछली बातों को भूल जाना ही श्रेयस्कर है । "मिलन यामिनी" में एक बार फिर वही रोमानी तत्व सामने आते हैं, जो मधुशाला में थे ।

नियतिवाद में विश्वास

यद्यपि इस संग्रह में बच्चन का आशावादी दृष्टिकोण लक्षित होता है ; फिर भी वे नियतिवाद में भी विश्वास करते हुए दिखाई देते हैं । नियति के सामने दीन, असहाय होकर वे चुपचाप उसके अत्याचारों को सहते हुए अपनी लाचारी तथा असहायता का प्रदर्शन करते हैं तथा अपनी जीवन-

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 65

दृष्टि को परिवर्तित करने के हेतु कोई सक्रिय कदम नहीं उठाने देते -

कहाँ विमोहिनी ले जाओगी,
रिझा मुझे झंकृत पायल से
जहाँ पराजय ही अंकित है मानव के सब संघर्षों पर
जहाँ विफलता के क्रन्दन से घबराई प्रत्येक घडी है ।[1]

"मिलन यामिनी" में छंदों में लय-युक्त संगीतात्मकता, सुचिंतित शब्द-चयन तथा संयमित कला-सूक्ष्मता का सन्निवेश हुआ है ।

"तुम समर्पण बन भुजाओं में पडी हो,
उम्र इन उद्भ्रान्त घडियों को बडी हो ।"[2]

कवि के मन की रागिनी निर्बाध गति से निर्झर के समान प्राकृतिक वेग से फूट कर निकलती है । कवि का मन उसके देह-मिलन के आनंद को सुख की प्रतिध्वनि स्वरूप ही ग्रहण कर पाया है ।

रूप बनकर घूमता जो वह तुम्हीं हो,
राग बनकर गूँजता जो वह तुम्हीं हो,
तुम नयन में औ" तुम्ही अंतकरण में,
स्वप्न में तुम हो, तुम्हीं हो जागरण में ।[3]

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 169
2. वही पृ: 46
3. वही पृ: 40

परदु:खकातरता

इसमें मानवीय संवेदना, सहानुभूति एवं परदु:खकातरता को भी सहज ही वाणी मिली है -

जो औरों को आनन्द बना
वह दु:ख मुझ पर फिर फिर आये
रस में भीगे दु:ख के ऊपर
मैं तुझ का स्वर्ग लुटाता हूँ ।"[1]

जीवन की मस्ती

"मिलन यामिनी" के मध्य भाग के बहुत से गीतों में जीवन की मस्ती, आनन्द-आह्लाद की वाणी मिली है ।

"एक-एक पल में मरना है
युग-युग की चाहों को,
सखि, यह साधों की रात नहीं सोने की ;
सखि, यह रागों की रात नहीं सोने की ।"[2]

"मिलन यामिनी" का मध्य-भाग जीवन के स्वर को साथ लेकर आता है । प्राय: सभी गीत मध्यवर्गीय दमित यौन-कुंठा और विघटित-व्यक्तित्व के स्वर वाही संवाहक हैं । "मिलन यामिनी" में बच्चन को अनेक भाव निधियों तथा अनुभूतियों के गंभीर कांति-रत्न यत्र-तत्र पिरोये मिलते हैं ।

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 106
2. वही पृ: 157

वह भावना लोक का अपने ढंग का एकाकी पथिक है ।"[1]

श्रृंगारिक भावना

प्रकृति के नूतन छवियों के साथ बच्चन की श्रृंगारिक भावना इस संग्रह के कई गीतों में स्पष्ट हुई है -

"मधु पी लो, मौसम आज बडा प्यारा है ।
अठखेली करती चलती है आज हवा मदमाती ।
पत्ती-पत्ती गीत प्रीति का झूम-झूमकर गाती,
उभर-उभर उठती सुख-सांसों से पृथ्वी की छाती ।
मधु पी लो ।"[2]

"मिलन यामिनी" आधुनिक गीतिकृतियों में अपना अलग स्थान रखती है । उसके गीतों में प्रवाह और ओज समा गए हैं । संग्रह के संयोग-श्रृंगार संबंधी गीत अत्यंत कलात्मक और रागात्मक हैं -

रात मेरी रात का श्रृंगार मेरा,
आज आधे विश्व से अभिसार मेरा,
तुम मुझे अधिकार अधरों पर दिए हो ;
प्राण, कह दो, आज तुम मेरे लिए हो ।[3]

श्री कृष्णचन्द्र पण्ड्या के अनुसार "मिलन यामिनी" सांयोगिक रागानुभूतियों का विलंबित तालिक सात्विक जल-तरंग है ।"[4]

---

1. सुमित्रानंदन पंत - अभिनव सोपान - पृ: 23
2. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 146
3. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 41
2. कृष्णचन्द्र पण्ड्या- बच्चन: व्यक्तित्व और कृतित्व - पृ: 148

अपराजित विश्वास

उत्तर भाग के गीत कवि को आस्था और अपराजित विश्वास के गीत हैं -

"नयन भरे हुए नवल सिंगार से,
श्रवण भरे हुए प्रणय पुकार से,
हृदय भरे हुए मधुर विचार से
भरी हुई
ज़मीन
मुस्कुरा उठी ।"[1]

चित्रात्मकता की ओर मोह

बच्चन गायक कवि हैं । गायक कवि को अपने भावों की अभिव्यक्ति केलिए प्रदर्शन पर ज़ोर देना पडता है । भाव की अपेक्षा श्रोताओं के मन पर उत्पन्न प्रभाव पर दृष्टि रखना होती है । "मिलन यामिनी" में रूप बिंबों की अधिकता जितने स्पष्ट होता है कि कवि का मोह चित्रात्मकता की ओर अधिक है -

उषा - अरुण वसन तजी बसुंधरा -
तदल - सफल, सुफुल्ल फूल उर्वरा -
चला समीर वृक्ष, वेलि, तृण हिला ;
विहग - पाँत
साथ चहचहा उठी ।"[2]

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 202
2. " दही पृ: 210

जब अन्तर के आवेग स्वर मांगते हैं तब बच्चन को कलम स्वयं उठती है । उनकी कविता का आधार कोई सिद्धान्त या विचार न होकर उनका जीवन ही है । "मिलन यामिनी" इस बात का प्रत्यक्ष साक्षी है । वे अपने अनुभवों को सहजतापूर्वक अभिव्यक्त करने को ही कवि कर्म मानते हैं ।

प्रेरणा का महत्व

काव्य-रचना में प्रेरणा के महत्व पर ज़ोर देते हुए बच्चन ने कहा है - "सबलतम प्रेरणा प्रचंड अग्नि के समान होती है । प्रचंड अग्नि में दो अनुभूति आहुति हो खरा सोना बनकर निकलती है - खरी, सच्ची, बडी कविता के रूप में ।"[1] उनकी यह धारणा "मिलन यामिनी" के प्रसंग में सार्थक है । "तेजी उनकेलिए प्रबलतम प्रेरणा बनी । तेजी जिस समय कवि के जीवन में आई उस समय कवि अपनी कुछ विफलताओं, कुछ निराशाओं, कुछ भूलों, के कारण एक अजीब से-तिनिकल - मूड में था । उसने वास्तव में बच्चन को उस मूड से बचा लिया था । तेजी के रूप में बच्चन को एक आदर्श पत्नी ही मिली । पहली बार उन्होंने जीवन में शान्ति, चैन, निश्चिन्तता, आदि का अनुभव किया । वे अकेलापन, अजनबीपन, निस्संगता से उबर कर बाहर आये जिसका संकेत "मिलन यामिनी" में यत्र-तत्र मिलता है -

हम अपनी मस्ती में बहके
मधुवात बही बहकी, बहकी,
चुंबन के स्वर संकेतों पर
वन की सारी चिडियाँ चहकीं ।

---

1. भाषा - त्रैमासिक जून 1986 बच्चन के सिद्धान्त एवं सृजन प्रक्रिया : बच्चन से डा. कमल किशोर गोयन की बातचीत - पृ: 12

अनुकरण हमारे शब्दों का
अस्फुट, लो, पल्लव दल करते, ।
साँसों से साँसें मिलती थीं,
खुलकर, खिलकर कलियाँ महकीं ।[1]

परंपरागत संयोग वर्णन

प्रेम को उदात्त एवं परिष्कृत धरातल पर वे स्वीकार करते हैं । अतीत के अवसाद और विषादपूर्ण इतिहास की गाढी रेखाओं के कारण बच्चन के संयोग चित्रण में अपने समकालीन कवियों की अपेक्षा स्थूलता एवं मांसलता न्यून है । "मिलन यामिनी" में परंपरागत संयोग का वर्णन अतीव हार्दिक रूप से हुआ है, जिसमें प्रेमी-प्रेमिका साथ हो, ऋतु भी भावनाओं को उद्दीप्त करनेवाली हो तथा किसी प्रकार का अवरोध न हो -

आज उपेक्षित हो न सकेगा
रसमय पवन-सँदेसा,
सखि, भोग रही बातास कि हम-तुम भोगें,
सखि, अखिल प्रकृति को व्यास कि हम-तुम भोगें ।[2]

अमूर्त केलिए मूर्त अप्रस्तुत का प्रयोग

"मिलन यामिनी" में प्रकृति के आलंबन और उद्दीपन रूप के चित्र इतने आकर्षक हैं कि श्रृंगार रस का संयोग पक्ष प्रकृति और प्रेमिका केलिए

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 96
2. वही पृ: 150

एकाकार हो उठा है । इसमें प्यार जैसे अमूर्त भाव केलिए कवि प्रात: मुकुलित फूल जैसे मूर्त अप्रस्तुत लाये हैं -

ठीक है मैंने कभी देखा अँधेरा,
किंतु अब तो हो गया फिर से सवेरा,
भाग्य-किरणों ने छुआ संसार मेरा,
प्रात-मुकुलित फूल-सा है प्यार मेरा ।[1]

प्यार को प्रात: मुकुलित फूल कहने से प्यार की पवित्रता, ताजगी और कोमलता व्यंजित हुई है ।

बच्चन ने इस रचना में परंपरागत अप्रस्तुतों का नूतन विधान, अप्रस्तुत विधान के अनेक प्रकारों में किया है । उन्होंने एक गीत में अमूर्त केलिए मूर्त अप्रस्तुत का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है -

आँसुओं में रात-दिन अंतर गला है,
प्राण, मेरा गीत दीपक-सा जला है ।[2]

यहाँ गीत केलिए दीपक अप्रस्तुत आया है । इसमें कवि का भाव करुणा, वेदना आदि भावों को व्यक्त करता है । कवि का गीत विरह-दग्ध है और जैसे दीपक धीरे धीरे जलता है वैसे ही कवि के गीतों में भी विरह दग्धता है । उन्होंने इस अप्रस्तुत के माध्यम से अपने अभिप्रेत भाव को सफलतापूर्वक व्यक्त किया है । "मिलनयामिनी" के गीतों में उत्कृष्ट बिंब विधान हुआ है -

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 150
2. वही पृ: 22

मैं रखता हूँ हर पांव सुदृढ विश्वास लिए,
उबड-खाबड तम को ठोकर खाते-खाते
इनसे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही ।[1]

"तम को ठोकरें" और "रक्ताभ किरण" का फूटना आदि जो बिंब आए हैं, वे प्रतीकात्मक हैं । "तम" अज्ञात या जडता का प्रतीक है और रक्ताभ किरण जागृति और क्रान्ति का प्रतीक है । कवि कहते हैं कि प्रत्येक हृदय में दृढता और विश्वास लिए हुए तम को ठोकरें खाते खाते कोई रक्ताभ किरण (जागृति या क्रान्ति) अवश्य फूटेगी ।

प्रेमी प्रेमिका को मिलन-वेला में प्रकृति भी अनुकूल वातावरण उपस्थित कर देती है । निम्नलिखित पंक्तियों में ऐसा चित्र अंकित है ।

सिंदूर लुटाया था रवि ने,
संध्या ने स्वर्ग लुटाया था,
ये गात गगन के लाल हुए,
धरती का दिल भर आया था ।[2]

गीत अनुभूति का दान न कर जैसी अनुभूति स्वयं कवि ने की है वैसी ही अनुभूति वह पाठक या श्रोता के मन में उतने ही तीव्रता के साथ जाग्रत करता है ।

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 60
2. वही पृ: 60

"पास आओ, चंद्रमा के होंठ चूमूँ,
कुंतलों के बादलों के साथ घूमूँ,
आज तुम पाताल को आकाश कर दो;
आज तुम उच्छ्वास को उल्लास कर दो ।"[1]

इन पंक्तियों में कवि ने प्रेयसी के मुख केलिए चन्द्रमा शब्द का प्रयोग किया है । उपमेय को लुप्त कर उपमान को प्रकाशित करने के कारण यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलंकार है । कवि यहाँ चन्द्रमा के होंठ चूमना चाहते हैं । यहाँ होंठ चूमने से कवि का मत होंठों के अमृत का पान है । ध्वन्यर्थ है कि प्रेयसी के अधर चन्द्रमा के समान अमृत से भरे हैं । इससे होंठों की अत्यधिक मधुरता व्यंजित हुई है ।

वैयक्तिक प्रणय की अभिव्यक्ति

इस प्रकार "मिलन यामिनी" बच्चन की दूसरी शादी की विलासपूर्ण अभिव्यक्ति है । द्वितीय प्रेम के साथ बच्चन के गीतों में वास्तविक संयोग का चित्रण प्रारंभ होता है । इसी कारण इन समस्त संयोग चित्रों में अतीत के अवसाद और विषाद की पृष्ठभूमि है जिसे बच्चन के गीतों से पृथक नहीं किया जा सकता । अतीत के पृष्ठों ने एक लम्बे इतिहास का निर्माण किया है

सिसकियाँ बीता समय लेता रहेगा,
धमकियाँ संसार तो देता रहेगा,
आज तुम रसवाद में रसना डुबाओ,
आज, संगिनी, प्रीति के तुम गीत गाओ ।[2]

---

1. बच्चन - मिलन यामिनी - पृ: 28
2. वही पृ: 37

बच्चन ने यहाँ बिना किसी प्रकार की भूमिका का आश्रय ग्रहण किए सीधे और सहज ढंग से वैयक्तिक प्रणय की अभिव्यक्ति दी है । उनकी कल्पना का स्वर्ण-महल अनुभूति की दृढ नींव पर स्थित है । इस प्रकार हम देख सकते हैं कि "मिलन यामिनी" की भाषा सहज और सरल है । "मिलन यामिनी" में प्यार, जवानी, जीवन के जादू के गीत संगृहीत हैं ।

प्रणय-पत्रिका

जिस विशिष्ट पद्धति और विचारधारा का बच्चन ने अपने गीतों में प्रतिनिधित्व किया है उसकी चरम परिणति "प्रणय-पत्रिका" में हुई । उसमें जीवन को देखने का कोण व्यापक और चिन्तन की स्थिति शाश्वत भावनाओं को पकडनेवाली बन गयी हैं ।

रोमांस जीवन की महत्वपूर्ण इकाई है और कविता केलिए भावात्मक अनिवार्यता । स्वस्थ रोमांस कविता को संवेद्य बनाता है तथा कविता की आन्तरिक क्षमता को ऊर्जा प्रदान करता है जिसके द्वारा उसकी प्राणमयता में अभिवृद्धि होती है ।

प्रणयपरक गीतकार

उत्तर छायावादी कवियों में बच्चन यथार्थोन्मुख प्रणयपरक गीतकार के रूप में प्रसिद्ध हैं । उन्होंने छायावादी वायवीयता, अपार्थिवता और रहस्यात्मकता को त्यागकर स्थूल-मांसल, लौकिक, तथा पार्थिव व्यक्ति संवेदना की निश्छल भूमिका को अपनाया । उनके प्रणयपरक गीतों में

वैयक्तिकता को संपूर्ण ईमानदारी के साथ स्वीकार किया गया है । अपने प्रेम-संवेग, हर्ष, विषाद, सबको बच्चन ने निस्संकोच भाव से गूँथा है ।

"प्रणय-पत्रिका" की रचना कवि के प्रवास काल में हुई है । यह प्रेम की पत्रिका अपनी पत्नी तेजी को लक्ष्य करके उन्होंने लिखी है । "इसमें एक संयत श्रृंगार तथा भारतीय दाम्पत्य-जीवन के मधुरतम क्षणों का समावेश हुआ है । इस रचना में सौन्दर्य के उपभोग की पूर्णाहुति मिलती है ।"[1]

"प्रणय-पत्रिका" में बच्चन के हृदय की बात सच्चाई के साथ जाहिर हुई है । ये गीत बच्चन के इस कथन को सार्थक करते हैं - "कविता हमारी ईमानदारी की भाषा है । जब आदमी अपने दिल की बात सच्चाई के साथ जाहिर करता है, जब उसका हृदय, बिना किसी छल छद्म के, बिना किसी दुराव-छिपाव के, बोलता है तब कविता उसकी सहज वाणी होती है ।"[2] "प्रणय-पत्रिका" के गीतों में विशेषकर कवि बच्चन के हृदय की प्रणयानुभूति को वाणी मिली है । ये गीत अपने आप में पूर्ण हैं ।

<u>विप्रलंभ श्रृंगार</u>

प्रवास काल में लिखी इस कृति में विप्रलंभ श्रृंगार और राग का ही आधिक्य देखा जा सकता है । प्रवास काल में उन्होंने कुल एक सौ ग्यारह कवितायें लिखीं । इनमें से 59 रचनायें चुनकर प्रणय पत्रिका" के नाम से प्रकाशित कराए गए । इस रचना का नामकरण "विनय पत्रिका" के आधार

---

1. राममूर्ति त्रिपाठी - हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ: 423
2. बच्चन - प्रवास की डायरी - पृ: 257

पर हुआ है ।[1] प्रेम को इसमें एक महती प्रेरणा के रूप में अपनाया गया है । सभी गीत प्रेमिका के प्रति सम्मान, आकर्षण, उत्साह, कृतज्ञता और आत्म-समर्पण की भावना से अलंकृत हैं ।

प्रेम को पीडा

जहाँ उन्होंने आत्माभिव्यक्ति की है या फिर प्रेम की स्वस्थ और मुखर रागिणी का आलाप किया है वहाँ मार्मिकता और काव्यत्व का प्राधान्य रहा है । "प्रणय-पत्रिका" इस बात को सार्थक सिद्ध करती है । इस रचना में बच्चन ने जीवन को रागात्मक बनाया है । उन्होंने प्रेम को काव्य की प्रेरणा का मौलिक आधार माना है । प्रेम की पीडा उनके काव्य का प्राण है -

मौन रहा करता है लेकिन कवि का दर्द कराला ।
तब तक जब तक हर पीडा है गीत नहीं बन जाती ।[2]

प्रेयसी के प्रति प्यार

मिलन की यामिनी की मधुर स्मृतियाँ उन्हें कचोटती हैं और वे विकल हो उठते हैं । प्रकृति का रम्य वातावरण उनकी अनुभूतियों को और भी उद्दीप्त करता है । सारे गीत कवि के अपने दाम्पत्य-प्रणय-संबंधों को लेकर लिखे गये हैं । प्रेयसी के प्रति प्यार पंक्ति पंक्ति में व्यक्त है -

---

1. विश्वंभर मानव - आधुनिक कवि - पृ: 340
2. बच्चन - प्रणय-पत्रिका - पृ: 63

"झूलेगा मेरी आँखों में
तेरा रूप रसीला
मन सुधियों के स्वप्न बुनेंगे
लेकिन सच तो यह है,
दोनों में होगी सौ दुनिया की दूरी ।
भावाकुल मन को कौन कहे मज़बूरी ।"[1]

सच्ची भावनाओं की सुन्दर अभिव्यक्ति

"प्रेम जीवन की सबसे सुन्दर और अनोखी अनुभूति है । इसी प्रणय की भावना से प्रभावित होकर ही मानव कवित्वमय बना और उसे गीतिकाव्य निर्माण की प्रेरणा भी मिली । गीतिकाव्य प्रेमपूर्ण हृदय की सच्ची वाणी है ।"[2] नारी को यहाँ उन्मुक्त रूप मिल गया है । अपने नन्हे-नन्हे भावपूर्ण प्रणय गीतों में बच्चन विशुद्ध कलाकार के रूप में सामने आते हैं । वासना इसमें अधिक संयमित है, उसके स्थान पर प्रणय का उद्वेग ही अधिक है । ये गीत उनकी सच्ची भावनाओं की मंजुल अभिव्यक्ति है -

"अर्पित तुमको मेरी आशा, और निराशाएँ पिपासा ।
पंख उगे थे मेरे जिस दिन,
तुमने कहे सहलाए थे ।"[3]

---

1. बच्चन - प्रणय-पत्रिका - पृ: 25
2. राम खेलावन पाण्डेय - काव्य और कल्पना - पृ: 314
3. बच्चन - प्रणय-पत्रिका - पृ: 40

"प्रणय पत्रिका" के गीतों में सबसे चुभनेवाली चीज़ प्रेम की मादकता का सरल, स्पष्ट, विदग्ध और मन रमानेवाली शैली है । यहाँ श्रृंगारी वातावरण, प्रकृति-चित्रण तथा भावों की सरसता है । इसमें कोमल-कांत पदावली के ज़रिये अभिव्यक्ति कौशल का नया रूप प्रकट होता है । श्रृंगार के रसरंजित भावानुभाव प्रणय-पत्रिका" के गीतों में मुखर चित्रों से प्रतीत होते हैं -

आज खडी हो छत पर तुमने, होगा चाँद निहारा,
फूटें पडी होगी नयनों से सहसा जल की धारा,
इसके साथ जुडी जीवन की कितनी मधुमय घडियाँ,
यह चाँद नया है, नाव नई आशा की ।[1]

स्वयं बच्चन ने इस रचना के बारे में कहा है - "प्रणय-पत्रिका" प्यार, जवानी, जीवन के प्रति उल्लास की तरंगें और अवसाद की लपटों में परीक्षित आस्था का राग है ।"[2]

प्रणय की निखरी रागिनी का आलाप

"प्रणय-पत्रिका" में कवि ने भावनाओं की गहराइयों से ऊपर उठकर प्रेम की निखरी रागिनी का आलाप किया है । उन्होंने अपनी हृदयवीणा को गीत के सुर से झंकृत किया है तभी उनके गीत रागात्मक, भाव प्रवण और अनुभूति रस में आप्लावित हो उठे हैं ।[3] उक्त संग्रह के कुछ गीत जिनमें प्रेम की शाश्वत भावनाओं का सजीव चित्रण हुआ है, रूप और निरूपण की दृष्टि से अन्यतम कहे जा सकते हैं -

---

1. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 72
2. बच्चन - नये पुराने झरोखे - पृ: 140
3. सुर न मधुर हो पाए, उर की वीणा को कुछ और कसोन । मैंने तो हर तार तुम्हारे । हाथों में, प्रिय, सौंप दिया है, काल बताएगा यह मैं ने । गलत किया था ठीक किया है ।

"मेरी उर वीणा पर तुम जो
चाहो राग उतारो,
उसके जिन भावों, भेदों को
तुम चाहो उद्गारो ।[1]

अनुभूति और कल्पना का समन्वय

"प्रणय-पत्रिका" अनुभूति और कल्पना दोनों का समन्वित रूप है । भाव की आर्द्रता और कल्पना की रंगिनी "प्रणय पत्रिका" के गीतों को सजाती है । इसमें एक अलौकिक सौन्दर्योन्मेष का भव्य वातावरण देखने को मिलता है ।

सच्ची संगिनी का आगमन

श्यामा की मृत्यु से शून्य उनके हृदय को तेजी के आगमन ने नया बनाया । बच्चन उसमें अपनी सच्ची संगिनी को देखा । प्रवासकाल में बच्चन का विरही मन प्रेयसी को विविध रूप में देखता है । वह कवि के जीवन की पूर्णता का प्रतीक बन गयी हैं -

नाम तुम्हारा ले लूँ, मेरे
स्वप्नों के नामावलि पूरी,
तुम जितने संबद्ध नहीं वह
काम अधूरा, बात अधूरी ,[2]

---

1. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 29
2. " दही पृ: 41

प्रणय को बच्चन ने पार्थिवता की भूमि पर रखा । उन्होंने नारी को जीवन की सहयात्री, सह भोक्ता एवं संगिनी-साथी माना है -

"सहयात्री नारी उनकी रहस्य-संगिनी भी है
तुम अपने जीवन की गाँठें खोलो, संगिनी मैं भी खोलूँ ।"[1]

भोग का अनुभव

"प्रणय पत्रिका" के गीतों की महत्ता इस बात में है कि यहाँ प्रत्येक भाव, अनुभव व संचारी भाव का आधार भोग का अनुभव है । ये गीत विरह-मिलन की सच्ची और सहज अनुभूतियों को वाणी देने में मग्न हैं । कोमल-मधुर भावुकता, रसात्मकता, कल्पना माधुर्य, वैयक्तिक अनुभव की ऊष्मा, शिल्प-सौष्ठव, सांगीतिकता ये सभी तत्व इनमें अभिव्यक्ति पाये हैं । "कवि का एक सृजन संसार होता है जिसे भोगे झेले जीवन की स्मृतियों से समृद्ध, पढ़े सुने देखे, की स्मृतियों से भी । एक प्रकार का स्टोर हाउस या, गोदाम । कवि जब किसी मूड में किसी विषय से लेकर रचना आरंभ करता है तो उस मूड, उस विषय के अनुरूप ध्वनि, लय, शब्द, रूप, प्रतीक उसके स्टोर हाउस से जैसे किसी चुंबक से खिंचे हुए उसके पास आ जाते हैं ।[2] बच्चन के उक्त वचन प्रणय पत्रिका के बारे में सार्थक है ।

"प्रणय-पत्रिका" का कवि सदैव अपने व्यक्ति के अंतर का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करता रहा है । जो कुछ उसने अनुभव किया उसका आत्माभिव्यंजन जितना इस कवि ने किया दूसरे किसी कवि ने शायद नहीं किया ।"[3]

---

1. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 91
2. भाषा - त्रैमासिक - पृ: 17
3. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन - व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 72

"प्रणय-पत्रिका" का मूल स्वर समर्पण का है । इसमें प्राण-पक्ष प्रधान है । इस कृति में अनुभूति की मार्मिक स्फुट ध्वनि है -

"तुम बुझाओ प्यास मेरी या जलाए फिर तुम्हारी याद ।"[1]

संगीत और राग तत्वों का समन्वय

इस रचना में संगीत और राग तत्वों का अद्भुत समन्वय है । "

"बीन आ छेड़ूँ तुझे, मन में उदासी छा रही है ।"[2]

संपूर्ण गीत में व्यक्ति मन की जिस उदासी का सहज भाव-प्रकाशन हुआ है, तदनुकूल स्वर लय की संगति भी प्रतीत होती है । इस रचना में प्रवासी की विप्रलंभ की अनुभूतियाँ व्यक्त हुई हैं । यहाँ उनके प्रेम का प्रस्फुटन और स्पष्ट रूप में हुआ है -

"हर रात तुम्हारे पास चला मैं आता हूँ ।
जब घन अँधियाले तारों से ढल धरती पर ।
सो जाता है ।"[3]

विरह-व्यथा उद्दीप्त करनेवाला प्रकृति का व्यापार

विरह की अवस्था में प्रकृति के व्यापार, व्यथा और पीडा को तीव्र बनाते हैं । प्रकृति के व्यापारों में विशेषकर वर्षा द्वारा विरह-व्यथा उद्दीप्त हो जाता है । बच्चन ने "प्रणय-पत्रिका" में एक स्थान पर ऐसा कहा है -

---

1. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 101
2. वही पृ: 32
3. वही पृ: 76

"जर्जर-कातर, अंतर थर-थर काँपा करता, आहें भरता,
भगवान किसी को वर्षा में मत बिलगाए ।"[1]

मानव-जीवन में प्रेमवृत्ति की आवश्यकता

"बच्चन मानवीय-प्रेमवृत्ति को सहजता व सकेत निषेध रूप में देते हैं । मानवेतर जीवन में प्यार की रिक्तता का निर्देशन वास्तव में उस मनोवृत्ति का परिचायक है जो मानव-जीवन में उसके महत्व को प्रतिपादित करना चाहती है । पशुओं की प्रेमवृत्ति पर प्रश्न चिह्न लगाने की प्रवृत्ति के द्वारा वे मानव-जीवन में उसकी आवश्यकता और महत्ता पर ज़ोर देते हैं -

"पशुओं ने कब प्यार किया है
कब ये सुन्दरता पर बिखरे
शक्ति सुरुचि दोनों से वंचित ही
इनको दुर्गुण बतलाते ।"[2]

इस संग्रह में कुल 59 पद हैं जिनमें से प्रत्येक प्रणय से सीधा संबंध रखता है । पहले गीत से अंतिम गीत तक कवि का विरहाकुल मन ही बोल उठता है । प्रकृति के सुंदर दृश्य कवि के राग-तप्त हृदय को और तप्त बनाते हैं । इन गीतों में संगीत का मांत्रिक निनाद सुनाई पडता है । पहले गीत में प्रकृति के सुंदर दृश्यों के द्वारा कवि अपने मन की विह्वलता प्रकट करते हैं ।

---

1. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 57
2. वही पृ: 51

भावाकुल मन की मज़बूरी

दूसरे गीत में कवि अपने भावाकुल मन की अवर्णनीय मज़बूरी के बारे में बताते हैं। कवि ने अपनी आधी जिन्दगी गीत गाकर गँवायी, प्रणय गीत गाकर ही उनके जीवन का आधा भाग बीत गया । उनके प्रेमसिक्त मन में शब्दों का जो उत्साह है उनसे बच्चन ने अनेक पदों की रचना की । कवि और प्रेमिका के बीच सौ दुनिया की दूरी है । फिर भी कवि प्रेयसी का सामीप्य महसूस करते हैं । सुधियों के रूप में प्रेयसी उनके पास आती हैं ।

तीसरे गीत में कवि प्रेयसी के पैरों की आहट केलिए आतुर हैं । कवि का हृदय वीणा है । वे चाहते हैं कि उस वीणा पर उनकी प्रेयसी मन चाहे राग को उतार दे -

"मेरी उर-वीणा पर तुम हो
चाहो राग उतारो,
उसके जिन-भावों भेदों को
तुम चाहो उद्गारो,"[1]

चौथे गीत में कवि ने अपनी करतूतों पर संदेह प्रकट किया है । दूर पर रहते हुए भी प्रेयसी ने उनको छुआ और छेडा भी ।

"तुमने मुझे छुआ, छेडा भी
और दूर के दूर रहे भी,
डर के बीच बसे हो मेरे सुर के भी तो बीच बसो ना ।
सुर न मधुर हो पाए डर को
वीणा को कुछ और कसो ना ।"[2]

---

1. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 27
2. वही पृ: 29

विरह की स्थिति से उत्पन्न उदासी

पाँचवाँ गीत दुनिया की क्षणिकता को व्यक्त करता है । राग उतर फिर फिर जाता है, बीन चढी रह जाती है । प्रेयसी के मंदिर की ड्योढी पर गाते एक युग बीत गया । फिर भी अंतर के बहुत से तार ऐसे हैं जो शब्द नहीं झंकृत कर पाते । कवि की स्थिति उस पगलाई-सी बदली की तरह है जो बिना बरसे बरसाए नभ में उमडी ही बह जाती है । कवि को सारी दुनिया रूठी प्रतीत होती है । कवि अपने को सबसे दीन और हीन समझते हैं । विरह की स्थिति से उत्पन्न उदासी से उनका मन भर पूर है -

"आज सब संसार रूठा,
लग रहा जैसे कि सबको
प्रीति झूठी, प्यार झूठा,
और मुझ-सा दीन मुझ-सा
हीन कोई भी नहीं है ।"[1]

बिंब की हृदयस्पर्शी व्याख्या

सरसता की दृष्टि से "प्रणय-पत्रिका" के गीतों में बडा आकर्षण और मिठास है । इस रचना के अधिकांश गीत प्राकृतिक दृश्यों, बिंबों तथा भावों की अत्यंत रसमय एवं हृदयस्पर्शी व्याख्या है -

---

1. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 32

और अपनी हंसिनी के नीर भीगे नेत्र को अपलक प्रतीक्षा
दाहिनी मेरी फड़कती आँख, अब तुम आ रहे अपने बसेरे ।"[1]

यहाँ प्रकृति का भाव संकुल अंकन मुखरित और स्पंदित चित्र-सा बनकर हृदय में उतर आता है । हंसिनी के नीर-भीगे नेत्र की अपलक प्रतीक्षा रत ध्वनि से युक्त नायक के प्रणय की स्मृति को एक साथ साकार और सहज रूप में सजीव कर देता है । और उधर नायिका का शुभ शकुन लोक प्रचलित मुहावरे के द्वारा कथ्य की कल्पना को रसिक के पास में बाँध देता है । इस प्रकार के अनेक गीत ऐसे हैं जिनमें नायक-नायिका के प्रणय-व्यापार को मात्र कल्पना के सहज माध्यम द्वारा गीत बद्ध किया गया है -

प्रिय, देख मिलन मेरा, तेरा क्यों तारे जलते हैं ?
पत्ते सहसा आपस में यों क्यों बात लगे करने !
मलयानिल बहकर अंबर के क्यों कान लगा भरने ?
डाली-डाली उँगली बनकर क्यों हम पर उठती है ?[2]
"तुम अपने रंग में रंग लो तो होली है,"[3]
"झुरमुट में भटका चाँद कहीं अटका मन मेरा भी,"[4]
"तुम्हारे नील-झील से नैन, नीर निर्झर-से
लहरे कहा[5], "मधुर प्रतीक्षा हो जब इतनी, प्रिय,
तुम आते तब क्या होता"[6] आदि गीत श्रृंगार रस रंजित भावानुभावों के संग्रहालय हैं ।

---

1. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 115
2. वही पृ: 88
3. वही पृ: 48
4. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 50
5. वही पृ: 98
6. वही पृ: 126

यह रचना कवि की अब तक की सबसे प्रौढ, परिष्कृत एवं सुगठित रचना है । लौकिक भाव-भूमि पर वे सुख-दु:ख को समान रूप से स्वीकार करने का संदेश देते हैं । "प्रणय-पत्रिका" में केवल मांसल प्रणय ही नहीं, सामाजिक, जातीय, राष्ट्रीय एवं मानवीय संवेदनशीलता का प्रणय भी मुखरित हुआ है ।

मील का पत्थर

कृष्ण चन्द्र पण्ड्या की राय में "प्रणय-पत्रिका" मील के पत्थर का काम करती है । इसलिए भी उसका अपना महत्व है । "प्रणय-पत्रिका" बच्चन के व्यक्तिवादी कवि का आन्तरिक अनुभूति-अनुप्रेरणा के काव्य का प्राय: अन्तिम बिन्दु है ।[1] "प्रणय-पत्रिका" के गीत में संगीत को प्रधानता है जो सोये भावों को गुदगुदाकर जगा देता है । संगीत की पूर्ण सार्थकता वहाँ सिद्ध होती है जहाँ वह भाव के अनुकूल प्रभाव, कल्पना के मूर्ति-विधान एवं अनुभूति के दिव्य स्पर्शों को एक तान कर देता है । गीत में आकर संगीत बुद्धि और कल्पना को जाग्रत करता है -

"मैं जागा या तूने अपने सुरभित-से दृग खोले,
मेरा स्वर फूटा या तेरे भाव-विहंगम बोले,
मेरा भाग्य उदय है तेरी उषा का वातायन,
अरुण किरण के शर हैं, मेरा तेरा शुभग सवेरा ।"[2]

---

1. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व - पृ: 155
2. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 47

गेयता

"प्रणय-पत्रिका" में कवि ने भाव, भाषा, कल्पना तथा शिल्प की दृष्टि से ह्लादेकमई वाणी का प्रसार किया है।"[1] उनका गीतकार उक्त कृति में अपना सर्वोच्च स्थान प्राप्त करता है। ये गीत करुणा के स्वरों में भरे डूबे हैं। विषय निरूपण की दृष्टि से ही नहीं भाव, छंद-विधान और गेय तत्व की दृष्टि से ये गीत उत्तम बन गये हैं। आशा, निराशा, स्मृति, चिन्तन, प्रतीक्षा और कातरता के मधुर क्षणों को उन्होंने साकार कर दिया है।

भाषा तथा भाव की सफाई बच्चन के पूरे काव्य साहित्य में उपलब्ध है। "प्रणय-पत्रिका" के गीत भी इसकेलिए अपवाद नहीं हैं। भाषा की संगीतात्मकता, शब्द और छवि का लय-आश्रित रूप पूर्ण रूप से यहाँ सुरक्षित है। अनुभूति और अभिव्यक्ति की सहजता के कारण ही भाषा की स्वर-योजना भी सरल दीखती है।

रेख लोहू की लगाकर आ रहा हूँ
मैं अधर की मेखला पर,
शक्ति अंबर में परीक्षित, भक्ति की
लूँगा परीक्षा मैं धरणि में।[2]

शब्दों का सुव्यवस्थित प्रयोग

भाषा में अलंकरण तत्व अधिक नहीं है। उनकी पदावली की विशेषता यह है कि वहाँ क्रियापद, अव्यय, कारक, ह्रस्वत्व, दीर्घत्व तथा लय की

---

1. जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 7?
2. बच्चन - प्रणय-पत्रिका - पृ: 119

एकतानता भी रहती है । शब्दों के सुव्यवस्थित प्रयोग से भाषा में ऐसी अद्भुत शक्ति आ जाती है कि वह मानव के अंतरजगत के अनंत अर्थ-आशयों को अभिव्यक्त करती है । इनकी भाषा प्रभावमय और प्रवाहमयी है । उन्होंने अपनी प्रणय-भावना और प्रेमिका आदि को नये रूप में देखा है । प्रणय की भावना को सशक्त बनानेवाली सरस भाषा की झांकी देखिए -

"सिंदूरी मंजरियों से है
अंबा शीश सजाए,
रोलीमय संध्या उषा की चोली है ।
तुम अपने रंग में रंग लो तो होली है ।"[1]

जीवन का पूरा इतिहास

तेजी के रूप में बच्चन को एक ऐसी जीवन संगिनी मिल गई जो अब तक जीवन में हर कदम पर बराबर उनके साथ हैं । "प्रणय-पत्रिका" की प्रत्येक पंक्ति और शब्द के पीछे कवि के जीवन का पूरा इतिहास छिपा हुआ होता है । "निश्चय ही दांपत्य प्रेम के क्षेत्र में विविधता, श्रेष्ठता एवं निष्ठा की दृष्टि से बच्चन हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ गीतकार हैं ।"[2] उन दांपत्य-गीतों में बच्चन के अत्यंत निष्ठावान, अनुरक्त एवं रस-प्रवण हृदय का परिचय प्राप्त होता है ।

प्रेम और वासना में अंतर बताते कवि कहते हैं - "प्रेम अमिट पिपासा है, पर वासना नहीं । वासना के अमर होने पर आदमी उसमें मर मिटता,

---

1. बच्चन - प्रणय पत्रिका - पृ: 48
2. आशा किशोर - आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य का स्वरूप और विकास - पृ: 52

प्रेम तो वह धन है जिसकी खोज मनुष्य शरीर, प्राणों, हृदय, बुद्धि से करता रहता है उसे पाकर और कुछ पाने की अभिलाषा शेष नहीं रह जाती । बच्चन मानते हैं कि जीवन की भावनाओं और प्रतिक्रियाओं की तीव्रता से ही कविता प्रसूत होती है और जितने हृदयों में कवि की सम एवं सह अनुभूति होती है उतने हृदयों में ध्वनित होती है ।"[1] "प्रणय-पत्रिका", के गीत कवि के सम और सह अनुभूतियों का प्रकटीकरण करते हैं ।

प्रेम का नि:संग चित्रण

"प्रणय-पत्रिका" में प्रेम की सूक्ष्म भावनायें, उनका विस्तृत बोध और उनके नि:संग चित्रण ने उक्त रचना को नये गीत काव्य की प्रतिनिधि रचना का स्थान प्रदान किया है । इसके गीत बच्चन की प्रतिभा के अप्रतिम चिह्न हैं । इन गीतों में राग तत्व, कल्पना-विलास, अखण्ड रस-माधुर्योपलब्धि आदि का अप्रतिम सामंजस्य हुआ है ।

बच्चन जीवन और जगत के कवि हैं । वे नित-नूतन माधुरिक गीतों के सफल गायक हैं । इन दो कृतियों के अध्ययन से हमें मालूम होता है कि अपने मन के आवेग-संवेगों को गीतों में सहज रूप से उतारने की कला बच्चन को उपलब्ध हो गयी है ।

छायावादोत्तर युग के गीतकारों में बच्चन का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है । उन्होंने अपनी सहज अनुभूति, संगीतात्मकता और बोलचाल की भाषा के द्वारा गीतों की रचना करके हिन्दी के सहृदय पाठकों को अनुग्रहीत

---

1. बच्चन - आरती और अंगारे भूमिका - पृ: 17

किया है । गीतकार के रूप में उनकी महत्ता स्मरणीय है । बच्चन ने अपनी हृदय वीणा को गीत के सुर से झंकृत किया है । "मिलन यामिनी" और 'प्रणय-पत्रिका" दोनों रचनाओं में उन्होंने प्रणय के संयोग और वियोग पक्ष को अत्यधिक असरदार रूप में पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है ।

छठा अध्याय

बाह्य के प्रति जागरूकता

बच्चन जी की कुछ परिवर्तित रचनायें उनके परिवर्तित दृष्टिकोण का परिचय देती है । अब उनका निरंकुश व्यक्तित्व सामाजिकता के साथ समझौता करता दिखाई पडता है । वह अपने रंग महल से निकलकर बाहर की दुनियाँ के दु:ख-दर्द को भी देखने का प्रयास करता है । साहित्य व्यक्ति या समाज की अनुभूतियों, भावनाओं और कल्पनाओं का ही रूप है, इसलिए साहित्य समाज का दर्पण कहलाता है । कविता के आत्मिक स्वरूप के साथ साथ कवि के काव्य-व्यक्तित्व से एक दूसरा रूप भी प्रारंभ से ही जुडा हुआ है । वह है बाह्य के प्रति जागरूकता । एक ओर जहाँ उनकी कविता का मुख्य वर्ण्य जीवन के सुख दु:ख की अभिव्यक्ति है, वहाँ दूसरी ओर राष्ट्र-प्रेम भी उसका अपरिहार्य विषय है । "धार के इधर उधर" "बुद्ध और नाचघर" आदि कृतियों में राष्ट्र प्रेम, विश्व प्रेम एवं मानव प्रेम को स्वीकार किया गया है ।

धार के इधर उधर

बच्चन ने काव्य-रचना में अपनी नैसर्गिक प्रतिभा का ही काफी उपयोग किया है । यह राष्ट्र के स्वतंत्रता संग्राम के भावों से प्रेरित है । इसके गीत सामयिक विषय प्रधान है । ये देशवासियों को अपने कर्तव्यपालन का बोध कराते हैं -

हल्का फूल नहीं, आज़ादी, वह है भारी जिम्मेदारी,
उसे उठाने को कन्धों के, भुजदंडों के, बल को तोलो ।[1]

---

1. बच्चन - धार के इधर उधर - पृ: 98

संग्रह में सरसठ कवितायें हैं । "प्रणय पत्रिका" के बाद बच्चन का गीतकार मूक हो चुका था । यह रचना उनके आत्मानुप्रेरित पूर्ववर्ती काव्य तथा व्यापक दृष्टिवाली परवर्ती काव्य के बीच की कडी है । जीवन की तीव्र धारा में भी सजग कवि सजगता से धार के इधर-उधर देखने में सफल रहे हैं ।[1] "धार के इधर उधर" लिखकर कवि एक नये आयाम का स्पर्श करते हैं । कुल मिलाकर अपना राष्ट्रधर्म निभाने का प्रयत्न तो बच्चन ने किया ही है । कहीं-कहीं संतुलित ओज भी लक्षित होता है ।"[2]

यथार्थ का चित्र

आशा और आकांक्षा के युग में बच्चन ने जोश, मस्ती और आशापूर्ण कवितायें लिखीं । उन्होंने तत्कालीन यथार्थ को अपने ढंग से रूप और आकार अवश्य दिया है । कवि ने यथार्थ का चित्र शहद में डुबोकर, इंगित मात्र से खींचा । धार के इधर-उधर में बच्चन जी की उक्त प्रक्षिप्त विचारधार कुछ मुखर हो उठी । आइरिस से निराशा मिलने पर "अपने अंधकार से उबरने पर मैं ने एक और अन्धकार देखा था जो संसार पर छा रहा था । एक हल्की सी अनुभूति हुई थी, अपना अन्धकार कहीं विश्व के अन्धकार से संबद्ध है । अपना अंधकार भी पूरी तरह तभी मिटेगा जब विश्व पर छाया अन्धकार भी मिटे ।"[3] "इस प्रकार की अनुभूति से जो कवितायें लिखते रहे कवि ने उन्हें "विकल विश्व" में रखने को सोचा था, किन्तु बाद में ये कवितायें "धार के इधर उधर" में प्रकाशित हुईं ।"[4]

---

1. बच्चन - धार के इधर उधर - पृ: 98
2. रेणु मलहोत्रा - बच्चन का परवर्ती काव्य - एक मूल्यांकन - पृ: 22
3. बच्चन - नीड का निर्माण फिर - पृ: 203
4. वही पृ: 302

राष्ट्रीय चेतना

"भारत माता का मंदिर", "अग्नि परीक्षा", "मानव का अभिमान", "कल्ण पुकार", "विप्लव गान" आदि धार के इधर की रचनायें हैं । उधर की रचनाओं में सांप्रदायिक पूर्वाग्रह, धर्मान्धता, और देश विभाजन के भीषण परिणामों की ओर संकेत है । "धार के इधर उधर" में कवि ने अपने राष्ट्रीय आदर्शों की उचित अभिव्यंजना की है ।

संघर्ष की भावना

देश को स्वतंत्र, संपन्न और सुखी देखकर कवि के स्मृति-पट पर उन का सारा संघर्षमय जीवन चलचित्र की तरह नाच उठा हम संघर्ष-काल में जन्म, ऐसा ही था भाग्य हमारा । पर संघर्ष ही तो जीवन है । इसलिए आनेवाली पीढ़ी को संघर्षों केलिए तैयार करते हुए वे कहते हैं -

और हमारी संतानों के आगे भी संघर्ष खडा है ।
नहीं भागना संघर्षों से इसी लिये इंसान बडा है ।[1]

उनके समर्थन में साथ ही यह घोषणा भी कर देते हैं कि "मैं हूँ उनके साथ खडी जो सीधी रखते अपनी रीढ"[2]

युद्ध कामी राष्ट्रों के प्रति विरोध

"रक्त स्नान", "अग्नि परीक्षा", "मानव का अभिमान", "युद्ध की ज्वाला", "मानव रक्त", मनुष्य की निर्ममता", "कल्ण पुकार" आदि

---

1. बच्चन - धार के इधर उधर - पृ: 101
2. वही पृ: 45

कविताओं में युद्ध कामी राष्ट्रों की पशुवत प्रवृत्ति का घोर विरोध प्रकट किया गया है । कवि विश्व के इस कुरूप तथा चरित्र का संशोधन चाहते हैं । कवि की राय में व्याकुलता का कारण आन्तरिक अव्यवस्था में है जहाँ स्वार्थ और भौतिकता की भूख मानसिक शान्ति को विनष्ट कर जग-जीवन को रौंदती है ।[1] सांप्रदायिक दंगे और देश-विभाजन केलिए ब्रिटिश शासकों की नीति पर आलोचना करते हुए कवि कहते हैं -

विदेश की कुनीति हो गई सफल
समस्त जाति की न काम दी अकल
सकी न भाँप एक चाल, एक छल
करके हमें
दिखा न फूल -
शूल में ।[2]

<u>शरणार्थियों की मनोदशा</u>

बच्चन ने शरणार्थियों की अंतर्वृत्तियों और मनोदशाओं का चित्रण भी प्रस्तुत किया है -

कैसे उन लाखों को सकते बिसार
पुश्तहा-पुश्त की धरती को कर नमस्कार
जो चले काफिले मीलों के, लिए आस
कोई उनको अपनायेगा बाहें पसार
जो भटक रहे अब भी सहते मानापमान
आज़ादी का दिन मना रहा हिन्दोस्तान ।[3]

---

1. बच्चन - धार के इधर उधर - पृ: 23
2. वही पृ: 87
3. वही पृ: 92, 93

नये दायित्व का बोध

इस प्रकार ये कवितायें राष्ट्रीयता एवं अंतर्राष्ट्रीयता की समस्याओं पर विचारात्मक प्रकाश डालती हैं । कवि ने स्पष्ट स्वरों में स्वाधीनता की प्राप्ति और नये दायित्वों की ओर संकेत किया है -

आज से आज़ाद रहने का तुझे है मिल गया अधिकार
किन्तु उसके साथ जिम्मेदारियों का शीश पर है भार ।[1]

पूर्ववर्ती और परवर्ती काव्य के बीच की कडी

संक्षेप में "धार के इधर उधर" में "द्वन्द्व" के सीमित मोह-भंग का प्रतिबिंबन हुआ है, इसलिए तो वह महत्वपूर्ण है ही, परन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण इसीलिए है वह बच्चन के पूर्ववर्ती-आत्मानुप्रेरित आत्मानंद केलिये लिखे काव्य और परवर्ती-व्यापक दृष्टि-फलक पर लिखे काव्य के मध्य सीमान्तक-काव्य (ट्रांजीशनल पोइट्री) की प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करता है ।[2] कहीं कहीं संतुलित ओज लक्षित होता है -

"सुयश मिला कभी नहीं पडा हुआ" ।[3]

यद्यपि काव्य का अभिव्यक्त पक्ष सबल नहीं है, परन्तु भावपक्ष की दृष्टि से इसका महत्व कम नहीं है ।

---

1. बच्चन - धार के इधर उधर - पृ: 83
2. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - पृ: 160
3. वही पृ: 67

निष्कर्ष

इस काव्य-संग्रह में मुख्यत: कवि ने राष्ट्र-धर्म निभाने का जो प्रयत्न किया है वह सफल हुआ है । राष्ट्र के स्वतंत्रता-संग्राम के भावों से अनुप्राणित होकर इसकी रचना हुई है । कवि के मन में देश के विभाजन पर क्षोभ की भावना है । यहाँ आकर बच्चन की दृष्टि बाह्य परिवेश की ओर गयी है । इस की भाषा अभिधात्मक है और सरल है । कविताओं की पंक्तियाँ उनके राष्ट्रीय आदर्शों की उचित अभिव्यंजना करने में सक्षम हुई हैं ।

आरती और अंगारे

"आरती और अंगारे" सन् 1958 की रचना है । इसमें कवि ने हृदय के हाव-भावों, स्मृति और विस्मृति, हास और रुदन सभी को प्रौढ रूप में ढाला है । इसको दो भागों में विभाजित किया जा सकता है । पूर्व भाग में देश विदेश के महान कवि, कलाकारों एवं कवि पिंड निर्माण में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में आनेवालों की प्रशस्ति करते हुए विनीत भाव से आरती उतारी गयी है । उत्तर भाग में व्यावहारिक जीवन-दर्शन, संघर्ष-शीलता एवं साहित्यिक मान्यताओं के अभिव्यक्तिकरण में कवि का आक्रोश, विद्रोह और पुराने में नव्यपरिवर्तन की कामना के प्रज्वलित अंगारों का ताप है ।

पूर्व आचार्यों की वन्दना

पूर्व भाग में उन कवियों की स्तुति या आरती है जिन्होंने अपनी-अपनी भाषा में जन-जीवन की भाव-राशि को प्रकट किया है । इस भाग में वाल्मीकि, जयदेव, विद्यापति, मीरा, कबीर, जायसी, तुलसी, भारतेन्दु

उमर खय्याम, रवीन्द्र, ईटस आदि कवियों की स्तुति की गई है -

"मैं नतशीश तुम्हारे आगे, आयर के शायर अभिमानी ।
याद करूँगा सबसे पहले
मैं तो यह वरदान तुम्हारा -
तुमने "गीतांजलि" के भावों
को अंग्रेज़ी में अवतारा ।"[1]

पारिवारिक जीवन का वातावरण

कुछ कविताओं में कवि के पारिवारिक जीवन का वातावरण भी अंकित हुआ है । अनुज शालिग्राम चंपा, श्यामा, माता, पिता आदि के प्रति इनमें प्रणत होते हैं । लगता है कि बच्चन इन सबसे प्रभावित, सहानुभूति पाते हुये साधारणीकृत हो गए हैं ।

उत्तर भाग

उत्तर भाग की कविताओं में बच्चन ने दंभियों-दुराग्रहियों के चरित्र पर करारी चोट की है । "आरती और अंगारे" में जहाँ एक ओर लघुता से प्यार की प्रवृत्ति पाई जाती है, वहीं दूसरी ओर गरिमा के प्रलोभन का तिरस्कार भी अभिव्यक्त हुआ है -

राज उन्हें करने को दो तुम राज सिंहासन
प्यार मुझे करने को तिनकों का घर भर दो ।[2]

---

1. बच्चन - आरती और अंगारे - पृ: 74
2. वही पृ: 162

कर्मठता में विश्वास

मानव-मन के सारे संवेगों को ही विभिन्न स्थितियों में बच्चन ने कविता का रूप दिया है । वे तट पर खडे रहकर तैरनेवालों को देखने में खुशी का अनुभव करनेवाले नहीं, अपितु स्वयं हर लहर की शक्ति को उसके बीच जाकर जाँचने में विश्वास करनेवाले हैं । वे निष्क्रियता के कट्टर विरोधी और कर्मठता में विश्वास करनेवाले हैं -

कान करनी चाहिए जो कुछ तजुर्बे-
कार लोगों ने कही है ;
स्वप्न से लड स्वप्न की ही शक्ल में है
लौह के टुकडे बदलते
लौह-सा वह ठोस बनकर है निकलता जो कि लोहे से लडा है ।[1]

स्वजनों के जीवन के प्रति भावात्मक संबंध

बच्चन का पाठक जो कभी उनके अपने दु:ख से प्रभावित था जिसने उनके हास और पीडा को अपना मान लिया था, अनायास वह आरती की उन कविताओं की प्रशंसा करने लगेगा जो कवि के पिता, पितामह, माँ तथा गाँव के लोगों का एक सहज साथ ही सफल रूप उसके सामने प्रस्तुत करते हैं । "आरती" खंड की कविताओं में बाह्य जीवन के प्रति कवि का भावात्मक संबंध अधिक है ।

---

1. बच्चन - आरती और अंगारे - पृ: 143

संघर्षशीलता

कवि के अनुसार संघर्षरहित जीवन पथ तो कायरों के होते हैं ।[1] संघर्षशील व्यक्ति जो कार्य करता है वह संपूर्ण लगन से तन-मन से करता है ।[2] कहीं भी वह हार कर बेठ नहीं जाता, वरन् कठिन परीक्षा देने केलिये सदैव तत्पर रहता है । बच्चन यहाँ तक आते आते मृत्यून्मुखी-दृष्टि का तिरस्कार कर चुके हैं । "आरती और अंगारे" के कवि में एक ओर तो मृत्यु के आगमन पर जीवन का मोह उनकी आशावादिता को व्यक्त करती है -

"तुम कौन । मौत । मैं जीने को ही जोग जुगत में लगा रहा ।"
बोली, मत घबरा, स्वागत का मेरे, तूने सबसे अच्छा सामान किया मैं ने
जीवन देखा, जीवन का गान किया ।[3] दूसरी ओर मृत को जीवन दान देने
की घोषणा भी आस्था के स्वरूप का परिचय देती है -

मैं अभी मुर्दा नहीं हूँ
और तुमको भी अभी मरने न दूँगा ।
मैं अभी ज़िन्दा ; अभी यह
शव परीक्षा मैं तुम्हें करने न दूँगा ।[4]

---

1. बच्चन - आरती और अंगारे - पृ: 138
2. वही पृ: 137
3. वही पृ: 226
4. वही पृ: 242

नये का स्वागत और नवीन क्रांति

"अंगारे" नवीन क्रांति और "आरती" नये का स्वागत और पुराने के विदा गीत दोनों का ही प्रतीक बना है । कवि ने इसमें प्राचीन परम्परा का भी नूतन निर्वाह किया है । "कहने की आवश्यकता नहीं कि एक ओर कोमल विद्रोह और दूसरी ओर बेजान रूढियों को भी विनम्र भाव से विरोधमयी शैली में व्यक्त करते जाना इस कृति का विशेषप्रदेय है । कवि का विद्रोह इतना कलात्मक है कि वह एक निर्माण का प्रेरक बन गया है" ।[1]

आत्मविश्वास की भावना

"आरती और अंगारे" में आरती-सा विनत समर्पण है तो अंगारों-सी उत्ताप्त भावों की वाणी भी । बच्चन की कविता मानव-मन का राग है, न देवी विदग्धता, न दानवी उच्छृंखलता । बच्चन के कवि को तो अपनी शक्ति का भरोसा है । इसलिए वे गाते थे -

और खुद को देखनेवाली नज़र, नीचे सदा रहती गडी रे ।
और जो ऊँचे उचकते, स्वाभिमानी, पैठ तू गहरे - गंभीरे ।"[2]

अभिव्यंजना पक्ष

पहली बार यहाँ आधुनिक हिन्दी कविता की ।प्रयोगवादी तथा नयी कविता की। भाषा का अनगढ और अटपटापन बच्चन की काव्य भाषा

---

1. हरस्वरूप पारीक - बच्चन का परवर्ती काव्य - पृ: 18
2. बच्चन - आरती और अंगारे - पृ: 212

में दिखाई देने लगता है ।[1] उन्होंने कहीं कहीं साधारण जीवन से शब्दों को ज्यों का त्यों उठा लिया है ।

"इस रूपहरी चांदनी में सो नहीं सकते पखेरू और हम भी ।[2]

इस दृष्टि से "आरती और अंगारे" का अपना महत्व बढ ही जाता है । लेकिन गेयता और "तुकान्त छन्द" के मोह से कवि मुक्त नहीं हुए हैं । वे कहते हैं -

"जो कौम नहीं गाती है वह मिट जाती है ।"[3]

कवि ने अपने सृजन को अनुभव, अनुभूति और अभिव्यक्ति का व्यापक आयाम दिया है । केन्द्र मानव है, मानवता की आरती ही उनकी आरती है । कवि की विचार धारा यों प्रकट हुई है -

गीत वही बैठेगा सबको, जो दुनिया की पीर सके ले ।[4]

संघर्ष-प्रिय कवि की दृष्टि में संसार कायरों केलिये नहीं हैं - वे सरल भाषा में कह उठते हैं -

कांटों से जो डरनेवाले । मत कलियों से नेह लगाएँ,
घाव नहीं है जिन हाथों में । उनमें किस दिन फूल सुहाए ।
नंगी तलवारों की छाया । में सुन्दरता विहरण करती ।[5]

---

1. "तुमने कुछ ऐसा गोलमाल कर रक्खा था
   खुद अपने घर में नहीं खुदा का राज मिला ।
   - बच्चन - आरती और अंगारे - पृ: 230
2. वही - पृ: 170
3. वही - पृ: 69
4. वही - पृ: 224
5. वही - पृ: 174

साहित्यिक मान्यतायें

बच्चन के पद्य लेखन में काव्य के स्वरूप, काव्य की आत्मा, काव्य के प्रयोजन, काव्य के तत्व, काव्य के वर्ण्य-विषय और काव्य शिल्प-विषयक विचारों का विस्तार परिलक्षित होता है । काव्य-कला की अग्रगति के पीछे जन-मानस चलता रहे, इसकेलिये आवश्यक है कि कविता जीवन के निकट संपर्क में रहे । बच्चन ने लिखा है -

"कविता जगती के आँगन में जीवन की किलकारी ।[1]

बच्चन की राय में कविता विचारों की तीव्रता, भावों की सजीव सहजता, जीवन की अनुभूति और रुचिकर रागात्मकता का सम्मिश्रण है । रस बच्चन की दृष्टि में काव्य का केन्द्रीय तत्व है और यह कथन उनकी कविताओं की निपट रसात्मकता से भी पुष्ट होता है -

~~[illegible]~~
रस अर्थ रहित ध्वनियों में मैं क्या गाऊँ ?[2]

अतीत में भविष्य और वर्तमान में इतिहास का सम्मिश्रण सदा से हो रहा है । भूमिका में कवि ने जिक्र भी किया है - "जैसे मेरे कल के व्यक्तित्व में आज का व्यक्तित्व बीज रूप से वर्तमान था, वैसे ही मेरे आज के व्यक्तित्व में मेरे कल का व्यक्तित्व भी समाया है, वैसे ही "मधुशाला" में भी "आरती" का कुछ प्रकाश और "अंगारे" की कुछ चिनगारियाँ मौजूद

---

1. बच्चन - आरती और अंगारे - पृ: 53
2. वही पृ: 32

थीं और "आरती और अंगारे" में मधुशाला का राग रंग किसी न किसी रूप में समाया हुआ है और इसी प्रकार मेरी आगे की रचना में भी "आरती" का कुछ धूप और "अंगारे" का कुछ ताप रहेगा ।[1] अतः सिद्ध है कि प्रस्तुत रचना पूर्ववर्ती तथा परवर्ती काव्य के मध्य सशक्त सेतु है ।

निष्कर्ष

नाम से ही ज्ञात होता है कि इस रचना के दो भाग हैं । एक है महान कवियों तथा कलाकारों की आरती और दूसरा है नव्य परिवर्तन की कामना के प्रज्वलित अंगारे । इस संग्रह में बच्चन को हम कर्मठ, संघर्षशील और आस्थावादी के रूप में देख सकते हैं । इस रचना में उन्होंने दंभियों और दुराग्रहियों पर तीखा व्यंग्य किया है । इस संग्रह की कविताओं में गेयता का गुण आ गया है ।

बुद्ध और नाचघर

इसकी रचना 1958 में हुई थी । इसकी बडी विशेषता है कि यहाँ पर कवि की भावधारा के साथ ही भाषा व अभिव्यक्ति का ढंग भी बदल गया है । कवि के प्रवास्न काल में रचित होने के कारण इसपर पाश्चात्य प्रभाव स्पष्ट रूप से पडा है ।

मुक्तछन्द

छंद सीमित भावों-अनुभूतियों का क्षेत्र है, कविता के विकसित होते क्षेत्र केलिये मुक्त छंद को अपनाना पडेगा । बच्चन ने 1943 में बंगाल का काल

---

1. बच्चन - आरती और अंगारे - भूमिका - पृ: 10

शीर्षक लम्बी कविता मुक्त छंद में लिखी थी । लेकिन इसका स्वर आक्रोश और जोश से सहसा कंठ में आ बसनेवाला स्वर है । दूसरी रचना भारत विभाजन संबंधी थी जो विभाजन से पूर्व लिखी और विभाजन के बाद नष्ट कर दी गई ।"[1] इसके संबंध में बच्चन जी ने लिखा है - "सन् 1944 के बाद से कभी कभी मेरे मन में इस प्रकार की भावनायें उठती थीं जिन्हें लगता था मैं गीतों में नहीं बाँध सकूँगा और मुक्त छन्द ही उनकेलिए उपयुक्त माध्यम है ।"[2]

विदेशी प्रभाव

कवि के वर्तमान मुक्त छंद पर विदेशी प्रभाव पडा है । बच्चन जी बताते हैं - "आधुनिक अंग्रेजी कविता का स्वर आवेश - प्रसाद का नहीं, गंभीर विचारक का है, वह ऐसे वक्ता का है, जो ऐसे अनुभवों को वाणी दे रहा है, जो उसके ही नहीं उनके साथियों के भी है, वह कैसे किसी बात को बढा चढाकर कहे ? कवित्व की गरिमा से कहना दूसरी चीज़ है, वह ऐसे व्यक्ति का स्वर है जो अन्तर्द्वन्द्वों के विश्लेषण में अपने युग, अपने समाज का विश्लेषण कर रहा है, अथवा जग-जीवन की विविध असंबद्धता में संबंध खोज रहा है । इसको व्यक्त करने केलिए एक ऐसी शैली की आवश्यकता होती है जिसमें वार्तालाप की स्वाभाविकता होती है जीवन की साँसों का उतार-चढाव हो, फिर भी वह भाव और विचार-विदग्धता से इतनी अनुप्राणित हो कि गद्य के धरातल पर गिरकर निर्जीव और सिलपट न हो जाय ।"[3] इसी शैली को सुसंबद्ध ढंग से कवि ने अपनाया है ।

---

1. बच्चन - बुद्ध और नाचघर - पृ: 13
2. वही पृ: 12
3. वही पृ: 15

व्यंग्यात्मकता

"बुद्ध और नाचघर" में कुल अठाईस गीत हैं । उनमें कुछ लंबे हैं । "बुद्ध और नाचघर" पाँच पृष्ठों से भी बडी है और "नया चाँद" आकार में सबसे छोटी रचना है । इस कृति में गीत और लय का तादात्म्य और भावों-विचारों का सौन्दर्य विद्यमान है । इसके द्वारा बच्चन ने व्यंग का पैना डंक धारण किया है । इसमें बच्चन ने ह्रास शील जीवन बिताने-वाले लोगों पर तीखा व्यंग्य कसा है जो अपनी मान्यताओं को सुविधानुसार परिवर्तित कर लेते हैं । बच्चन की मान्यता है कि संस्कृति के प्रति विवेकपूर्ण रागात्मक दृष्टिकोण अपनाना अनिवार्य है -

"बुद्ध भगवान
अमीरों के ड्राइंग रूम
रईसों के मकान,
तुम्हारे चित्र, तुम्हारी मूर्ति से शोभायमान
पर वे हैं तुम्हारे दर्शन से अनभिज्ञ
तुम्हारे विचारों से अनजान ।"[1]

एप्रोच की नवीनता के साथ आक्रोश और क्षोभ को भी यहाँ वाणी मिली है । बुद्धिजीवियों को आज के संदर्भ में सहज मनोरूप में प्रस्तुत किया गया है । इसकेलिए कटु होकर पहली बार कवि ने काव्य में व्यंग्य-प्रयोग शुरू कर दिये । "डॉ.राम विलास शर्मा ने इस कविता के माध्यम से बच्चन के व्यंग्य को नयी कविता के कतिपय चलताऊ व्यंग्य कथनों से कहीं अधिक श्रेष्ठ घोषित करते हुए उसे बच्चन की श्रेष्ठ रचना माना है ।"[2] आक्रोश की मुद्रा का उदाहरण देखिए -

---

1. बच्चन - बुद्ध और नाचघर - पृ: 174
2. डा.राम विलास शर्मा - आस्था और सौन्दर्य

..... उसी दिन
विधाता के मुंह पर थूक
दुनियाँ को लगा दो लात
कर लूँगा आत्मघात ।"[1]

यह कथ्य की सफाई और सहजता से भरपूर है । इसमें जो भी रचनायें हैं वे जीवन के कडवे अनुभवों से संबद्ध हैं । व्यंग्य के तीखेपन की ओर कवि का रुझान यहीं से आरंभ होता है । "बुद्ध और नाचघर" शीर्षक कविता स्वयं एक बहुत तीखा व्यंग्य है -

अहिंसा के अवतार,
परम विरक्त,
संयम साकार,
मची है तुम्हारे सामने रूप यौवन की ठेल-पेल ।[2]

बुद्ध के सिद्धान्तों के विरुद्ध की पूजा करनेवालों की आलोचना करते हुए कवि कहते हैं -

जहाँ खुदा की नहीं गली दाल,
वहाँ बुद्ध की क्या चलती चाल,
वे थे मूर्ति के खिलाफ,
इसने उन्हीं की बनाई मूर्ति
वे थे पूजा के विरुद्ध
इसने उन्हीं को दिया पूज ।[3]

---

1. बच्चन - बुद्ध और नाचघर - पृ: 90
2. वही - पृ: 175
3. वही - पृ: 173-174

नई दिशा का बोध

"सृष्टि", "पूजा", "तप", "वरदान", चिन्तन प्रधान और दार्शनिक भंगिमा की कवितायें हैं । हिन्दू और मुसलमान साम्प्रदायिक एकता की भावना से प्रेरित हैं । "रेगिस्तान का सफर", "कडुआ अनुभव", "चोटी की बरफ", "बुद्ध और नाचघर" आदि कवितायें कवि ने इंग्लैंड में ही लिखीं । "चोटी की बरफ" में चोटी की बरफ और सतह की मिट्टी दोनों प्रतीकात्मक रूप में प्रयुक्त हुए हैं । वैचारिक क्रान्ति, मानवीय संवेदना और व्यंग्य-दंश के कारण मुक्त छंद में लिखी हुई यह रचना हिन्दी कविता को नई दिशा प्रदान करती है ।

सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार

"आरती और अंगारे" में परवर्ती काव्य के जो बीज अंकुरित हुए थे वे यहाँ बडी सावधानी से थोडे बढते हुए दिखाई देते हैं । इसमें कवि की शैली सामाजिक संदर्भों को छूती हुई कटु आलोचना और तीखे प्रहार मुक्त छंद में बडी सफलता से बढती गई है । सामाजिक कुरीतियों और समकालीन बुद्धिजीवियों की कमज़ोरियों और गुण-अवगुणों आदि पर व्यंग्य बुद्ध और नाचघर" का सशक्त कथ्य है । शुक्लजी द्वारा मान्यता प्राप्त काव्य की अभिधा - शक्ति का कौशल "शैल विहंगिनी" और "बर्फ की चोटी में दिखाई पडता है ।

इस कृति के पढने पर हमें यह स्वीकार करना पडेगा कि कवि इसमें शिल्पी बने हैं । उन्होंने काट छाँट कर विषय चुने हैं । बुद्धिमत्ता और चुनाव-शक्ति के गुण इसमें लक्षित होते हैं । इस रचना के प्रस्तुतीकरण में सुन्दरता

छिपी रहती है जिससे रचना चारु और प्रशंसनीय बन गई है । "संग्रह की सर्वाधिक लंबी कविता "बुद्ध और नाचघर" में कवि ने बुद्ध के सिद्धान्तों से अनभिज्ञ, प्रदर्शिनी प्रवृत्ति तथा खोखली ह्रास शील सभ्यता पर व्यंग्य करते हैं ।"[1] "इतनातीखा व्यंग्य मेरी लेखनी से आज तक नहीं उतरा । मैं खुद नहीं समझ पा रहा हूँ कि यह व्यंग्य बुद्ध पर है कि मानवता पर ।"[2]

अभिव्यंजना शैली की विशेषता

बोलचाल की भाषा

जहाँ तक बन पडा है बच्चन ने प्रकृति के अनुसार भाषा को जन-भाषा के ही अधिक निकट रखा है । अर्थात् इस कृति की भाषा बोलचाल की है । भावों की संप्रेषणीयता ही इस भाषा का अपना गुण-धर्म है -

"एक की बचा के आँख
दूसरे के बचा के कान,
उनमें भी होती है जान ?
उसे भी जो माने ?
उसका भी जो करें यकीन
उन रबर के पुतलों को
मेरी ठोकरें - एक - दो - तीन ।"[3]

---

1. श्रीमती सुधा बहन कनु भाई पटेल - बच्चन जीवन और साहित्य - पृ: 116
2. बच्चन - प्रवास की डायरी - पृ: 263
3. बच्चन - बुद्ध और नाचघर - पृ: 88

"बुद्ध और नाचघर" की भाषा आधुनिक हिन्दी कविता की भाषा है । उसमें वार्तालाप की सी आत्मीयता और स्वाभाविकता है -

"मौन गगन
मूक धारा,
डोलती नहीं है हवा ।
प्रकृति पर छाया एक भेद-भरा संताप,
माँ जैसे बैठी हुई बेटे का छिपाये पाप ।"[1]

<u>सार्थक शब्द-योजना</u>

बच्चन जी ने शब्दार्थ का सामंजस्य अपने काव्य में दर्शनीय ढंग से सजाया है । जो कवि ने कहना चाहा है वही अर्थ देने में उनके शब्द सफल हुए हैं । बच्चन ने यहाँ अपनी कल्पना और सृजन - सृष्टि का रहस्य स्वयं खोल दिया है -

"प्रलय के उर में उठी जो कल्पना वह सृष्टि ।
प्रलय पलकों पर पला जो स्वप्न वह संसार ।"[2]

संक्षेप में "बुद्ध और नाचघर" बुद्ध को घर में रखकर भी घर से निकाल देनेवाले तथा नाचघर तक पहुँचानेवाले व अंधानुकरण करनेवाले स्वाधीन भारत के प्रतिबिंबन का एक विशिष्ट प्रयास है ।"[3] और इस प्रकार यह रचना बच्चन के परवर्ती काव्य की एक परिचयात्मक भूमिका प्रस्तुत करती है ।

---

1. बच्चन - बुद्ध और नाचघर - पृ: 51
2. वही - पृ: 30
3. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन - व्यक्तित्व और कृतित्व - पृ: 178

प्रतीकात्मकता

"पपीहा और चील कौए", "चाँद और बिजली की रोशनी", "दिल्ली के बादल", "नागिन और देवकन्या" प्रतीकात्मक व्यंग्य कवितायें हैं । अपने हृदय की कोमलता और शरीर के अन्य अंगों की कठोरता को कवि ने नये प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त किया है -

"मेरा हृदय भरा है कोमल
बाकी जगह में हूँ वज्र कठोर
विद्यापति की प्रेयसी के बिलकुल विपरीत
जिसका कुसुम था सकल शरीर
हृदय था पाषाण ।"[1]

निष्कर्ष

निश्चित रूप से "बुद्ध और नाचघर" अपना एक अलग स्वत्व रखता है । यहाँ एक बात उल्लेखनीय है कि कवि जैसे अपनी पिछली भूमिका से सुख-दुःख, हास-विलास से अलग कट कर भारत के हृदय के पास पहुँच गये हैं । "बुद्ध और नाचघर" की कुछ रचनाओं से ऐसा लगता है कि कवि भारत की आत्मा को पहचान चुके हैं । "नीम के दो पेड" तथा "दिल्ली के बादल" कवि की इसी भाव-भूमि की ओर संकेत करते हैं । इस संग्रह की बडी विशेषता यह है कि यह रचना कवि की विभिन्न भाव स्थिति और विभिन्न मानसिक प्रतिक्रिया का परिचय देती है ।

---

1. बच्चन - बुद्ध और नाचघर - पृः 86

त्रिभंगिमा

नाम से ही यह स्पष्ट है कि इसमें तीन प्रकार की शैली में लिखी गयी कवितायें हैं - लोक गीत शैली, साहित्यिक शैली और मुक्तक छंद शैली । "त्रिभंगिमा" में कुल 77 कवितायें हैं - 24 लोकधुनाश्रित, 28 तुकांत छंदवाली तथा 25 मुक्त छंदवाली । इनमें जीवन का यथार्थ पहलू आकार पा सका है ।

लोक गीत शैली

सदियों से समाज के कंठ पर लोकगीत उतरते चढ़ते रहे हैं । समय समय पर पूर्व प्रचलित लोक धुनों पर लोक गायकों का हृदय झूला और उनका स्पन्दन जन जन के अन्तर फैल गया । बच्चन के लोकगीतों का आधार पूर्व प्रचलित लोक धुन हैं । ये लोकगीत मुख्यत: शहरी लोकगीतों की धुन के आधार को लेकर चले हैं । त्रिभंगिमा" में बच्चन ने वे राष्ट्र-व्यापी लोक-धुनें अपनायीं और उन्हें साहित्य के रंग पर चढ़ाया । इनमें हृदय की सरलता और भाव-प्रवणता [illegible] को नैसर्गिक अभिव्यक्ति मिली है । लोक-जीवन के मार्मिक संवेदनाओं और रससिद्ध स्वरों से उनके गीत अत्यधिक सजीव और लोकप्रिय बने हैं ।

यह ध्यान देने की बात है कि लोक धुनों पर आधारित खड़ीबोली में गीत लिखना बच्चन का अभिनव प्रयोग तो था ही । "इस प्रयोग के मूल में लोकगीतों का वह आकर्षण ही था, जिसे नगरनिवासी कभी-कभी ही अनुभव कर पाते थे । मस्ती का आलम जो "लोकांचलों" में बिखरा मिलता है, नगर-निवासी प्राय: उसकेलिये तरसते ही रहते हैं । इन गीतों का आधार

उन्हीं धुनों ने लिया, जो थीं तो ग्रामीण, परन्तु नगर का आदर सत्कार भी भोग चुकी थी ।"[1]

आध्यात्मिकता की पुट

पहला गीत है नैया जाती है । जीवन की नौका चली जा रही है । समय अनुकूल है । जिसको चढना हो वह इस पर चढकर कर्म के सिन्धु का संतरण कर सकता है अन्यथा जीवन की नौका के निकल जाने के बाद प्रायश्चित्त के अतिरिक्त कुछ भी हाथ नहीं लगते । "पगला मल्लाह", "नील परी", "मनसंवरी", "आंगन का बिरवा, "आ गया धार और "लेटी हुई दुनिया" में आध्यात्मिकता की पुट है ।

ग्राम्य वातावरण

"सोन मछरी", "लाठी और बांसुरी", "माटी की महक", "आज दीवाली", "धारा में बहता फूल", "भीगी सहेलियाँ, "किसान का गीत" तथा "महुआ के नीचे" गीतों में ग्राम्य जीवन तथा वातावरण का सजीव चित्रण हुआ है । कथोपकथन को आधार बनाकर काव्य-कथा को आगे बढाना लोक गीतों की विशेष उल्लेख्य परंपरा रही है । आज भी तो प्रिया स्वर्ण की माँग करती है । सोन-मछरी लाने केलिये गया प्रिय जब सोन मरी लेकर लौटता है तो प्रिया व्यथित हो जाती है । वह स्वयं अनुभव करती है -

जो है कंचन का भरमाया
उसने किसका प्यार निभाया
मैं ने अपना बदला पाया
माँगी मोती की लरी, पाई आँसू की लरी ।"[2]

---

1. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन - एक व्यक्तित्व एवम् कृतित्व - पृ: 178
2. बच्चन - त्रिभंगिमा - पृ: 28

नैसर्गिक प्रेम की आभा

बच्चन की इस कृति में प्रेम की पीडा है, रूमानी वातावरण है । इसमें एक संतुलित प्रौढि का प्राप्त प्रेम की नैसर्गिक आभा है । कुछ कवितायें ऐसी होती हैं जो अत्यन्त भाव-प्रवण हैं और सीधे सीधे शब्दों में जीवन के चिरन्तन सत्य की अभिव्यक्ति करती हैं । जहाँ लोक धुनों पर आधारित गीतों में प्रेम और दर्शन लोक-संस्कृति के आँचल में बँधे से जाते हैं, वहाँ का दृश्य बडा ही मर्मस्पर्शी हो जाता है । "गोरी नागिन" शीर्षक कविता में कवि कहते हैं -

ओरी मोरी तेरा होरी गोरी नागिन का डँसा ।
गोरी नागिन का डँसा, गोरी नागिन का डँसा ।[1]

लोक-शब्दों का उचित उपयोग

किसान तो दो समय नमक के साथ रोटी पाजाने में ही संतुष्ट हो जाता है । परन्तु अपने साथ ही वह साधु, चिडिया, श्वान, भिक्षुक आदि को भी साथ रखता है । उसका हरा खेत सभी केलिये भरा हुआ है -

पाहुन को जीवन
कुनबे को भोजन
साधू को भिच्छा
कुत्ते को जूठन
जिस घर में उसको महलिया तिहाए ।
खेत हरियाये तो मन हरियाए ।[2]

---

1. बच्चन - त्रिभंगिमा - पृ: 66
2. वही पृ: 52

"पाहुन", "कुनबा", "जूठन" तथा "भिच्छा" शब्द इस बात के प्रमाण हैं कि कवि ने लोकशब्दों को पचाने की भरसक कोशिश की है । कोई इन भावपूर्ण गीतों को भावात्मक तादात्म्य इनसे स्थापित करके समझ सकता है । एक ध्वन्यात्मक चित्र द्रष्टव्य है -

ढोलक की लय पर
चक्की की घुर-घुर
चर्खे की घुर-घुर
गागर उठाता है, पायल बजाता हैं पांव रे ।"[1]

"इस प्रकार के गीतों में स्वर-माधुर्य, व्यंजना, सहज भाव-व्यापार एवं किसी रूमानी मिथ का अत्यन्त कलात्मक योग होता है जिससे रस पा लेना सहृदय पाठक केलिये कठिन कार्य नहीं हो सकता ।"[2]

साहित्यिक गीत शैली

अध्यात्म अनुभूति का सहज संवेद्य रूप

"त्रिभंगिमा" के मध्य भाग के कुछ गीत अध्यात्म विषयों को अभिव्यक्त करते हैं । कुछ गीतों में कवि की संपूर्ण जीवन यात्रा और उपलब्धि के प्रति एक नाटकीय दृष्टिपात प्रतीत होता है -

"जब इतने श्रम-संघर्ष से
मैं कुछ न बना, मैं कुछ न हुआ,
तो मेरी क्या, तेरी भी इज्जत इसमें है,
मुझ मिट्टी से तू अपना हाथ हटाए रह ।"[3]

---

1. बच्चन - त्रिभंगिमा - पृ: 40
2. डॉ.जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन - व्यक्तित्व और कवित्व : पृ: 95
3. बच्चन - त्रिभंगिमा - पृ: 85

"दूसरी भंगिमा की रचनायें जहाँ एक ओर नियतिपरक, वैराग्यमूलक और लोकोत्तर भावों की प्रवृत्तियोंवाली रचनायें हैं, वहीं दूसरी ओर सहज आस्वादक और आसक्तिमूलक रचनायें भी ।"[1] "युगदीप", "जादूगर का जादू", "गत और अनगत", "राह राह प्रीति पर", "जीवन मुक्त" आदि नियति प्रधान रचनायें हैं । त्रिभंगिमा की कुछ कवितायें अदम्य जिजीविषा और आस्था को व्यक्त करती हैं । आंचलिकता, मार्मिक अभिव्यंजना, सूक्ष्मता और अनुभूति का सहज संवेद्य रूप इसमें दृष्टिगत होता है ।

मुक्त छंद शैली

समकालीन जीवन की विडंबना पर प्रहार

तीसरे प्रकार की रचनाओं में जीवन की सम-विषम स्थितियों व ज्वलंत अनुभव को कवि ने वाणी दी है । तीसरी भंगिमा की कविताओं में नये-पुराने का संघर्ष, बनावटी आधुनिकता, मूल्यों के विघटन की प्रवृत्ति खुले या दबे देखने को मिलती है । अवसरवादी लोगों पर तीखा व्यंग्य कसा गया है -

भूमि आज खजूर धर्मा हो गई है
कहीं कुछ बीजों, लगाओ -
समय पाकर वह
प्रलम्ब खजूर में ही बदल जाता ।
भूमि भूला, गगन से नाता बनाता ।[2]

"त्रिभंगिमा" के कवि का स्वभाव ही व्यंग्य है । उनके व्यंग्य की सबसे बडी विशेषता यह है कि वह अधिकतर सरल और सहज है । सरकार की कच्छप

---

1. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - पृ: 184
2. बच्चन - त्रिभंगिमा - पृ: 219

गति, ग्रामीण जनता की अज्ञानता, सरकार की निष्क्रियता आदि पर उन्होंने निम्नलिखित पंक्तियों में कठोर व्यंग्य किया है -

आज चार हज़ार
साढे तीन सौ से तीस ऊपर
दिवस बीते रेंगते
सदेश पर, गणतंत्र दिवस का
बीस मील नहीं गया है ।[1]

युग चित्र

प्रत्येक जागरूक साहित्यकार के साहित्य में स्वभावत: युग चित्र मिल जाते हैं । समय और आयु ने बच्चन को मस्ती को तपाकर शुद्ध, परिपक्व बना दिया है । युग के साथ चलता हुआ जीवन व्यतीत होता है । उससे बच पाना आसान नहीं है । इसीलिये पूर्ववर्ती काव्य में अपने खोया-सा, मस्त, अन्तर्मुखी कवि बहिर्मुख हो गया -

"अब अपनी सीमा में बँधकर
देश काल से बचना दुष्कर ।"[2]

आज के युग में आस्था, विश्वास और जिजीविषा आदि निरन्तर क्षीण होती रही है । तब कवि की वाणी से सांत्वना और शक्ति प्राप्त होती है -

प्रकृति के जड बन्धनों से मुक्त भी
कुछ है कि जो, झुकता नहीं,
खंडित न होता,
और धराशायी न बनता ।[3]

---

1. बच्चन - त्रिभंगिमा - पृ: 216
2. वही पृ: 113
3. वही पृ: 207

जो लोग नाम कमाने केलिये 'प्रसिद्ध बनने' केलिये अपने सिद्धान्तों की बलि चढा देते हैं उनके प्रति कवि के मन में घृणा है । उनकी भर्त्सना करते हुए कवि कहते हैं -

"नाम पर ही
आज दुनियाँ चल रही है
चाल अपनी चल रही है,
और सबको छल रही है
नाम का जादू बडा है ।
क्रान्तिकारी वह न था छोटा -
कि जिसने कह दिया था -
नाम में भी क्या धरा है ।"[1]

साहित्यिक मान्यतायें

"त्रिभंगिमा" में कहीं कहीं युगीन विचारानुरूप कला और साहित्य-संबंधी पंक्तियाँ देखने को मिलती हैं ।

"जहाँ जान है, ताजगी है
कुशादगी है, उदारता है
उत्सर्ग है, दान है, बलिदान है
वहाँ कविता का मकान है ।"[2]

कविता को भाव-वैभव, विचार-गौरव, शिल्प-संयम, और सुथरी अभिव्यंजना प्रदान कर नये कवि न होते हुए भी बच्चन ने नयी कविता को नया आयाम दिया है । वैचारिक क्रान्ति, मानवीय संवेदना और व्यंग्य-देश

---

1. बच्चन - त्रिभंगिमा - पृ: 169
2. वही पृ: 137

के हेतु मुक्त-छंद में लिखा हुआ उनका काव्य हिन्दी कविता को नई दिशा प्रदान करता है । "त्रिभंगिमा" की तीसरी भंगिमा की कवितायें भी इस बात के अपवाद नहीं है । "त्रिभंगिमा" की तीसरी भंगिमा दूसरी भंगिमा की अपेक्षा अधिक सशक्त है । बच्चन का परवर्ती काव्य प्राय: मुक्त छंद में लिखा गया है ।

निष्कर्ष

"त्रिभंगिमा" में बच्चन ने लोकमन तथा जीवन के बडे ही आकर्षक चित्र खींचे हैं । लोकधुनाश्रित गीत शैली केलिए "त्रिभंगिमा" हमेशा स्मरणीय रचना रहेगी । इसमें भाषा, शैली, विषय और छंद का एक नवीन भूमिका पर अवतरण हुआ है । "त्रिभंगिमा" पढने के बाद हम कह सकते हैं कि "त्रिभंगिमा" बच्चन के परवर्ती काव्य का एक दृढ आधार प्रस्तुत करती है ।

चार खेमे चौंसठ खूँटे

इस संग्रह में सन् 1960-62 की रचनायें संग्रहित हैं । सत्य कहा जाय तो यह एक प्रकार से "त्रिभंगिमा" का ही विस्तार है । यह रचना भी लोक धुनों पर आश्रित है । इस संग्रह में कुल चौंसठ गीत हैं । इन गीतों में तन्मयता तथा शब्द शिल्प का स्वाभाविक नियोजन हुआ है । इस संग्रह में चार भंगिमायें मौजूद हैं । ये हैं - छंदयुक्त लयात्मक गीत, लोकधुनाश्रित गीत, मंच गान, और मुक्त छंद की कवितायें ।

कविताओं के साँचे में ढले खूँटों से बच्चन ने दृढता से काव्य-खेमे को गाड दिया है । इसमें कवि का विचारक सजग है । वे एक ओर जीवन

और जगत की समस्याओं के संबंध में विचार करते हैं तो दूसरी ओर युग-जीवन विशेषकर समकालीन जीवन की विडंबना पर प्रहार करते हैं । आलोच्य रचना में एक प्रच्छन्न रूपक भी बहुत सुन्दर बन पडा है - "बंजारा (कवि) लोक-सामान्य-जीवन की धरती पर अपनी नित्य सहायता से चौसंठ खेमों (कविताओं) के सहारे खेमा (काव्य-संग्रह) गाडता है जो अपने में नाटकीय ही नहीं मनोरंजक बिन्दु बनकर संपूर्ण कृति को अपनी धुरी के चारों ओर गति देता है ।"[1]

छंदयुक्त लयात्मक गीत

आध्यात्मिक झुकाव

छंदयुक्त लयात्मक गीत में 'चल बंजार", "चलते रहने के कुछ माने", "चलने की मज़बूरी", "मानुषावतार", "धरती कभी न धोखा देगी", "नभ का निमंत्रण", "बहुत दिनों पर", "बरस-तरस", प्रभु मंदिर यह देह, "भारत के यौवन का गीत" आदि गीत उल्लेखनीय हैं । इन गीतों में भारत की युवाशक्ति को संगठन शक्ति पहचान, हाथों में मशाल ले, रास्ते की रुकावटों को रौंद, मंजिल की ओर बढने की प्रेरणा देनेवाले कवि को संपूर्ण सृष्टि में प्रियतम ही नृत्यरत प्रतीत होता है । अडिग मन से आत्मा अपने प्रियतम के साथ लयबद्ध नृत्त में निरत है । "चल बंजारे" में कवि का मन रहस्य की ओर उन्मुख होता है ।[2] अज्ञात सत्ता-प्रभाव के निमंत्रण अनुभव से कवि महसूस करते हैं कि एक अलौकिक नव्य क्षितिज पुकार मनुहार कर उस ओर बुला रहा है ।[3]

---

1. रेणु मलहोत्रा - बच्चन का परवर्ती काव्य - एक पुनर्मूल्यांकन - पृ: 42
2. क्या फिर पट-परिवर्तन होगा ?
   क्या फिर से तन कंचन होगा ?
   क्या फिर अमरों - सा मन होगा ?
   आस लगा रे
   चल बंजारे । बच्चन - त्रिभंगिमा - पृ: 35।
3. वही पृ: 35

स्नेह सहयोग की भावना

"बरस-तरस" अवसरवादिता को त्याग समय पर सुख सुविधा देने और स्नेह सहयोग लेने को आधार बनाकर लिखा गया गीत है । यह गीत अपनी स्निग्धता तथा सरसता में अनूठा है ।

"मेरी अंतर्ज्वाला जागी,
अंबर ने बरसा दी आगी,
आकुल मेरा मन अनुरागी,
मेरे उच्छ्वासों का बादल
छाया नयनों में मँडलाकर ।[1]

लय-ताल युक्त गीतवाले खेमे में वही मिलता है जो आज तक उस माध्यम से प्राप्त हो रहा है । सचमुच दूसरे खेमे में जाने से पहले, पहले खेमे का संबंध एकदम टूटता भी नहीं । बाहरी लौट पर टूट भी जाये तो मानसिक और आन्तरिक स्तर पर छूटता नहीं । यही भाव-भंगिमा इस खेमे में दृष्टिगत होती है -

नयें क्षितिज की नई पुकारें,
नव-नव किरणों की मनुहारें,
किसको स्वीकारें - इन्कारें,
चाहक-भरा सारा नभ-मंडल,
निखिल धरा का अंचल महका ।
जिसको सारी धरती प्यारी
उसको कैसा मोह जगह का ।[2]

---

1. बच्चन - त्रिभंगिमा - पृ: 64
2. बच्चन - चार खेमे चौंसठ खूँटे - पृ: 40

भक्ति की भावना

बच्चन का व्यक्ति-मन अन्य भक्त कवियों के समान उतना आत्मविभोर, उतने उच्च स्तर का भक्त भले ही न हो, किन्तु वह जो कुछ कहता है बडा ही आकर्षक और बडा ही स्वाभाविक है । "प्रभु मंदिर" "यह देह री" गीत में आधुनिक मानव-मन का स्पर्श बडी ही सुगमता से हुआ है । इसमें भारतीय भक्त-कवियों का चिंतन मुखरित है -

"प्रभु-कृपा से पल-पल, रक्षित यह पंचमहला गेह, री ।
प्रभु-मंदिर यह देह री ।[1]

"लेकिन इस गीत में विनय के पदों का जैसा प्रभाव नहीं दीखता । यहाँ वृद्ध होते हुए कवि को प्रभु विषयक अस्वाभाविक-सी अभिव्यंजन प्रतीत होती है ।"[2] फिर भी बच्चन की आध्यात्मिक झुकाव से इन्कार नहीं किया जा सकता । "वे रूढियों के खिलाफ, झूठे धर्म के खिलाफ है, परन्तु उनको आत्मसमर्पण परकता को मधुशाला तक में देखा जा सकता है ।"[3]

2. लोकधुनाश्रित गीत

"बंजारे की समस्या", "फूटी गागर", "कुम्हार का गीत", "गाँव की नदी", "गंधर्व ताल", "आगाही", "हरियाने की लली", "स्मैया आदि इस कोटि में आते हैं । "बंजारे की समस्या" पूर्वाग्रहों के मोह-भंग के प्रतीक के रूप में लिखा गया है । इस खेमे के प्रत्येक लोकगीत के मूल में कोई न कोई

---

1. बच्चन - चार खेमे चौंसठ खूँटें - पृ: 54
2. डॉ.जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन - व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 103
3. राजानन्द - साहित्य संदेश - नवं-दिसं-1967 - पृ: 296

विशेष प्राप्तव्य हो रहा है । "फूटी गागर" पुराने जीर्ण-शीर्ण मूल्यों एवं प्रतिमानों के प्रतीक रूप में आयी है । पुरानी मान्यताओं की हालत तो उस कपडे की तरह हो गई जो इतना जीर्ण हो गया है कि "हाथ भर सिले, सवा हाथ फटे । लेकिन नवीन मूल्य ।नई गागरी। इतनी महँगी है कि उसे सब कहीं ग्रहण करने के नाम से ही मनुष्य काँप उठता है । इसी द्विविधा-ग्रस्त मानव-विवशता का चित्रण देखिए -

नई गगर को कीमत भारी,
और पुरातन से मैं हारी,
घट की भी तो है लाचारी,
किसको दोष लगाऊँ रे ।
जगह-जगह से गागर फूटी,
राम, कहाँ तक ताऊँ रे ।
ताऊँ रे, भर, ताऊँ रे ।[1]

"कुम्हार का गीत", समय की गतिशीलता एवं सृष्टि की विषमता में मानव की दुविधा एवं परवशता को दिखाता है ।"[2] गाँव की नदी बस्ती के पास से गुजरती है जिसका आदि और अन्त दोनों रहस्यमय हैं जो अनेकों की जीवन नैया को भंवर में डुबाती, कभी पार लगाती है -

कितनी नावें पार लगाती
कितनी नावें भंवर डुबाती
मेरी कागद की डोंगी को दुलारती चल जाय,
दुलारती चल ? जाय, हलराती चली जाय,[3]

---

1. बच्चन - चार खेमे चौंसठ खूँटे - पृ: 59
2. वही पृ: 61
3. वही पृ: 63

"वर्षा मंगल" में हम सुख, आनंद एवं सच्चे समाजवाद की शक्ति पाते हैं । प्रणयविषयक "गन्धर्वताल" और "आगाही" पर स्वयं कवि ने टिप्पणियाँ दे ही दी हैं । ये दो गीत लयात्मकता की दृष्टि से अपनी भंगिमा में बेजोड हैं । "हरियाने की लली", ढिंढिया धुनाधारित गीत है । यह गीत ग्राम के प्राकृतिक, सरल और शहर के कृत्रिम जीवन-सौन्दर्य का तुलनात्मक रूप प्रस्तुत करता है ।

उसको, पर, न मुलायम जाने,
उसकी सरलता भी पहचानो,
वह है मीठी भी, कडी भी, जैसे मिश्री की डाली,
आई दिल्ली के नगरियों में हरियाने की लली ।"[1]

स्पये की महिमा

स्पैया अन्तिम गीत है । इसमें आज की तिक्त समस्याओं के कारण स्नेह शिथिलता का कारण व्यक्त हुआ है । इसमें मानव के घटते और पैसे के बढते हुए मूल्य का चित्रण है । पैसे में सब सामर्थ्य होती है, के भाव पर तीखा व्यंग्य कसा गया है -

बेटी न प्यारी है
बेटा न प्यारा
प्यारा है, सैंचा, स्पैया
मगर महँगा है, सैंचा स्पैया ।[2]

---

1. बच्चन - चार खेमे चौंसठ खूँटे - पृः 8।
2. वही पृः 9।

लोकलयमान पदावली

इस खेमे की चौदह लोक धुनाधारित गीतों को पढने पर ऐसा लगता है कि इसमें लोकलयमान पदावली तथा भाव प्रवाह दर्शनीय है -

मेहनत ऐसी चीज़ कि निकले
तेल छलाछल रेत में,
आशा घर में दीप जलाए,
सपना खेले खेत में,
ठेंग मुझे परवाह नहीं है राजा,
साहूकार की ।"[1]

इन लोक धुनाधारित गीतों को देखकर सुमित्रानंदन पंत बच्चन को लिखते हैं "तुम्हारी लोकगीतों पर आधारित रचनायें बडी बडी प्यारी हैं । गंभीर गीत भी अपनी स्वाभाविक गति से बढ रहे हैं । तुम्हें संकल्प सिद्ध प्राप्त है इसी से भीतर बाहर दोनों ओर सक्रिय रहते हो ।[2]

3. मंच गान

सत्ताधिकारी शासक और जनता

तृतीय खेमे में दोनों रंगमंचीय गीत हैं । "वर्षा-मंगल" में देश की विदेशी सत्ता और पूर्ण स्वायत धर्म निरपेक्ष प्रजातन्त्रात्मक गणराज्य में सत्ताधिकारी शासकों के कार्य व्यवहार और जनता के हित-चिंतन का तुलनात्मक अध्ययन

---

1. बच्चन - चार खेमे चौंसठ खूँटें - पृ: 90
2. सुमित्रानंदन पंत - कवियों में सौम्य पंत - बच्चन - पृ: 10
पत्र दिनांक - 2-2-60

हुआ है । "गोरा बादल" पश्चिम के विदेशी शासक का और "काला बादल" पूर्व के स्वदेशी शासक का प्रतीक है -

गोरा बादल चला गया तो भी क्या,
काले बादल का सब ढंग उसी का और पराया है ।"[1]

इसमें दोनों प्रकार के शासकों की कठोरता पर प्रहार किया गया है ।

भू पुत्रों की चुनौती - प्रगतिवादी विचारधारा

दूसरे मंचगान "भू-पुत्रों की चुनौती" में श्रमजीवि और पूँजीपति के संघर्ष एवं अयोग्य अर्थ व्यवस्था पर करारी चोट की गई है । "जोते-बोए - जो सो खाए[2] कहकर समाजवादी भावना बच्चन ने व्यक्त की है । इसमें भी कवि प्रतीकों को सहारा लेते हैं । किसान शोषित जनता का, हल कर्म का और धरती देश का प्रतीक है । जो कुछ श्रमिक ने कमाया है उसका बहुत बडा हिस्सा पूँजीपति ने खाया है । श्रमजीवियों को हमेशा भूखा रहना पडता है -

"सोना पहुँचा - मोती पहुँचा
पूँजीपति के
तहखाने का ।
धरती फिर भी
तरस रही दाने-दाने को ।
खाती उसको भूख रही है
भीतर-भीतर सूख रही है ।"[3]

---

1. बच्चन - चार खेमे चौंसठ खूँटें - पृ: 95
2. वही पृ: 105
3. वही पृ: 104

यह व्यवस्था बदलती होगी । श्रम के अनुपात में उत्पादन का उचित भाग श्रमिक को देना होगा । ये दोनों मंच गान प्रयोग की दृष्टि से ही नहीं, परिणाम की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हैं । "भूपुत्रों की चुनौती" में प्रगतिवादी विचारधारा की स्पष्ट छाप दिखाई पडती है -

श्रम के
फल के
बीच खडी
दीवार हटाए,
उसे गिराए",[1]

4. मुक्त छंद की कवितायें

आक्रोश

चौथे खेमे की कवितायें बडी ही सशक्त एवं प्राणवान हैं । इसमें 33 मुक्त छंद की कवितायें हैं जो कवि के सूक्ष्म चिंतन, आत्म विश्लेषण, यथार्थवादी दृष्टिकोण एवं करारे व्यंग्य को द्योतक हैं । इन कविताओं का प्राण है व्यंग्य और वस्तु है युग बोध । कवि यथार्थ को दारुणता से क्षुब्ध हो कहते हैं -

"आज सत्य
असह्य इतना हो गया है
कान में सीसा गला
ढलवा सकेंगे,
सत्य सुनने को नहीं तैयार होंगे ।"[2]

---

1. बच्चन - चार खेमे चौंसठ खूँटें - पृ: 104
2. वही पृ: 106

व्यंग्यात्मकता और आत्मबल

कवि के मत में कर्म केलिए सबसे पहली ज़रूरत आत्मबल की है । यह आत्मबल बाहरी बल से अधिक महत्वपूर्ण है । इस रचना में कवि ने कर्मठता का पक्ष लेते हुए भाग्यवादिता एवं आलस्यवादी प्रवृत्तियों पर कटु व्यंग्य किया है । उनकी दृष्टि में निष्क्रियता और आलस्य मानव का सबसे बडा दुश्मन है । इसलिए उन्होंने कहा है -

भाग्य लेटे का सदा लेटा रहा है
जो खडा है भाग्य उसका उस खडा है,
चल पडा जो भाग्य उसका चल पडा है ।"[1]

कर्म की महत्ता जान लेने पर बच्चन जी में अजेय जीवन्तता और अपराजेय विश्वास समाविष्ट हो गया है । साथ ही वर्तमान युग में बढती कुप्रवृत्तियों, अलगाव और अहंमन्यता से कवि क्षुब्ध हो उठते हैं -

"शाहनशाही दिल, तबीयत ठाठ के पश्चात्
अब युग भुक्खडों, बौनों नकल यी बानरों का
आ गया है ।"[2]

कवि का संयमी रूप

"व्यस्त-पोत" में कवि ने युवाक्रोश को बुर्जुआ-वर्ग के प्रति सहानुभूति पूर्ण संयम रखने के भाव से यों कहा है -

---

1. बच्चन - चार खेमे चौसंठ खूँटें - पृ: 134
2. वही पृ: 122

क्रोध करना कर्णधारों पर निरर्थक ;
वे थके, बूढे, पके, संघर्ष से ऊबे,
भुजाओं, कमर, कंधों को ज़रा आराम देना चाहते थे ।
हम न हों अनुदार उनके प्रति, ऋणी हम कम नहीं हैं ।"[1]

व्यस्तता में फँसकर जीवन का मशीनीकरण हो गया है । आज के मानव का रूप है -

तुम घरेलू से नहीं,
अजनबी से आकर्षित होते हो,
घर को नहीं,
अजायब घर को आँखें फाडकर देखते हो,[2]

"अजब और अजनबी" में साहित्यकारों तथा जनता के अजनबीपन पर व्यंग्य कसा है । वास्तव में उनके व्यंग्य का सामाजिक पक्ष ही अधिक प्रबल है । समय से बँधे लिपकीय जीवन पर व्यंग्य करते हुए वे बताते हैं -

"सात बजकर दस मिनट पर चाय पीते
वक्त छोटी हाजिरी का आठ पचपन
नौ छियालीस छोडते घर
ठीक दस दफ्तर पहुँचते
पाँच पैंतीस लौटते हैं ।
घडी जो चाहे मिला ले ।"[3]

---

1. बच्चन - चार खेमे चौसंठ खूँटें - पृ: 132
2. वही पृ: 153
3. वही पृ: 187 - 188

कवि की आस्था

बढते हुए संघर्ष, कुंठा, घुटन, विषाक्त माहौल और दमघोंट देनेवाली कृत्रिमता में कवि आस्थावान रहते हैं, उनका साहस छूटा नहीं है -

रीढ मुझको दो
जहाँ पर हो ज़रूरी
मैं खडा हो सकूँ तन कर
लौह दृढ तन-प्राण-मन कर
आन पर टूटूँ ।"[1]

अंतिम कविता "मरण काल" एक सशक्त एवं सुन्दर रचना है जिसमें अस्तित्व-अनस्तित्व का गहरा चिंतन हुआ है, उसका चित्रोपम वर्णन बेजोड है -

"क्या नहीं है मरण ऐसा शत्रु
जिसके साथ, कितना हो समर कर,
निबल निज को मान,
सबको, सदा,
करनी पडी उसको शरण अंगीकार ।"[2]

निष्कर्ष

आधुनिक जीवन का आधुनिक कवि होने के नाते संपूर्ण जीवन संदर्भों को कवि ने छुआ है । छन्दताल की विविधता, एवं उपमानों की नवीनता की दृष्टि से "चार खेमे चौंसठ खूँटें" के लोक धुनाधारित गीत सदा स्मरणीय रहेंगे । इसमें कवि का झुकाव दो बातों की तरफ है । एक तो यथार्थ जीवन

---

1. बच्चन -चार खेमे चौंसठ खूँटें - पृ: 188
2. वही पृ: 201

की तरफ, दूसरी अध्यात्म की ओर । जीवन प्रकाश जोशी ने उनके अध्यात्म विषयक कविताओं के बारे में जो राय प्रकट की है वह सौ प्रतिशत ठीक लगती है ।"[1] इस रचना की उपलब्धि ही यह है कि कवि अध्यात्म की ओर झुकते हुए भी अपने पाठकों के लिए सहज संवेद्य बने रहे हैं ।

---

1. इसकी मुक्त छंदवाली कुछ दार्शनिक कविताओं में कवि की पराशक्ति के प्रति आत्म निवेदनीयता बडी प्रौढ लगती है । जीवन प्रकाश जोशी बच्चन - व्यक्तित्व और कवित्व - पृ: 104

सातवाँ अध्याय

लोक चेतना का काव्य

व्यक्ति और समाज दोनों का अलगाव असंभव है । वैयक्तिक और सामाजिक चेतना एक दूसरे से ओतप्रोत है । अतः बच्चन यथार्थ की धरती से पूरी तरह जुडने केलिए प्रयत्नशील रहे । पहले बच्चन की कविता "व्यक्ति" में ही केन्द्रित होकर रह गई थी, आगे चलकर उन्हें विभिन्न परिस्थितियों से विवश हो युग को अभिव्यक्ति देने केलिए बाध्य होना पडा । इसलिए उनके परवर्ती काव्य में समकालीन युग अपने संपूर्ण परिवेश के साथ प्रतिबिंब होता दिखाई देता है । "श्रेष्ठतम कला जीवन की समग्रता को अभिव्यक्त करती है ।"[1]

बच्चन की लोकप्रियता का रहस्य ऋजु और प्रत्यक्ष अनुभूतियों की निश्छल अभिव्यक्ति में निहित है । इनके काव्य को देखकर ऐसा मालूम होता है कि उनकी रचनायें आदि से लेकर आज तक निर्व्याज अभिव्यक्ति केलिए कृतसंकल्प हैं । यही कारण है कि परवर्ती काव्य में उन्होंने अनुभूत यथार्थ की जटिलता का दबाव सहकर भी शैली शिल्प की सरलता कायम रखी है । आवश्यकता के अनुसार उन्होंने व्यंग्यात्मक भाषा, प्रतीक विधान या गीत-शैली के अनेक नये प्रयोग किए हैं, पर संप्रेषणीयता में कोई बाधा न आने दी है ।

"साहित्य की श्रेष्ठता जाँचने की कसौटी यह भी हो सकती है कि कवि ने उसमें अपने को, अपनी प्रतिभा, ज्ञान, अनुभूति, कल्पना, भावना, आवेग और अनुराग आदि को कुछ उँडेला है । काव्य की श्रेष्ठतर श्रेणी

---

1. डॉ.देवराज - छायावाद - उत्थान, पतन - पुनर्मूल्यांकन - पृ: 154

वही हो सकती है जिसमें कवि अपने विषय में अन्तर्लीन हो जाते हैं, उससे तदाकार होकर जैसे समाधि में डूबकर लिखते हैं ।"[1] रचनायें करते में करते बच्चन इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि थोडा-सा समय पाते ही इच्छामात्र में वे समाधि अवस्था प्राप्त कर लेते हैं उस अवस्था में रचना करते हैं । उनके अद्यतन रूप से लिखे गये काव्य बहुत कुछ नयी कविता के निकट हैं - "दो चट्टानें", "बहुत दिन बीते", "कटती प्रतिमाओं की आवाज़", "उभरते प्रतिमानों के रूप", "जाल समेटा" आदि रचनायें इस कोटि में आती हैं । इनमें "दो चट्टानें" मस्तिष्क को झकझोर कर देनेवाली अपार चिन्तन शक्ति के साथ साथ हृदय पक्ष को स्पर्श करनेवाली भावनाओं को भी व्यक्त करती हैं ।

दो चट्टानें-भावपक्ष

यहाँ तक आते-आते कवि की भावना और यथार्थवादी चेतना काफी विकास पा चुका है । इस विकास में उन्होंने गहराई से अपने समकालीन जीवन को देखा है । उन्होंने अत्यन्त गहराई से सामाजिक जीवन के कितने ही संदर्भों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अभिव्यक्ति दी है । "दो चट्टानें" बच्चन के परवर्ती काव्य की ऐसी दृढ चट्टानें हैं जिस पर खडे होकर कवि नयी कविता के श्रेणी में आ गये हैं । व्यंग्य, तीक्ष्ण यथार्थ, स्वार्थपरता, विषमता और मानव संबंधों की विकृतियों की गहराई से इस रचना में अभिव्यक्ति हुई है ।

---

1. भारती वर्मा - ज्योत्स्ना - दिसंबर - 1984 पृ: 12

"स्वाधीनोत्तर भारत रंग में, रूप में, चाल में, ढाल में एक नवीन चेतना को अनुभूति उत्पन्न करता है । इस रचना से पूर्व ही वह चीन से लडाई भी करता है । इस संग्रह की कवितायें चीनी आक्रमण से लेकर 1965 के मार्च तक की है ।"[1] इस रचना में वर्तमान शासन की अनुत्तरदायित्वपूर्ण स्वार्थ-परायणता, गाँधीवादी सिद्धान्तों का ढकोसला आदि को उन्होंने कटु आलोचना की है । इसमें कवि-कर्म की श्रेष्ठता तथा द्वन्द्वात्मकता का तत्व भी चलता है । संग्रह में कुल 53 कवितायें हैं ।

स्वाभिमान एवं क्षोभ की भावना

चीनी आक्रमण से संबंधित संग्रह में एक कविता है - "26-1-63" । कवि के स्वाभिमान एवं क्षोभ को व्यक्त करने में यह कविता सक्षम हुई है । 1962 में भारत चीन से पराजित हो गया था । फिर भी 1963 के गणतंत्र दिवस-समारोह में पिछले समारोहों से कुछ फरक दिखाई न पडता । नेताओं ने वैसे ही भाषण दिये और सैनिकों ने वैसे ही सीना तानकर परेड-ग्राउण्ड पर राष्ट्रपति को सलाम दी । यह दृश्य देखकर कवि के मन में क्षोभ पैदा हुआ । वे परास्त सैनिकों की व्यंग्य-भर्त्सना करके अपना क्षोभ प्रकट करते हैं -

ये सेना के नौजवान हैं
जो दुश्मन के मुकाबले में
नहीं टिक सके :
ये बन्दूकें, जिनके घोडे
अरि की बन्दूकों की गोली की वर्षा में
नहीं दब सके ;[2]

---

1. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - पृ: 198
2. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 24

यहाँ कवि ने दो टूक बात कहने का साहस दिखाया है । अचानक चीन द्वारा किये गये युद्ध-विराम का अर्थघटन भारतीय जनता में वीर रस के संचार हेतु करते हैं -

"वे हमें हीन ग्रंथियों में जकडकर चले गये,
वे हमें बिना पराजित किये,
"तुम विजित किये जाने योग्य भी नहीं" ;
कहकर चले गए ।"[1]

भीरुता का विरोध

"विभाजितों के प्रति" कविता में बच्चन ने अंग्रेज़ी कहावत का सार्थक प्रयोग किया है कि डरपोक आदमी हज़ार बार मरता है, लेकिन वीर एक ही बार मरता है । वीरत्व मृत्यु-वरण करने में है, संहार में नहीं । भीरु तो निष्प्राण ही होता है -

"आग से ही नहीं,
पानी से डरोगे
दूर भागोगे,
करोगे दीन क्रंदन,
पूर्व मरने के
हज़ार बार मरोगे ।"[2]

नेहरूजी से संबद्ध रचनायें

नेहरु परिवार के साथ बच्चन का बहुत पुराना संबंध है । कवि के मन में स्व.जवाहरलाल नेहरु के प्रति असीम श्रद्धा है । 1926 मई; "गुलाब की

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 26
2. वही पृ: 23

पुकार", "द्वीप लोप", "गुलाब", "कबूतर और बच्चा", "दो फूल", और कील-काँटों में गुलाब" नेहरूजी से संबंधित रचनायें हैं । "दो फूल" की आदि और अंत की पंक्तियाँ समीचीन प्रतीत होती हैं जिनमें गाँधी और नेहरू को क्रमशः श्वेत और लाल फूल के प्रतीक से चित्रित कर सुंदर बिंब निर्माण किया गया है -

"श्वेत पुष्प जब गिरा उस समय
तप्त शहीदी रक्त-स्नात था ।
लाल फूल
अपने लोहू को बूँद-बूँद जी,
बूँद-बूँद पी,
गिरा जिस समय
उज्ज्वल, शीतल, श्वेत शांत था ।[1]

"कील काँटों में फूल" नेहरू और नौकरशाही से संबद्ध रचना है । उनके सहज व्यक्तित्व एवं नौकरशाही से घिरे जीवन की विडंबना का बडा ही सहज चित्रांकन इसमें हुआ है ।"[2]

कल्पना की माधुरी

"विक्रमादित्य का सिंहासन" एक काल्पनिक कविता है जो नेहरू-संग्रहालय बनाने के सरकारी निर्णय से अनुप्रापित है । कवि ने इसमें नेहरू और विक्रमादित्य की न्यायपरायणता को समान-स्तर पर देखा है -

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 39
2. वही पृ: 41

शासन का आदेश आ गया,
यह सिंहासन राष्ट्र संग्रहालय के अंदर रहे सुरक्षित ।
जनता में इसके दर्शन का कौतूहल है ।
न्याय-पीठिका अधिक मान्य उपलब्ध
। सिंहासन जो न्याय उसे है ।
कहेगा
उसे आज का युग मानेगा? ।
और सहेगा ?।

आधुनिकता का बोध

जहाँ कवि मिथ्या वाद-विवाद से ऊपर उठकर सृजन में निरंत रहे हैं वहाँ आधुनिकता-बोध का सशक्त मूल्यांकन हुआ है । "सृजन और साँचा" इस संदर्भ में उल्लेख्य रचना है । कवि की स्थापना है कि आधुनिक भाव-बोध की सम्यक् अभिव्यक्ति केलिये साहित्य-रूप को आधुनिक ही होना चाहिए -

सृजन आज का विद्रोही है ;
जिस साँचे में ढलकर
वह बाहर आता है
उसको तोड दिया जाता है,[2]

जीवन की निरर्थकता

"मालो की साँझ" मनुष्य के जीवन की निरर्थकता का बोध कराती है । भौतिकता के सर्व-व्यापी प्रचार-प्रसार ने मानव-मन में हीनता की ग्रंथि

---

1. अज्ञेय - दो चट्टानें - पृ:45
2. वही - पृ: 84

पैदा कर दी है । वह अपने को बौना समझने लगा है । उसे अपना जीवन निरर्थक-सा लगने लगा है -

"न कुछ अर्जित हुआ,
न कुछ अर्पित हुआ,
न दुआ सुनी, न शुक्रिया,
न गर्व ने छेडा,
न संतोष ने छुआ,
और अब आई खडी जीवन की साँझ है ।[1]

जीवन : मूल्य : मूल्यहीनता

"आज के परिवेश में जीवन के मूल्य क्षीण होते जा रहे हैं । व्यर्थता और अस्तित्व-हीनता का स्वर सब कहीं सुनाई पडता है । प्रत्येक व्यक्ति के मुख पर एक नकली मुखौटा है । बच्चन जी ने उनके मुखौटे नोंचा कर असली रूप दिखाने का प्रयास किया है ।"[2]

स्वातंत्र्योत्तर परिस्थितियों में हमारे समाज में जो नये मूल्य विकसित हुए हैं, वे सही अर्थों में मूल्यहीनता की अवस्था को प्रस्तुत करते हैं । इसलिये बच्चन के काव्य में इन संदर्भों पर पर्याप्त व्यंग्य किया गया है । "युग पंक: युग-ताप ;" "गत्यावरोध" ; संघर्ष ईर्ष्या" आदि कवितायें युग की तथा राष्ट्रीय चरित्र के ह्रास से जनमी क्षुब्धता, रोष तथा असंतोष को व्यंग्य-भंगिमा लेकर व्यक्त करती हैं -

"दुनिया बडी ओछी है,
और को सुर्ख देख
लोग कुढा करते हैं ;

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 130
2. वही पृ: 139

मातम बनाते हैं, जलते हैं, कटते हैं ।
हमने तो औरों की खुशियों में
खुशियाँ मनाई हैं ।"[1]

विघटित मूल्य से व्याप्त अव्यवस्था

बच्चन ने अपनी खुली आँखों से सामाजिक संबंधों को देखा है । मनुष्य भले ही स्वतंत्र, शिष्ट, विनयशील और स्वावलंबी बन गया हो, पर नये मूल्यों ने जो अराजकता पैदा कर दी है, उससे वे पूर्ण रूप से भिज्ञ हैं । मूल्य विघटन से व्यापक अव्यवस्था उभरती जा रही है । राजनैतिक, सामाजिक संस्थायें ऊपर से आवरण चढाकर टूटे हुए मनुष्य की रिक्तता और व्यर्थता को छिपाने का प्रयत्न कर रही हैं । अव्यवस्था से जनित तीव्र-प्रतिक्रियाओं का प्रश्न इन पंक्तियों में उठाया गया है -

अर्थ-मूल्य दिए गए थे जो उन्हें
अब वे पुराने पड गये हैं ;
काल जर्जर हो,
विकुंठित और विघटित हो रहे हैं ।
अव्यवस्था आज बाहर,
किंतु उससे अधिक भीतर,[2]

शोषित और उपेक्षितों के प्रति सहानुभूति

शोषित और उपेक्षित जो पहले ही कवि की कविता के विषय रहे हैं, यहाँ आकर सशक्त प्रतीकों के माध्यम से कवि की सहानुभूति अर्जित करने में

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 135 - 136
2. वही पृ: 170

सफल रहे हैं । "खून के छापे" में शासन व्यवस्था की नृशंसता, अनीति और अमानवीयता के खिलाफ जनता की क्रांति की ज्वाला जलाने में कवि केवल निर्भय वाणी को ही सक्षम मानते हैं । स्वप्न में अनेक नर कंकाल क्रम-क्रम से आकर उनके दरवाज़े (द्वार) पर खून के छापे लगा जाते हैं । पर खून के छापे लगाना अपशकुन माना जाता है । कवि ही तो वह व्यक्ति हो सकता है जो इन पीडितों-बुभुक्षितों और दलितों की व्यथा को विद्रोही स्वर देकर समाज के ठेकेदारों से दो-दो बात कर सकता है -

"जिसके भी द्वार पर ये छापे लगे उसने
पानी से धुला दिया
चूने से पुता दिया ।
किन्तु कवि द्वार पर
छापे ये लगे रहें,
जो अनीति, अति की
कथा कहें, व्यथा कहें
और शब्द-यज्ञ में मनुष्य के कलुष दहें ।"[1]

यह कविता भाव, ध्वनि और गंभीर स्थायी भाव की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है ।

<u>यथार्थवादी चेतना</u>

"दो चट्टानें" यथार्थ और सम-सामयिक युग का चित्रण ही कह दिया जाय तो अत्युक्ति न होगी । "कवि यथार्थ बोध के द्वारा इन सभी निर्जीव, अस्तित्वहीन और रिक्तता की स्थितियों को पहचानता है, उसकी आँखों का

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 49

दर्पण समाज की ओर है, तभी तो उसमें पूरी तस्वीर देखी जा सकती है ।"[1] यथार्थ चेतना ने ही कहीं-कहीं कवि को दार्शनिक बनाया है -

"वह परीक्षा कौन जिसकी
सब परीक्षायें तैयारी,
और देने में जिसे मिट
जायगी काया बिचारी ।"[2]

"भौंडे की गवेषणा" में शासन की निष्क्रियता और आधुनिक अहंवृत्ति पर तीखा प्रहार किया गया है । आज के यथार्थ जीवन में नित्य सरलता से मिल सकनेवाले राजनीतिज्ञ का चित्र देखिए -

"जीनाहो तो पहला धर्म है,
यानी अस्तित्व बनाए रहना ।
दुनिया जैसी बनी है
उसमें कुछ मिटकर भी कुछ बनता है ।
किसी का अस्तित्व मिटेगा,
तभी किसी का बनेगा ।
और किसका अस्तित्व
सबसे अधिक महत्वपूर्ण है !
मुझे दुबारा सोचना नहीं है,
अपना ! अपना ! ! अपना ! ! ![3]

बच्चन का हृदय आज़ादी का गलत उपयोग देखकर मूक रुदन करता है । उनके अंदर का मानव आज के हथकंडों को देखकर सहन न कर सिसक उठा -

---

1. डॉ. हरिचरण शर्मा - आलोचना और सिद्धान्त - पृ: 203-204
2. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 120
3. वही पृ: 75

यहाँ सबको आज़ादी
होती हैं सभाएँ
निकलते हैं जलूस
चिपकाये जाते हैं इश्तहार
छापे जाते हैं अखबार,
यानी हर तरफ से होता वार ।"[1]

उनका यथार्थ बोध आधुनिक बोध का ही सोपान है । इसलिये वे यथार्थ के घटारोप से निकलकर अपने पाठकों को जागृति को,ओर ले जाते हैं । उनका खबर ली गई है । "आज कलाकारों और साहित्यकारों में लालच, झीना-झपटी प्रलोभन आ गया है सरकारी-गैर सरकारी उपाधियों तथा पुरस्कारों केलिये सब लडने को तैयार हैं । सार्त्र के माध्यम से उनपर करारा व्यंग्य किया गया है । कडुवा घूँट पीकर फिर भी अपना आक्रोश सीधे सीधे व्यक्त नहीं किया है । यह कवि के संयम, शालीनता, कलात्मक विवेक का परिचायक हैं ।"[2]

इस कविता में बच्चन ने प्रतिभा-संपन्न व्यक्तियों के स्वाभिमान और अस्तित्व की प्रशंसा की है । उन्होंने विश्वविद्यालयों की महत्वहीनता तथा शक्ति-साधन, संपन्न सरकार की अडिग सत्ता पर प्रकाश डाला है । यह कविता बच्चन की लंबी कविताओं में एक हैं । प्रस्तुत कविता में साहित्य में चलनेवाली राजनीति पर कटु व्यंग्य कसा गया है -

"विश्वविद्यालय बँधे हैं
विगत मूल्य परम्परा में -

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 77
2. रेणु मलहोत्रा - बच्चन का परवर्ती काव्य - पृ: 56

और अब तो बिक रहे थे
राजनीति खरीदती है ।
आज उनकी डिग्रियाँ - अनारिस काज़ा
योग्यता केलिए
प्रतिभावान को अर्पित न होती ,
कूटनीति कारणों से
दी, दिलाई और पाई जा रही है ।"[1]

विश्वास है कि मानसिक, बौद्धिक और सृजनात्मक विकास के सहारे ही जागृति संभव है - इसलिये वे कह उठते हैं -

"कलम से ही
मार सकता हूँ तुझे मैं ;
कलम का मारा हुआ
बचता नहीं है ।"[2]

व्यंग्यशीलता

व्यंग्यशीलता इस कृति का सर्वप्रमुख एवं महत्वपूर्ण गुण है । "दो चट्टानें" में बच्चन जी की व्यंग्य वाणी अपना शक्तिपरिचय सफल रूप से देती है । उनके व्यंग्य में गहराई तथा तरलता है । इस संकलन की अधिकांश कवितायें आक्रोश और व्यंग्य से उद्वेलित हैं । "कवि से केंचुआ", "वृद्ध युवा बनाम वृद्ध", "काठ का आदमी", "सार्त्र के नोबेल पुरस्कार ठुकरा देने पर" आदि कवितायें सहसा पाठक के हृदय को अपील करती हैं । "सार्त्र के नोबल पुरस्कार ठुकरा देने पर" में दंभी और स्वार्थी व्यक्तियों की "काठ का आदमी"

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 146-147
2. वही पृ: 65

में मानव की व्यक्तित्वहीनता पर तीखा व्यंग्य किया गया है ।कवि की मान्यता है कि आज का आदमी हाड-माँस के आदमी की तरह जीवन नहीं बिताता, उसका कोई व्यक्तित्व नहीं रह गया है, न वह पूरी तरह सुखी हो पाता है, न दुःखी । उसको सृजन-शक्ति नहीं है और उसकी नियति मात्र हाथ उठाना ही है -

"मुँह तो चलाता, पर
बात सदा दूसरे की
दूसरे के स्वर में दुहराता है ।
गाता हुआ, गाता नहीं,
दूसरे का टेप किया गीत ही बजाता है ।"[1]

प्रतीकात्मकता

अंतिम कविता "दो चट्टाने" या "सिसिफस बरबस हनुमान" बच्चन की अब तक की मुक्त छंद की कविताओं में सर्वश्रेष्ठ है । कविता में यूनानी एवं भारतीय कथाओं के मिथकों के द्वारा युगमानस के ठहराव केलिये सिसिफस और हनुमान का प्रतीक लिया है । इसी रचना के आधार पर संग्रह का नामकरण भी हुआ है । सभी प्रतीक दंतकथाओं से लिये गये हैं । चिंतन-मनन की दृष्टि से यह कविता बच्चन की सशक्त कविता है । हनुमान का प्रतीक प्राचीन एवं चिरपरिचित हैं । कवि के सिसिफस और हनुमान कवि के विशिष्ट भावों, विचारों, अनुभूतियों और संस्कारों के प्रतीक हैं । "दो चट्टानें" में उन्होंने आधुनिक मनुष्य केलिए एक नया-जीवन-आदर्श प्रस्तुत

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 99

किया है । यद्यपि मुख्य पात्र सिसिफ्स और हनुमान भी हैं तथापि उनमें यूनानी और भारतीय पुराण-कथाओं के अनेक पात्र स्थान पा गये हैं - यथा प्लेटो, प्रोमीथियस, ए ओलस, जीयस, हनुमान, भीमसेन, रावण, श्रीराम, भरत, अंजना, राहु, इंद्र, सुग्रीव, विभीषण आदि ।

बच्चन ने "दो चट्टानें" में सिसिफ्स की कहानी का आख्यान किया है । मृत्यु को बंदी बना लेने के अपराध में सिसिफ्स संगमर्मर की भारी चट्टान को अनवरत शैल-शिखर पर ढकेल कर पहुँचाने केलिए अभिशप्त हैं -

"गिरि के श्रृंग धर पर
और जब पहुँचे वहाँ पर
लुढकती नीचे गिरे वह ।
और सिसिफ्स
फिर उसे ले जाय ऊपर
और निरवधि काल तक
अविरत अहर्निश क्रम चले यह ।"[1]

इस प्रक्रिया की अनवरत आवृत्ति में जो व्यर्थता है, वह स्पष्ट है । सिसिफ्स की यातना निरर्थक है । यूनानी दंतकथा का यह सिसिफ्स आज के मानव का प्रतीक बन गया है ।वह मानव जो आर्थिक, राजनीतिक, नैतिक तथा सामाजिक सभी प्रकार के प्रतिबंधों से विद्रोह करता है, जो निरंतर विफलता का शिकार होते हुए भग्नाश, खिन्न एवं असंतुष्ट बन गया है और जिसके सारे प्रयत्न व्यर्थ तथा निरर्थक सिद्ध हो जाते हैं । आधुनिक मनुष्य सिसिफ्स का समीपी वंशज है जिसकी लालसाएँ नष्ट हो गयी हैं और जो जीवन की भारी शिला को अनवरत गति से उठाता-ठेलता जा रहा है ।"

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 191

हनुमान संजीवनी का पर्वत उठाए फिरता है । उसका पर्वत उठाना पीडापूर्ण है, साथ ही सुखद भी है क्योंकि यह पर्वत पीडित लोगों को संजीवनी प्रदान कर एक मानवीय कार्य का संपादन करता है । हनुमान के द्वारा द्रोणाचल का उठा लाना उनकी अप्रतिम शक्ति का बडा प्रमाण है । अतः हनुमान अखंड शक्ति, शौर्य एवं साहस के प्रतीक के रूप में यहाँ प्रकट हुए हैं -

एक रात में हनुमान
द्रोणाचल को जड से उखाडकर
उत्तर से दक्षिण को लाए ।
जागे लक्ष्मण,
सोचा रावण
निर्भय होकर
हर्षे सुरगण ।"[1]

सिसिफस की पीडा और हनुमान की पीडा में फरक है । सिसिफस के चट्टान ऊपर ले जाने से किसी को कोई फायदा नहीं है । अतः हनुमान और सिसिफस के प्रतीकों के द्वारा बच्चन ने मूल्यवान श्रम और मूल्यहीन श्रम की दो तस्वीरें हमारे सामने रख दी हैं ।

जो भी हो, सिसिफस हो या हनुमान दोनों मृत्यु से संत्रस्त थे । हनुमान ने अमरत्व तभी तो मांगा था जबकि उन्हें सबसे बडा डर मृत्यु से ही था । कोई मरण का वरण करना नहीं चाहता -

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृः 215

"एक तरह से अंजना-सुत ने
अमर बने रहने ही का तो वर मांगा था,
क्योंकि स्पष्ट था उनके मन में
सीयराम की कथा अमर है
और उसे सुनने की उनकी तृषा अमर है ।"[1]

"सिसिफ्स एवं हनुमान के माध्यम से कवि ने एक ओर भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता सिद्ध की है तो दूसरी ओर वर्तमान बुद्धि की भर्त्सना भी की है जो छल-छद्म को ही उपलब्धि मान बैठते हैं । क्योंकि सिसिफ्स ने तो छद्म ही से मृत्यु को बंदी बनाया था अथवा अमरत्व का असफल प्रयास किया था ।"[2]

बच्चन ने सिसिफ्स को एबसर्ड हीरो मानकर उसके निरर्थक प्रयत्नों में अपने प्रयासों की व्यर्थता का दर्शन कराया है । सिसिफ्स को, आधुनिक मानव की दयनीयता का प्रतीकत्व वहन करने की क्षमता स्वयं सिद्ध है । क्योंकि

---

1. बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 205
2. और सिसिफ्स को
   हुई मालूम वह तरकीब
   गोपन छद्म छल की
   मौत को बंदी बना ये ।
   जब समय आया
   उसी तरकीब के बल,
   वह सफल हो गया
   बंदी मृत्यु थी उसके किले में ।बच्चन - दो चट्टानें - पृ: 188।

मानव का जीवन भी सिसिफ्स के समान है।आधुनिक मानव का जीवन एबसर्ड है । मानव अपने जीवन में भलाई केलिये कुछ न कुछ करता है । लेकिन जो बातें घटती रहती हैं वे उसकी आशा के खिलाफ हैं । लेकिन मनुष्य होने के नाते वह जीने केलिए बाध्य होता है । जिजीविषा एक हद तक ज़रूरी है । इसी प्रसंग में हनुमान का प्रतीक सार्थक होता है । उसे हनुमान के समान आस्था के साथ जीवन की चट्टान उठाये चलना चाहिए जिसके द्वारा उसे शान्ति एवं संजीवनी का वरदान प्राप्त हो सकता है ।

इस रचना में पूर्वापर संबंध का निवहि मिलता ही है, "कल्पना, वस्तु योजना और वर्णन का ऐसा रूप बच्चन की और किसी कविता में दृष्टिगत नहीं होता । यहाँ कथायें इस प्रकार निकलती हैं जैसे तना से शाखायें निकलती हैं ।" सिसिफ्स और हनुमान दोनों दो चट्टानों को ढोने को विवश हैं । सिसिफ्स अपनी विवशता को खिन्नता के साथ ग्रहण करता है और हनुमान प्रसन्नता के साथ ।

"इस कविता के द्वारा बच्चन ने उन लोगों को, जो अनास्था, हताश भावना, एकाकीपन, जीवन की विसंगति और मृत्यु आदि के मूल्यों का प्रचार करते हैं, बहुत अच्छा उत्तर दिया है । उनकी अनेक व्यंग्य-परक रचनायें जो सिद्ध नहीं कर पायीं, वह इस अकेली प्रबंधबद्ध रचना से स्थापित हो गया है ।"[2]

बहुत दिन बीते

बच्चन की परवर्ती रचनाओं में "बहुत दिन बीते", "कटती प्रतिमाओं की आवाज़", "उभरते प्रतिमानों के रूप", "जाल समेटा" आदि प्रमुख हैं ।

---

1. डा.श्याम सुन्दर घोष - बच्चन का परवर्ती काव्य - पृ: 75
2. विश्वंभर मानव - नयी कविता : नये कवि -पृ: 37

"बहुत दिन बीते" उनहत्तर कविताओं का संग्रह है । इनके विषय विविध हैं । इसमें बच्चन ने अपने प्रारंभिक रोमानी व्यक्तित्व की निरर्थकता को व्यंजित करते हुए नई जीवन-पद्धति, नये विश्वास और यथार्थ से उत्पन्न नव्य चिन्ताधारा को अभिव्यक्त किया है । इनमें कुछ सामयिक प्रसंगों से संबद्ध है और कुछ कवि की उस मनस्थिति का चित्रण करते हैं जब घटना चर्या या भाव-विशेष ने उनके भावुक-हृदय पर आघात किया, उसे गंभीर बनाया अथवा गुदगुदाया है ।

सामयिक परिवेश

असल में युग-बोध ही समसामयिक परिवेश में प्रतिध्वनित होता है । बच्चन जीवन से प्रतिबद्ध रहे हैं । इसलिये वे समसामयिक परिवेश के प्रति सजग रहे हैं और यह "बहुत दिन बीते" में ज़्यादा गंभीरता से व्यक्त हुई है ।[1] "उन्नीस एक छयासठ" शीर्षक कविता में शास्त्रीजी के निधन को माध्यम बनाकर हमारे समाज की मज़दूर औरतों की विद्रोह छवि, परिवेशगत संकीर्णता और उनकी दयनीय हालत को भी करुणासिक्त शैली में अभिव्यक्त किया गया है । सडक कूटनेवाली ये औरतें कविता में आकर पाठकों पर असर डालती हैं और उनके प्रति पाठकों की सहानुभूति जाग उठती है ।"[2] "चार चने" शीर्षक कविता भी इसी प्रकार समसामयिक प्रसंगों पर लिखी गई है -

मानवीय मूल्यों का विघटन

कवि को महसूस होता है कि आज सभी ने अपने स्वार्थ की सिद्धि केलिए एक दूसरे का गला घोंटना अपना धर्म मान लिया है । वे अनुभव करते

---

1. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 88
2. खुन पसीने की रोटी
   खानेवाली ये
   एडी से लेकर चोटी तक
   मर-मेहनत में
   मार-थकावट में डूबी ये
   नहीं जानती,
   इसके भी अतिरिक्त कहीं कुछ,
   दुनिया में होता जाता है"। ।बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 18।

हैं कि मनुष्य की कीमत कोल्हू के बैल की तरह बन गयी है, जो हरदम पिसता रहता है, पर बदले में केवल अपमान और उपेक्षा प्राप्त करता है । कवि इस प्रकार के माहौल से क्षुब्ध हैं -

ठोकर खाते
छाले छिलवाते
घावों से रक्त बहाते बढते जाना
नहीं कहीं पर सुस्ताना
जब रोहों की भूल भुलैया में
मंजिल का पता न चलता ।[1]

"बहुत दिन बीते" में मानवीय नियति को आधुनिकता के जटिल संदर्भों के परिपार्श्व में रखकर काव्यात्मक संवेदनाओं को जिस विराट स्तर पर उभार कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है, वह वस्तुत: नयी कविता-दृष्टि को सीमा में बच्चन की अपनी मौलिकता और विलक्षणता है ।[2]

कवि धर्म से संबद्ध रचनायें

"बहुत दिन बीते" में कुछ कवितायें ऐसी भी हैं जो कवि ने कवि-धर्म पर ही लिखी है । वे अपनी बीती गयी जिन्दगी में जो कुछ भोग चुके हैं उस ओर जाने का उसका बार-बार मन करता है । यद्यपि वे नवीन विषयों पर लिखते हैं, फिर भी जैसे उनकी नज़र वर्तमान से असंतुष्ट-सी अतीत की ओर मुडती जाती है । संग्रह की 12 वीं, 14 वीं, 20 वीं और 30 वीं कवितायें इसी मनस्थिति का द्योतक हैं -

---

1. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 77
2. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व - पृ: 215

बंद अपने में
खुला मैं क्या नहीं सबकेलिये था ?
और खुला सबकेलिए हो
क्या नहीं मैं बंद
अपने वास्ते भी हो गया हूँ ।
बंद कमरे में अगर-फिर गीत गाऊँ
क्या मुझे दुनिया सुनेगी ।[1]

व्यंग्यशीलता

संग्रह की अधिकांश कविताओं में बच्चन की व्यंग्यशीलता और उभरी है । उन्होंने कई जगह सामाजिक एवं राजनीतिक संदर्भों पर बडी चटुलता से व्यंग्य कसते गये हैं । संग्रह की प्रारंभिक 10-15 कवितायें व्यंग्य-परक हैं । व्यंग्य की दृष्टि से "होली"[2], "खोटा सिक्का"[3], "बोट"[4], "तख्ता पलटने का खेल"[5], भारत के सांप" आदि रचनायें महत्वपूर्ण हैं । वे कवि के व्यंग्यपूर्ण स्वभाव को मुखरित करती हैं । होली हिन्दू संस्कृति का एक-प्रकार से सम्मिलन त्योहार माना जाता है । इसपर हर व्यक्ति एक दूसरे से संबंधित अपने विकृत संबंधों को पुनरूज्जीवित करने केलिए उद्यत रहता है । आज वही होली एक औपचारिकता बन गयी है । "होली" शीर्षक कविता में इसी बात को व्यक्त किया है -

जोभ से आतुर लेने के शाबाशी -
आओ, अपनी नासमझी, कमज़ोरी की
एक दूसरों को पहचानें, सीमाओं में ही
भाई कह लें ।
होली आई,
आओ रस्म, अदाई कर ले ।[2]

---

1. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 55
2. वही पृ: 20

बच्चन के व्यंग्य में कटु सत्य को कटुता और खरखरापन दोनों ही हैं । उनकी व्यंग्य-शक्ति ने ही कतिपय बासी रचनाओं को भी नई ताजगी के मौसम के सुखद परिणाम दिये हैं । "खोटा सिक्का" में आज की खोटा सिक्का चलाऊ मनोवृत्ति पर कटाक्ष है । "खल युग का कोरस" एक व्यंग्य-प्रधान रचना है जिसमें युग की आपा-धापी, भ्रष्टाचार और गुंडा-गर्दी पर व्यंग्य किया गया है । "बाद" शीर्षक कविता आधुनिक युग की ज्वलंत विसंगति को उभरने में सफल हुई है । "भारत के साँप" कविता में सरकारी दफ्तर की सतही कारवाही पर व्यंग्य है । इस कविता में भारत के साँप को प्रतीक के रूप में प्रयुक्त किया गया है । राष्ट्रीय पुस्तक न्यास "भारत के साँप" नामक पुस्तक तैयार करने केलिए बडे बडे लिक्खाडो का समारोह बुलाकर, सफर खर्च, दैनिक भत्ता चुकाकर कई रंगी-जिल्द-बँधी पुस्तकें छपती हैं तो जनता की यह प्रतिक्रिया होती है -

"और बहुत से लोग खफा है -
भारत की गरीब जनता तक
कैसे यह पुस्तक पहुँचेगी ।
भारत की नंगी भूमि जनता के आगे
खडी समस्यायें जितनी हैं
इनमें क्यों दी गई प्राथमिकता इसको ही
वह साँपों का ज्ञान बघार ।"[1]

भारत के इतिहास धर्म, और संस्कृति के पीछे साँपों की भूमिका निश्चय ही बहुत बडी है ।

---

1. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 22-23

यातना भरी जिन्दगी के करुण चित्र

संग्रह की अनेक कविताओं में आज की यातना भरी जिन्दगी का सांकेतिक चित्रण हुआ है । "सिन्धु-बिन्दु" कविता में बच्चन संसार-सागर के किनारे पर बैठे हुए अपने आपको सागर-सापेक्ष दृष्टि से देखना चाहते हैं ।"[1] आज की ज़िन्दगी की विशेषता यह है कि उसमें मानव अवश, विवश और अकेलापन का अनुभव करता हुआ जैसे परिचितों के बीच में अपरिचित बनकर रह गया है । अपरिचय को बाढ़ में बंधा व्यक्ति पीडा का अनुभव करता है । फलस्वरूप उसे अपने आपसे वितृष्णा हो गई है । "बहुत दिन बीते" के कवि के स्वर में युग का विघटित, विशृंखलित, कुंठित और विद्रोही मानव-मन का स्वर गूँज उठता है ।

युग-चित्र

प्रत्येक जागरूक साहित्यकार के साहित्य में सहज ही युग-चित्र मिल जाते हैं । समय और आयु ने तो बच्चन की मस्ती को तपाकर परिपक्व बना दिया है । नाम के अनुरूप ही इस रचना में भोगे हुए युग-जीवन के कटु सत्य को अभिव्यक्ति दी गई है । दुनियाँ देखकर बहुत बीते दिनों को कवि पहले से अधिक स्पष्टता से व्यक्त कर सके हैं । उनकी वाणी यहाँ आकर पहले से अधिक नग्न रूप से समाज को अनावृत करने में सक्षम हुई है ।

---

1. देखूँ प्रत्येक बिन्दु को
   नहीं किसी से बडा
   न छोटा-हीन किसी से,
   सजल, तरल, साधारण,
   सबके साथ बराबर,
   सबके प्रति अर्पित सवेदन स्नेह समादर

   बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 86।

"क्या यह कुत्ती जगह
यहाँ पर बहुत करो माथा पच्ची तब
लग पाती है बस धटेडी-सी खक भाल पर ।
।तिलक इसे दुनियाँ कहती है ।
ईर्ष्या, कुंठा, द्वेष, शेष के बढ जाते हैं ।।[1]

युग-वैषम्य को बच्चन ने विषैले व्यंग्य में ढालकर साकार कर दिया है । "भारत के सांप", "खल युगी कोरस", "कयामात का दिन", "ईर-वीर", "फत्ते हम", "मेरा अभिनंदन" आदि रचनायें इस बात के साक्षी हैं । दर्शकों के खट्टे मीठे अनुभवों से "बहुत दिन बीते" की भूमि भीगी है । भविष्य को भावुक पीढी केलिए निश्छल आत्मबोध और युग-जीवन सत्य बना रहेगा । सिर्फ अफ्सोस है -

"जीवन -
गैर ज़रूरी कामों में बीत गया है,
और सब ज़रूरी काम
मेरे दूसरे जन्म की
प्रतीक्षा कर रहे हैं ।"[2]

आस्था कर्म पर विश्वास

जीवन संघर्ष के लाख-लाख थपेडों के बावजूद भी कवि आस्था कर्म का पल्ला नहीं छोडते । वे अविराम और अविकल चलने का संकल्प करते हैं -

---

1. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 78
2. वही पृ: 110

"रात को भी तो
मुझे रुकना नहीं है
हो गुके अभ्यस्त इतने पाँव चलने के
नहीं निर्देश नयनों का ज़रूरी
कौन बाधायें मिलेंगी
जो न अब तक मिल गुकी हैं
झिल गुकी हैं ।"[1]

समन्वय की भावना

वस्तुत: मस्तिष्क ।बौद्धिकता। और हृदय ।रागात्मकता। का समन्वय व्यष्टि और समष्टि, काव्य और जीवन का समन्वय, कल्पना और वास्तविकता का समन्वय, मूर्त और अमूर्त का समन्वय, पुरानी और नयी मान्यताओं का समन्वय, शब्द और अर्थ का समन्वय, और शिल्प का समन्वय - यानी "बहुत दिन बीते" काव्यात्मक धरातल पर शुरू से अन्त तक समन्वय की विराट चेष्टा है ।"[2] उनका यह कथन सिद्ध करनेवाली अनेक पंक्तियाँ इस रचना में हम देख सकते हैं -

"जवान ही नयी आवाज़ लगाते,
नयी रोशनी लाते
नयी राह दिखाते -
मेरा भी यही बयान है ।
पर वक्त का भी एक रुलान है
जवानों में भी कई बूढे हैं,
बूढ़ों में भी कई जवान हैं ।[3]

---

1. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 98
2. श्री सत्यनारायण श्रीवास्तव - ज्ञानोदय - सितंबर, 1968 - पृ: 128
3. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 128 129

कटतो प्रतिमाओं की आवाज़

प्रस्तुत संग्रह कवि-प्रतिभा को रेखांकित करनेवाला है । इसमें कवि बच्चन हमारे समाज को टूटतो प्रतिमाओं को आकार दे रहे हैं । यह 91 कविताओं का संग्रह है । इस रचना में कवि का संपूर्ण व्यक्तित्व सामाजिक विकास और ह्रास का संकेत कर आया है । वास्तव में कवि ने एक सजग कलाकार को भाँति इस संग्रह के द्वारा यह अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है कि मनुष्य जो अपने आपमें महत्वपूर्ण प्राणी है, वही अपनी महत्ता को विघटित करने केलिए जुम्मेदार भी हैं । प्रस्तुत संग्रह की रचनायें कवि के जीवन के छठे दशक के अंतिम और सातवें दशक के प्रथम वर्ष में लिखी गई है ।"

नाम की सार्थकता

प्रस्तुत काव्य-संग्रह का नाम "कटती प्रतिमाओं की आवाज़" प्रतीकात्मक और सार्थक है । कवि ने अनुभव किया है कि मानवीय समाज की प्रतिमाएँ, टूटी हुई आत्मायें और विगलित व्यक्तित्व सब कहीं दीख रहे हैं । संग्रह का नाम उन्हीं कारणों से सार्थक है । यह संग्रह आज की मानव-नियति और उसकी गतिविधि का सही प्रारूप है । इसमें सब भावनाओं का उद्वेलन और देश के परिवेश का सम्मिलन बडा ही अभूतपूर्व बन पडा है । कवि का स्वयं कथन है - " मैं इसे कटती प्रतिमाओं की आवाज़ कहा है क्योंकि इसकी कवितायें लिखते हुये बार-बार मेरा ध्यान उस विखण्डन, विघटन और बिखराव की ओर गया है जो आज हमारे बाहर और भीतर चल रहा है, पर इस विघटन और विखंडन के बीच कहीं कुछ विनिर्मित भी हो रहा है । मैं समझता हूँ इसका आभास मुझे है और मेरे सृजन में शायद किसी अंश में यह प्रतिध्वनित भी हुआ है । मुझे प्रसन्नता है कि कटती प्रतिमाओं में बनती प्रतिमाओं की भी ध्वनि भी मिश्रित है ।"[1]

---

1. बच्चन - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - पृ: 9

आधुनिक जीवन का बिखराव और मानवीय मूल्यों की टूटन

"आज जीवन के परिवर्तित और विकास क्रम में टूटन, बिखराव, बनाव, निश्चय, अनिश्चय, विश्वास और अविश्वास जो भी है उसका निश्चित रूप से समकालीन महत्व है । इस संग्रह में ऐसे अनेक उदाहरण हम देख सकते हैं ।"[1] "दो मौसमों" में दो प्रतीकों के रूप में दो युगों का, स्थिति और सार्थकता को अलग कर कवि ने अपनी परिपक्वता, सामर्थ्य और सुष्ठ योग्यता का परिचय दिया है -

खस की टट्टियाँ
गरमी में
भिगाई जाती हैं,
गरम हवा को छान-छान ठंडी करती है,
सुगंधित बनाती है ।
खस की टट्टियाँ
बरसात में
भीगती हैं,
सड़ती हैं,
बदबू फैलाती हैं ।[2]

पीढ़ियों का संघर्ष

इस संग्रह की तीन कवितायें मानवीय मूल्यों की बदली हुई स्थिति, नये पुराने का संघर्ष आदि पर लिखी गई हैं । इनमें "चचा", "दो रूप", "दो सलूक", "भतीजे", "पका फल", "नई लीक", "नये पुराने", "खंडित

---

1. बच्चन - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - पृ: 43
2. वही पृ: 30

मूर्तियों की आवाज़", "मध्यम पीढी का वक्तव्य", "पाँच पीढियाँ", "गोली लकड़ी", "नयी उम्रों का नया सूरज" आदि रचनाओं में पीढियों के संघर्ष को वाणी मिली है । कवि पुराने, रूढिग्रस्त और अन्धानुकरण वाला रूप पसंद नहीं करते, न नये की उच्छृंखलता ।"[1] तनाव भरे वातावरण में कवि विनम्र निवेदन करते हैं -

"पुरानो पुरानी कहो
नयी सुनो ।
नयी, नई कहो
पुरानो सुनो ।"[2]

"बच्चन पुरानी गोली लकडी को फेंकने से मना करते हैं ।"[3] उन्होंने स्त्री-पुरुष के टूटते हुए संबंध, स्वार्थान्धता एवं आत्मीय संबंधों की न्यूनता का भी अंकन किया है । उन्होंने राजनीतिक तथा प्रजातांत्रिक युग की कुंठा तथा अवसाद को तीक्ष्ण स्वरों में प्रकट किया है । "कविता और राजनीति", "कवि और राजनीतिज्ञ" आदि में राजनीति से प्रभावित कविता की स्थिति को दिखाया गया है -

"कविता ने जो पब्लिसिटी
बरबादी करके पाई,
राजनीति ने उससे ज्यादा पब्लिसिटी
शादी करके पाई ।"[4]

<u>दार्शनिकता</u>

कहीं कहीं आयु और युग की माँग के अनुसार बच्चन जी दार्शनिक और चिन्तक हो उठे हैं । फलतः जीवन और जगत की समस्याओं पर विचार करने

---

1. बच्चन - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - पृः 77
2. वही पृः 69
3. वही पृः 89
4. वही पृः 106

केलिए जिन कविताओं की रचना हुई है, उनमें मानवीय नियति और जीवन में व्याप्त सुख-दु:ख, जन्म, मृत्यु, मानव-कर्म आदि विषयों पर कवि की दृष्टि स्पष्टत: लक्षित होती है । उसी में बडा तथ्य कहा गया है -

"साहित्य बडा तब होता है
जब समाज बडा होता है
देश बडा होता है,
देश का इतिहास बडा होता है ।
छोटे में, इंसान बडा होता है ।"[1]

मंजिल में, जीवन में उद्देश्य की ओर बेरोक बढने की प्रेरणा व्यक्त हुई है ।

विक्षोभ का स्वर

कवि के भीतर एक देश भक्त साँस ले रहा है । राष्ट्रीयता सिसकती है । परिणामस्वरूप उनके मन में विरक्ति और विक्षोभ भरता है । "युग-नाद" में कवि का यह विक्षोभ देखने को मिलता है -

"धीरे-धीरे परिणाम स्पष्ट,
टुकडे टुकडे
स्वाधीन देश का मोह भंग,
सपना विनष्ट
अवसरवादी नेताओं की,
संघर्षकाल में किए गए
साधन के फल भोगने सँजोने की-वेला,
भूखी, नंगी जनता गरीब की अवहेला ।"[2]

---

1. बच्चन - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - पृ: 66
2. वही पृ: 52

व्यंग का स्वर

अभिमानी, दम्भी तथा निष्क्रिय लोगों पर व्यंग्य कसते हुए वर्तमान की ज्वलंत समस्याओं को "परिवार नियोजन", "नई लीक", "युग-नाद", "विश्वास-अविश्वास", "खंडित मूर्तियों की आवाज़" आदि कविताओं के ज़रिए मुखरित किया है । "वसीयतनामा" में तो कवि यहाँ तक बोल उठते हैं -

अब कानून-कचहरी ऐसी
बेटे को भी कहो बाप का बेटा साबित
करने में दिक्कत होती है ।"[1]

साहित्य के क्षेत्र में फैली अराजकता, नित नए नए वादों की उद्भावना, तथा वाणी में आधुनिकता परन्तु कर्म में पुरानी लीकों के सपूतों को कवि ने कटु आलोचना की है -

"कवि ब्रह्मा है,
औ' कविता ब्रह्मा की वाणी ;
नई आज भी,
समझ सको तो,
लीक पुरानी ।"[2]

"दांत का दर्द", "प्यार", "बूँद", "न जीने में, न मरने में", "सामूहिक प्रयास", "मेरी अखियाँ", "आघात-व्याघात", "पैमाना", "दूसरों के उठाये" आदि शीर्षक कवितायें व्यंग्य की दृष्टि से संग्रह की आवाज़ों में सबसे ऊपर आनेवाली आवाज़ें हैं । एक उदाहरण द्रष्टव्य है -

---

1. बच्चन - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - पृ: 44
2. वही पृ: 87

"जिसने बहुत किया
उसने कहा मैं ने कुछ नहीं किया ।
जिसने कम किया
उसने कहा मैं ने बहुत किया ।
जिसने कुछ नहीं किया
उसने कहा मैं ने सब कुछ किया ।
काम ने अपना पैमाना छिपाया,
आदमी ने बता दिया ।"[1]

उभरते प्रतिमानों के रूप

"कटती प्रतिमाओं की आवाज़" के सात महीने बाद प्रकाशित और उसी के रचना-काल में लिखा गया प्रस्तुत संग्रह कवि की कविताओं का नूतन संग्रह है । इसमें कुल 71 कवितायें हैं । यहाँ विघटन और बिखराव के बीच विनिर्मित हो रहे नवीन-सृजन को प्रतिभासित करने का प्रयत्न किया गया है । यह संग्रह पढते समय हम समझ सकते हैं कि कवि में अब भी प्रधान रूप से ~~भर~~ गीतकार समाये हुए हैं । उनके मुक्त छंद की आत्मा में गीतकार ही बेठे हुए हैं । जैसे कवि अपने अतीत को भुलावे के लाख लाख प्रयत्न करते हैं, पर अतीत है कि आँखों के सामने से जाता ही नहीं । यह रचना वास्तव में "कटती प्रतिमाओं की आवाज़" का ही पूरक है । कवि स्वयं भी स्वीकारते हैं कि "आप ऐसे समझें कि चूँकि संख्या में कवितायें अधिक थीं, इसलिए उन्हें दो खण्डों में प्रकाशित किया जा रहा है ।"[2]

---

1. बच्चन - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - पृः 40
2. वही पृः 10

इस संग्रह की अधिकांश रचनायें कवि की आस्था और जीवन लालसा से शोभित हैं । "यह काव्य रचना आस्था के आलोक की रश्मियों को विकीर्ण करनेवाली है ।"[1] "उभरते प्रतिमानों के रूप" बच्चन की निर्माणकारी क्षमता का परिचायक है । पुरानी प्रतिमाओं की टूटन सुनते हुए कवि कहते हैं कि "उन्हें टूटने से कोई बचा भी नहीं सकता, पर नई प्रतिमाओं को उभरने से कोई रोक भी नहीं सकता । नई प्रतिमायें निश्चय खडी होंगी, साथ में खडे होंगे ए नए प्रतिमान शायद फिर कभी टूटकर फिर बनने केलिए । विघटन की अनिवार्य-प्रक्रिया के साथ सृजन की अपरिहार्य सक्रियता भी अनवरुद्ध चलेगी । विघटन-मुखर घडियों में हम इस विश्वास को दृढता से पकडे रहें ।"[2]

संकलन की अधिकांश कवितायें कवि के विदेश भ्रमण के दौरान स्वत: ही निर्मित होती गई हैं । "सीवान किनारे" से संबद्ध सात कविताओं के अतिरिक्त "वोलगा से गंगा" तिबलिसी पहाडी पर "जिटसे और तुरेइमी "जैसे शीर्षक कवितायें इसी क्रम में देखे जा सकते हैं । सोवियत गणराज्य के विभिन्न स्थान, नदी, पहाड, गिरजे और स्मारक का वर्णन इतिवृत्तात्मक बन पडा है ।

"उभरते प्रतिमानों के रूप में वे मानदंड और विश्वास संकलित हैं जो कटती प्रतिमाओं की आवाज़ के बीच से उभरने का प्रयास कर रहे हैं । वे आज की टूटती हुई स्थितियों में से कुछ ऐसे प्रतिमान निर्मित कराना चाहते थे जो मानव-आस्था की खोज और जीवन के प्रति तीव्र विश्वास की भावना से प्रेरित हों"। कहने की आवश्यकता नहीं कि "उभरते प्रतिमानों के रूप" इसी आवश्यकता की पूर्ति का प्रयास है ।

---

1. हरस्वरूप परिक - बच्चन का परवर्ती काव्य - पृ: 15
2. बच्चन - उभरते प्रतिमानों के रूप - पृ: 162

युगीन संदर्भ

"उभरते प्रतिमानों के रूप" की प्रथम विशेषता युगीन संदर्भों से संबंधित है । इस कृति में युग में जो विषमताएँ, नवीन समस्याओं के मारे उत्पन्न हो गई हैं ,उनपर कवि की कोई आस्था नहीं है, वे उनके बीच से नई बात कहना चाहते हैं । "रंगे शियारें", "बंदरों का संघर्ष" आदि शीर्षक कवितायें आज के युग की व्यर्थ स्वार्थ-भावना और मनुष्य को उसकी इन्सानियत से अलग कर देखने की प्रवृत्ति पर तीखा प्रहार करती हैं ।

"युग बदलता है, समाज बदलता है । उसके साथ मनुष्य के विचारों में भी परिवर्तन आते हैं । जीवन का भाषदण्ड बदलता है, लेकिन सत्य कभी नहीं बदलता । सुख-दुःख, दिवस-रात, आस्था अनास्थाओं का चक्र तो चलता ही रहता है, प्रतिमा बनती है, बिगडती है । पुराने पत्ते गिरते हैं तो नए भी तो आते हैं ।"[1]

पुराने पत्तें,
एक-एक कर अरे गिरे,
नए पल्लव,
सब निकल पडे एक साथ,
आओ पहचानें
संहार का दुर्बल
और सृजन का सबल हाथ ।"[2]

---

1. डा. इन्दुबाल दीवान - बच्चन : अनुभूति और अभिव्यक्ति - पृ: 62
2. बच्चन - उभरते प्रतिमानों के रूप - पृ: 81-82

प्रजातंत्र और राजनीति से संबद्ध रचनायें

इस संकलन की अधिकांश कवितायें ऐसी हैं जो हमारी प्रजातंत्रात्मक पद्धति का असली खाका भी पेश करती हैं । अधिकतर कवितायें राजनीतिक दुनियाँ का विवरण प्रस्तुत करती हैं । "प्रजातंत्र और परिवारतेज" कविता की भीतरी आवाज़ बडी सटीक है -

"प्रजातंत्र के मरीज़ का
सबसे बडा रोग है बडबडाना,
सबसे बडी औषधि है
शब्द ।"[1]

इसी विषय को लक्ष्य करके संकलन की शोभा बढानेवाली कविताओं में जवाहर जयन्ती पार्क, "दो जंगम राजनीतिज्ञों की जडमूर्तियाँ", "घेराव", "जमाने के जुद्दू" आदि रचनायें भी आती हैं । कवि ने "छलयुग का कोरस" द्वारा देश की आर्थिक व राजनैतिक वास्तविकता का स्पष्ट चित्र अंकित किया है ।

टूटते हुए मानवीय मूल्य और नई तथा पुरानी पीढी का संघर्ष

इस संकलन में सात-आठ कवितायें ऐसी हैं जो टूटते हुए मानवीय मूल्य और नई तथा पुरानी पीढ़ी के संघर्ष को अभिव्यक्त करती हैं । "तनाव", "पगडंडी", "सडक", "मद्य नगर", "गन्दा शहर", "आस्था" आदि कवितायें इसी प्रकार के मानवीय संबंधों का हवाला देती हैं । कवि का जागरूक कलाकार सतर्कता की भूमिका अदा करता हुआ मानवीय मूल्यों के बिगडते और उन्हीं में से बनते नये मूल्यों की कहानी साफ ज़बान में कहता

---

1. बच्चन - उभरते प्रतिमानों के रूप - पृ: 82

चलता है । आज की युवा-पीढी जीवन से घबराकर जीवन के सामने आई हुई समस्याओं का दोष पुरानी पीढी पर उतारती हैं और कहती है कि हमें क्यों पैदा किया था ?

शाश्वत जीवन सत्य

कुछ कविताओं में शाश्वत जीवन-सत्य पर बच्चन ने अपने मत प्रकट किये हैं । "बडा बडप्पन" और पतझर" "वसन्त" इस कोटि की रचनाएँ हैं । आजकल जो छोटे लोग अपने से बडों को खत्म करने की धुन में हैं उन्हें लक्ष्य करके कवि कहते हैं -

"छोटे लोग गोलियों का निशाना बनाकर
बडों को खत्म कर रहे हैं ।
नहीं ।
बडप्पन को अचूक मान्यता दे रहे हैं ।"[1]

अतीत की स्मृति

कतिपय कविताओं में कवि की दृष्टि अतीत की ओर चली जाती है । फलत: कवि बार बार अपने परिवेश को देखते, भोगते हुए भी अतीत की मीठी स्मृतियों में खोते दिखाई देते हैं । "संकलन को चांदी को सीढी"[2] यह बात स्पष्ट करती है कि पिछली जिन्दगी में किये गये कर्मों से अपने आपको तोड लेना कितना कठिन होता है ।

रचनाकार के प्रति आज के समाज की प्रतिक्रिया

साहित्य के नाम पर आज जो कुछ लिखा जा रहा है यह रचनाकार के प्रति समाज की क्या प्रतिक्रिया है - आदि का चित्रण भी कवि ने सुंदर ढंग से किया है -

---

1. बच्चन - उभरते प्रतिमानों के रूप - पृ: 143
2. वही पृ: 127

"कला और साहित्य शगल हैं
कुछ रईस जादों की
फुरसत की घड़ियों के
बाकी लोग सिनेमा की
चलतू कहानियां
सस्ते गानों से
जीवन को ऊब मिटाते या कम करते ।"[1]

आस्था का स्वर

इस संकलन की कुछ कविताओं में आस्था का स्वर गूंज उठता है । आस्था को मज़बूत बाहों में सुरक्षित विश्वास कवि के भीतर प्रसन्नता और आशा का संचार करता है -

"तुमने
प्रतिमा का सिर काट लिया
पर लोगों ने फिर भी झुकाना नहीं छोड़ा है
तुमने मूर्ति को तोड़ा,
लोगों की आस्था को नहीं तोड़ा है ।
और आस्था ने
बहुत बार
कटे सिर को धड़ से जोड़ा है ।[2]

---

1. बच्चन - उभरते प्रतिमानों के रूप - पृ: 111
2. वही पृ: 130

व्यंग्यात्मकता

"शुद्ध दूध", "दो जंगम राजनीतिज्ञों की जड मूर्तियाँ", "महानगर" आदि कविताओं में बच्चन के व्यंग्य की तीव्रता को आँका जा सकता है। "दोहा सूरत", "जवाहर जयंती पार्क", "पहेली आदि कविताओं में बच्चन ने नेहरू युग और वर्तमान राजनैतिक, सामाजिक व्यवस्था पर व्यंग्य किया है। "चाँदी की सीढी द्वारा"[1] धन की बदौलत सब कुछ प्राप्त करनेवालों पर व्यंग्य किया गया है। संक्षेप में "उभरते प्रतिमानों" के रूप में कुछ ऐसी कवितायें हैं जिनके मर्म को पहले दबा छोड दिया गया था, अब उभर आया है, साथ ही जिनका मर्म विशेष रूप से सायास उभरने का प्रयत्न किया है, दब भी गया है।"[2]

जाल समेटा

"जाल समेटा" अब तक प्रकाशित काव्य-संग्रहों में नवीनतम है। इस कृति में भी बच्चन सर्वत्र अपनी भावना के प्रति ईमानदार रहे हैं। उन्होंने जब जैसा अनुभव किया है उसे अपनी कविता में बाँध दिया है। इसका प्रकाशन वर्ष 1973 है। स्वयं कवि के अनुसार "मेरा भी अवचेतन शायद सर्प कुंडल को समर्पित हो चुका है, जैसा कि मेरा हस्ताक्षर इंगित करता है। कवि की प्रत्येक पंक्ति, प्रत्येक कविता, उसका सारा काव्य सर्प की काया के समान सुसंबद्ध होना चाहिए, आदि से अंत तक समग्र साथ समान गतिमय, प्रत्येक अंश को परिपूर्ण, परिपूर्ण प्रत्येक अंश को प्रस्फुरणशील रखता हुआ। मनीषी आदि चेतना को केवल एक बिन्दु पर स्पर्श कर सकता है, कवि उसे चारों तरफ से घेर लेता है।"[3]

---

1. बच्चन - उभरते प्रतिमानों के रूप - पृ: 127
2. कृष्णचन्द्र पण्ड्या - बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व - पृ: 234
3. बच्चन - क्या भूलूँ क्या याद करूँ - पृ: 258

कवि ने स्पष्ट घोषणा कर दी थी -

"कवि का पंथ अनंत सर्प-सा
जो मुख में है पूँछ दबाए ।[1]

इस संग्रह की कवितायें एक ऐसे व्यक्ति की कवितायें हैं जिसके सामने वह दीवार आ गयी है जिसके आगे गति नहीं है । वह बहुत चला है । उसने दुनिया बहुत देखी है । और अनुभव के आधार पर उसने कुछ निष्कर्ष निकाले हैं ।

बच्चन की कविता मोह से शुरू होकर मोह भंग पर समाप्त हो गई - "हार" और "जाल" मोह और मोह भंग के प्रतीक ही तो हैं । कवि कहते हैं -

"मैं तो यही दुआ करता हूँ -
मोह-भंग करना ही तो है काम वक्त का ।"[2]

बच्चन ने कविता से सब कुछ पाया-प्रसिद्धि, प्रतिष्ठा, पुरस्कार, जनता का प्यार, पाठकों का आदर । "बच्चन ने कविता को तपस्या की तरह जिया है । उनका मोहभंग स्वयं से नहीं, दुनिया की तरफ से हुआ है । यानी मोहभंग की जडें दुनियादारी से खट्टे-कडुए अनुभवों में हैं ।"[3] यह मोह भंग की मनस्थिति की 37 कविताओं का संग्रह है ।

<u>पछतावे का स्वर</u>

"प्रेम की मंद-मृत्यु", "गलतफहमी", "उन्होंने कहा था", "कमर", "बूढा किसान" आदि कवितायें बुढापे के सिर पर आ खडे होने की अनुभूति

---

1. बच्चन - आरती और अंगारे - पृ: 76
2. बच्चन - जाल समेटा - पृ: 8
3. श्री. दिनकर सोनलकर - नया साहित्य अंक - जून 73 - पृ: 6

की कवितायें हैं । कवि सहज ही बुढापे को जीवन के अनिवार्य तथ्य के रूप में स्वीकार नहीं करते" -

मैं जीवन की हर हलचल से
कुछ पल सुखमय
अमरण - अक्षय
चुन लेता हूँ ।

उनकी कविताओं में एक प्रकार का पछतावा है । पश्चात्ताप की मनस्थिति का एक पक्ष सनकीपन और कडवाहट है । यह व्यक्तियों पर व्यंग्य के रूप में सामने जाता है । "दिल्ली की मुसीबत" को उदाहरणस्वरूप लिया जा सकता है । यह देश के दिवंगत प्रधानमंत्री नेहरू और लालबहादुर शास्त्री और उनसे संबद्ध व्यक्ति व्यंग्य का निशाना है । इसमें समाधियों और स्मारकों की परम्परा के दुष्परिणामों की आशंका अभिव्यक्त की है -

"इसलिए, हे भगवान,
तुमसे एक प्रार्थना,
भारत का हर प्रधान मंत्री
सौ-सौ बरस तक अपनी गद्दी पर रहे बना
क्योंकि हरेक अमर होकर अगर घेरेगा
कई-कई वर्गमील
दिल्ली बेचारी इतनी ज़मीन कहाँ से लाएगी ।
बदकिस्मत आखिर को
समाधि और स्मारकों की नगरी बनके रह जाएगी ।"[1]

---

1. बच्चन - डाल समेटा - पृ: 34
2. वही - पृ. 21

"जाल समेटा" की कविताओं में वृद्ध व्यक्ति के अनुभव सुख, पश्चाताप, उपलब्धि शून्यता का दुख, हताशा, कटुता आदि व्यक्त हुए हैं । ये इस संग्रह की कवितायें भी बच्चन की ईमानदारी को व्यक्त करती है ।"[1]
जिन्दगी भर जीवन संघर्ष करते हुए कवि कहते हैं -

"अब समाप्त हो चुका मेरा काम
करना है बस आराम हो आराम ।"[2]

कवि के मत के अनुसार यात्रा आगे संभव हुई और उसका वर्णन करने का अवसर मिला तो किसी दूसरे माध्यम से विदा ।"[3]

सामाजिक चेतना के साथ संबद्धता

"जाल समेटा" में उद्‌बोधनों और जानी हुई स्थितियों पर टिप्पणियों की भरमार है । इसमें कवि सामाजिक चेतना के साथ अपनी संबद्धता जाहिर करते हैं । इसमें बच्चन युवापीढी के आक्षेपों और आक्रमणों का प्रत्युत्तर भी देते हैं । अपना पक्ष पेश करने केलिए उन्होंने पूरी नम्रता दिखायी है -

मैं वेदों औ उपनिषदों के संस्कारों का -
मैं महर्षियों के, संतों के परिवार का
मैं आत्मावान ज्ञानियों और गुरुओं की परंपराओं का
मैं कभी आत्महत्या का पक्ष नहीं लूँगा ।[4]

---

1. डा.हृदयाल - समीक्षा - सं - देवेन्द्रनाथ शर्मा - पृ: 20
2. बच्चन - जाल समेटा - पृ: 68
3. बच्चन - जाल समेटा - पृ: 9
4. वही पृ: 19

अकविता - उपादान के रूप में

कविता में अकविता को उपादान कैसे बनाया जाए, कैसे ऐसी कविता लिखी जाए, जिसमें पारम्परिक कविता की सीख तो रहे, मगर सूरत बदल जाए - यह प्रयत्न "जाल समेटा" काव्य संग्रह में किया गया है । "जाल समेटा" काव्य में वे कविता अकविता के उपादानों को अपनी तरह इस तरह मिलाते हैं कि लोग उन्हें कवि और अकवि एक साथ समझने लगे -

गलतफ़हमी में हो
तुमने हमने
जीवन नहीं, जिया
जीवन ने हमको जिया
मिलने-पाने के सवाल का हो
तो हमें क्यों उसे सिरदर्द हो ।[1]

क्रान्ति बोध

बच्चन की विशेषता यह है कि वे तो यथास्थिति की भली भाँति नुक्ताचीनी करते हैं । समकालीन कवियों में जो क्रान्तिबोध है वह भी "जाल समेटा" के केन्द्र में कुलबुलाता है -

"अपने खून में अपनी ऊँगली डुबोकर -
एक सीधी खडी लकीर खींच सकनेवालों का ।
इस दुनिया को इन्तज़ार है ।"[2]

---

1. बच्चन - जाल समेटा - पृ: 58
2. वही पृ: 16

आदर्श नेता का आह्वान

बच्चन जी के इस नवीनतम कृति में उनकी विशिष्ट मनस्थिति की कवितायें संकलित हुई हैं । इस संग्रह की "रक्त की लिखत" नामक पहली कविता में आत्म बलिदान केलिए उद्यत होकर स्थिर चित्त से जनता का नेतृत्व करनेवाले नेता का आह्वान किया गया है ।

शोषण और अन्याय का साम्राज्य

आज चारों ओर शोषण और अन्याय का साम्राज्य फैला हुआ है, मगर किसी में उससे संघर्ष करने की क्षमता नहीं है, "क्योंकि सभी की कहीं दबी है कोर ।"[1] रक्षात्मक आक्रमण नामक दूसरी कविता में समाज की इस दयनीय दशा पर गहरा व्यंग्य किया गया है । इसमें कवि समोचोन धरातल पर खडे होकर यहाँ तक हो सके हैं -

"अर्द्ध रात्रि के
महामौन, महदांधकार में
एक मांद से
पंचानन चुपचाप निकलता,
मूक, दबे पाँवों से चलता,
गर्जन-तर्जन तो गंवार सिंहों की भाषा ।"[2]

अन्याय से संघर्ष करते हुए आत्मबलि देने के स्थान पर मनुष्य उसे सहता है और यदि सह नहीं पाता तो कायरों के समान आत्मघात कर बैठता है । जातियाँ अत्याचार से नहीं मरतीं, अन्याय सहने से मरती है ।

---

1. बच्चन - जाल समेटा - पृ: 18
2. वही पृ: 18

"चेक आत्मदाही" में कवि इसलिए कह उठते हैं -

"जातियाँ नहीं मरतीं
कि शक्ति कोई भारी । अत्याचारी
उन पर चढ़ उन्हें दबाती हैं,
वे मरती हैं
जब अपने शीश झुकाकर वे
अन्यायों को सह जाती हैं ।"[1]

संघर्ष की भावना

"संघर्ष-क्रम" में कवि बताते हैं कि पहले तो मनुष्य को अपनी रक्षा केलिए ऋतुओं, जंगली जानवरों, लुटेरों, रूढियों आदि से संघर्ष करना पडता था, पर अब तो शासन के आत्महीन पुरजों, नेताओं, निर्णायकों और विधायकों का स्वांग भरनेवाले जन्तुओं से संघर्ष करना पडता है -

"एक दिन इंसान को संघर्ष करना पडा था
शासन के आत्महीन पुरजों से क्लीवों से
और जंतुओं से जो
नेता, निर्णायक, जननायक विधायक का
स्वांग भर निकलते थे ।"[2]

व्यंग्य की भावना

"सन् 2068 की हिन्दी कक्षा" में उन उच्चतम राजकीय अधिकारियों और नेताओं पर करारी चोट की गयी है जो राष्ट्र ने महान कवियों के

---

1. बच्चन - जाल समेटा - पृ: 21
2. वही पृ: 31

साथ अपने फोटो सिंचवाने में तो गर्व और गौरव का अनुभव करते हैं, पर उनकी रचनाओं से स्वयं अनभिज्ञ हैं ।

अभिव्यंना पक्ष

दो चट्टानें

कलाकार अपने अपने माध्यम से अपनी कलाकृति को संसार के आगे उपस्थित करता है । चित्रकार रूप और रंग द्वारा, अभिनेता आंगिक और वाचिक अभिनय के द्वारा, कवि अपनी भाषा द्वारा अपनी कला को प्रस्तुत करता है । भाषा की सहजता ही बच्चन की लोकप्रियता का मुख्य कारण है । अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने केलिए कवि भाषा की लक्षणा, व्यंजना और अभिधा शक्तियों से काम लेता है । "बच्चन की भाषा न तो द्विवेदी युग के कवियों की भाँति ऊबड-खाबड और ढीली-ढाली है, और ४ न नवीन व माखनलाल चतुर्वेदी की भाँति अनगढ और जटिल, न छायावादी कवियों की भाँति गूढ, लाक्षणिक और जटिल है ।"[1]

"दो चट्टानों" की भाषा जीवन के यथार्थ को कविता का रूप दे देने की अद्भुत क्षमता रखती है ।

बहुत दिन बीते

प्रस्तुत कविता-संग्रह का शिल्प विषय के अनुकूल ही सरल, सहज एवं व्यावहारिक है । अभिव्यंजना पद्धति में जो स्पष्टता एवं ऋजुता दीखती है वह एक प्रकार से बच्चन के कवि-संयम का ही प्रतीक है । डॉ.जोशी ने इस संबंध में यों कह दिया है - "मुझे लगता है कि आलोच्य कृति की इन कविताओं में अभिव्यंजना का सर्वाधिक सौन्दर्य ऋजुता में हैं । कहीं भी अस्पष्टता की

---

1. डॉ. नवलकिशोर भामडा : बच्चन जीवन और काव्य - पृ: 164

गाठें नहीं है, जहाँ पर प्लास्टिक के फूलों या नन्दन कानन के कुसुमों से अभिव्यंजना को तजावट नहीं की गई है ।"[1] साधारणीकरण इन कविताओं की अभिव्यंजना का प्राण है -

"सब - तुम - हम
काल के दांतों तले
जैसे चिविंगगम ।
कच - कच - कच ।"[2]

पाँच लघु पंक्तियों में नये चिंतन और उपमान प्रक्रिया के ढंग को तरलता से व्यक्त कर बच्चन ने एक अद्भुत गरिमा दी है ।

"बहुत दिन बीते" में जीवन का यथार्थ मानवीय संवेदना, सुधियाँ, सपने और सच्चाई सरल भाषा में अभिव्यक्त हुई हैं । डॉ.हरिचरण वर्मा के ये शब्द सही तथ्य के बोधक हैं - "कवि की चेतना भूमि पर यथार्थ का पौधा भी लगा है और आधुनिक जीवन की विषमता और रिक्तता का रंग भी । हां, इसे जो व्यंग्य का खाद-पानी मिला है, वह नहीं मिलता तो कविताओं का स्वर इतना विश्वसनीय न बन पाता ।"

भावानुरूप शब्द योजना

बच्चन ने "बहुत दिन बीते" में अनेक स्थानों में भावानुरूप शब्द-योजना की है । "पाँच मूर्तियाँ" में शिशु और गटर केलिए प्रस्तुत शब्दावली की सार्थकता देखिये -

"और यह शिशु
सरल, विह्वल,
सुप्त, स्वप्निल,

---

1. डॉ.जीवन प्रकाश जोशी - बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व - पृ: 122
2. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 136

शुभ्र, निर्मल,
है पडा असहाय - सा
मल-मूत्र, गंद गलीज़ के दुर्गन्ध
गच गहरे गटर में ।"[1]

प्रतीक

प्राकृतिक प्रतीकों का इस रचना में प्रचुर प्रयोग हुआ है । "बहुत दिन बीते" संग्रह की "भारत के सांप", "बाढ", "कचनार की कली", "सिंधु बिन्दु आदि कविताओं में यह प्रतीक देखा जा सकता है -

किसी विवशता से खिलता हूँ,
खुलने की साध तो नहीं है ;
जग में अनजाना रह जाना
कोई अपराध तो नहीं है ।"[2]

"पहाड हिरन - घोडा-हाथी"[3] में पहाड का हिरन बाल्यकाल का, घोडा यौवन का और हाथी बुढापे का प्रतीक है । प्रतीकात्मकता की दृष्टि से इस कविता की अभिव्यक्ति उत्कृष्ट है । "खोटा सिक्का" किसी चालू और बेकार आदमी का व्यंग्यपूर्ण प्रतीक है -

"खोटा सिक्का
टकसाली सिक्के से
आगे - पहले चलता ।"[4]

---

1. बहुत दिन बीते - पृ: 147-48
2. वही पृ: 67
3. वही पृ: 127
4. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 46

"यात्रांत" में दैनिक जीवन संबंधी प्रतीक रथ और यात्रा का सफल प्रयोग हुआ है । यहाँ रथ शरीर का और अश्व मानवमन का प्रतीक है -

"अश्व चकनाचूर थककर
और रथ की चूल चूल
हिली हुई, ढीली पडी है,
थके घोडों को
ज़रा-सा थपथपा दो ।"[1]

<u>बिंब</u>

दृश्य बिंब का सुन्दर परिपाक निम्न लिखित पंक्तियों में देखा जा सकता है -

"कितने घर, कितनी झोंपडियों में
माटी के दिवले जलते,
जिनके अंधियारो में धनियाँ
धान पकातीं,
होरी अपनी गोरी का घूंघट सरकाता,
होरिल अपनी माँ का आंचल ।"[2]

मानस बिंब यहाँ सुन्दर बन पडे हैं, एक उदाहरण पर्याप्त होगा -

आँख कभी उठकर
दिमाग में मंडलाती है,
और कभी झुककर
दिल में डुबकी लेती है ।"[3]

---

1. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 161
2. वही पृ: 50
3. वही पृ: 67

शैली

व्याख्यात्मक शैली, सूत्र शैली, पुनरावृत्ति शैली, प्रश्नोत्तर शैली और प्रयोग वैचित्र्य शैली का सुंदर प्रयोग इस संग्रह में हुआ है ।

व्याख्यात्मक शैली

इसमें कोई बात बताने के बाद या सूत्र के रूप में रखकर फिर उसकी व्याख्या की जाती है । "किनारा कसौटी है" में इस शैली का सहज प्रयोग हुआ है -

"सच पूछो तो
अधिक सचेत, सतर्क, सजग
रहने की वेला अब आई है ।"[1]

यह वाक्य रखकर शेष कविता में इसकी व्याख्या की गई है ।

प्रश्नोत्तर शैली

यह शैली बौद्धिक या तार्किक विवेचन में प्रयुक्त हुई है यथा -

"रूप ?
कहा माटी ने
वह तो मेरा ही है ।
रंग ?
किरण बोली
वह मैं ही सबको देती ।"[2]

---

1. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 124
2. वही पृ: 89

छंद

मुक्तक छंद

बच्चन ने मुक्तक छंद में जो गीत लिखे हैं वे काव्यात्मक उपलब्धि को दृष्टि से काफी पीछे हैं । फिर भी उनमें विचारों की गहनता है । उसे रिदम से पढे जा सकते हैं । मुक्त छद को अंग्रेज़ी में "फ्री वर्स" कहा गया है । मुक्त छंद को विषय छंद भी माना गया है । अनिश्चितता होते हुए भी इसमें एक लय होती है, जिसे स्वाभाविक रूप से सस्वर पढा जा सकता है । यथा -

"जिसके पथ को नहीं पकडती
शूल-फूल की शोलों की, शबनम की जडता ?
सत्य नहीं जो आँखों से दिखलाई पडता ।"[1]

कटती प्रतिमाओं की आवाज़

भाषा

इस कृति को पढकर ऐसा लगता है कि उलझन, जटिलता और असमर्थ युग को देखकर क्षुब्ध कवि की भाषा अधिकाधिक रूप में व्यंजनापरक हो उठी है । उसमें सहजता की स्थिति स्पष्ट दीखती है । शब्दावली बोलचाल की है ।

उपमान हमारी जिन्दगी के भीतर से निकले हुए हैं, प्रतीक भी सहज ग्राह्य हैं । शैली कहीं कहीं उनकी प्रयोगशीलता को व्यक्त करती है । प्रतीक चयन में नवीनता के दर्शन नहीं होते । प्रस्तुत संकलन की भाषा "कवि की प्रतिम ज्ञान-क्षमता को उतना व्यक्त नहीं करती, जितना उनके अभिधात्मक रूप के कारण आई सहजता को व्यक्त करती है ।"[2]

---

1. बच्चन - बहुत दिन बीते - पृ: 73
2. हरस्वरूप पारीक - बच्चन का परवर्ती काव्य - पृ: 38

मुहावरों का प्रयोग

कवि के हाथों पड मुहावरे भी द्विगुणित शोभा से चमक उठे हैं । एक मुहावरा है "तेली का तेल जले मशालची का दिल जले" । लोकप्रिय कवियों पर कुढनेवाले समालोचकों केलिए कवि ने ई कहा है -

"वही निनाद है
कि तेली का तेल जले,
मशालची को ..... ।
मुहावरे का लक्ष्य तो नीचे है,
पर निशाना ऊपर भी बैठेगा,
मशालची की छाती फटे ।"[1]

प्रतीक

"जड की मुस्कान", "पक्का पंजा", "नई उम्रों का नया सूरज", "सुबह शाम" आदि कविताओं में प्राकृतिक प्रतीकों का सहज प्रयोग हुआ है । "बूंद" के प्रतीक से कूपमंडूकता से बाहर निकले मानव को सीख दी गई है -

"तू कुए से उछली
तो तू ने बहुत अच्छा किया ।
तू कूप से ही नहीं निकली,
कूपमंडूकत्व से भी निकली,
बाहर हुई ।
पर अब गलती करेगी
अगर यह न समझेगी ।
कि तू है सागर का अंश ।"[2]

---

1. बच्चन - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - पृ: 127
2. वही पृ: 88

इसके प्रतीक डॉ.सुधीन्द्र के मत को सिद्ध करते हैं - "प्रतीक वस्तुत: अप्रस्तुत की समस्त आत्मा या धर्म या गुण का समन्वित रूप लेकर आनेवाले प्रस्तुत का नाम है । प्रतीक अप्रस्तुत रूप में अवतार ही है ।"[1]

बिंब

ऐन्द्रिय-अनुभूतियों को तरलता के साथ और प्रत्यक्ष करनेवाले ऐन्द्रिय बिंब इस रचना में कई जगह सुलभ हैं । ङ्क बिंब का अर्थ है चित्रयोजना । जैसे आँखों से देखा चित्र सीधा हृदय पर असर डालता है, उसी प्रकार काव्य में बिंब योजना जन मानस को आकर्षित करके चित्रात्मक वातावरण प्रस्तुत करने में सहायक होता है । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से बिंब एक मानसिक प्रक्रिया है जो प्रत्यक्ष बोध पर आधारित है । श्रवण बिंब का रम्य उदाहरण प्रस्तुत है -

पर उठते ही मैं गिरा
अक्षर भरी गगरी में
और .... स .... ष .... श .... ह.... करके,
पड, गता टंडा ।"[2]

शैली

इस रचना में बच्चन ने सूत्र शैली, निष्कर्ष शैली और श्रृंखला शैली में अपने प्रतिपाद्य को वाणी दी है । श्रृंखला शैली के ज़रिए उन्होंने किसी कथन को परस्पर गुंफित लडी-सी बाँध दी है -

"उमर चढा,
पौधे से पेड हुआ
प्रकृति की दुआ

---

1. डॉ.सुधीन्द्र - हिन्दी कविता में युगान्तर - पृ: 364
2. बच्चन - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - पृ: 119

फूलगो पर फूल
फूल में कल लगा
फल फूला
रस भरा ।"[1]

उभरते प्रतिमानों के रूप

भाषा

भाषा अभिधात्मक है । इस संकलन में बच्चन ने शब्दों के सही चुनाव को ओर काफी ध्यान दिया है । उन्होंने शब्दों के कुछ नये रूप भी गाढ लिये हैं । "भाषा को अधिकाधिक व्यंजक और सप्राण बनाने केलिए कवि ने कुछ ऐसे रोजमर्रा के शब्दों एवं उपकरणों को प्रतीकत्व प्रदान किया है, जिनके द्वारा कवि ने समसामयिक जीवन-पद्धति और उनसे अनुभूतियों को अभिव्यक्ति का बाना पहनाया है ।"[2] असल में" बच्चन के ज़माने को काव्य भाषा या खुद बच्चन को कविता-भाषा की बनावट ऐसी नहीं है कि वह अपने बाद की पीढी के चिन्तन और लेखन की भाषा को आत्मसात कर सके । बनाव-सिंगार, रोने-गाने, सूक्तियाँ सजाने, गाढने से भाषा में विस्फोट और संत्रास को अभिव्यक्ति नहीं हो सकती ।"[3] राम कुमार सिंह बच्चन की भाषा के बारे में जो मत प्रकट किया है वह इस संकलन के संदर्भ में सौ प्रतिशत ठीक निकला है - "नई कविता के प्रतीक, बिंब और अप्रस्तुत विधान उनकी भाषा में सहज ही चित्रित हो जाते हैं और गूढातिगूढ रहस्य सरल-संवेदन में ढल पल जाते हैं । बच्चन को अपनी भाषा पर सुगर्व

---

1. बच्चन - कटती प्रतिमाओं की आवाज़ - पृ: 34
2. हरस्वरूप पारीक - बच्चन का परवर्ती काव्य - पृ: 42
3. अनिल कुमार वीणा - अप्रैल - 70, पृ: 10

होना चाहिए और आधुनिक हिन्दी कविता-भाषा को बच्चन पर ।"[1]

बच्चन ने भाषा को सुपुष्ट और प्रभावशाली माध्यम के रूप में ही अपनाया है, उसे ध्येय कभी नहीं माना - "रचना करते समय भाव-विचारों की अभिव्यक्ति ही ध्येय होता है । शब्दों अथवा अभिव्यंजना के नये प्रयोगों केलिए लिखना मुझे अस्वाभाविक लगता है ।"[2] यह कथन "उभरते प्रतिमानों के रूप" में बहुत कुछ सही है । भाषा की अभिव्यक्ति क्षमता में यहाँ सर्वाधिक मंजाव और व्यंग्य प्रधानता लक्षित होती है ।

साकेतिकता

साकेतिकता और सरल सीधे उपमानों से कवि का कवित्व भरपूर है । पुरुष को चुनौती देनेवाला दम्भी परिवर्तन अपनी ऊँचाई की घोषणा कर रहा है, दूसरी ओर अद्भुत आकर्षणागार स्वरूप सरिता अपनी गहराई की गोपनता के साथ आमंत्रण देती है । दोनों की पुकार सुनकर कवि निर्णय ले, इससे पहले ही निर्णय हो जाता है -

"पर्वत चढने को शिक्षा देता रहा कि
सहसा सहज बहा ले गई नदी ।"[3]

प्रतीक

प्रतीक इन कविताओं में जहाँ तहाँ बिखरे पडे हैं । भाव-विचार की साकेतिकता पर और भी सक्षम प्रेषणीयता केलिए ये प्रतीक सफल सिद्ध हुए हैं । "उभरते प्रतिमानों के रूप" की "संध्या की ज्योति ध्वनि", "पहाड

---

1. डॉ. रामकुमार सिंह - छायावादी कवियों की गीत सृष्टि - पृ: 79
2. बच्चन - मेरी रचना प्रक्रिया - साप्ताहिक हिन्दुस्तान - 26-11-60, पृ: ।
3. बच्चन - उभरते प्रतिमानों के रूप - पृ: 45

और नदी", "अजीब गुलाब", "कवि और साँप" तथा पतझर : वजनत आदि कविताओं में प्राकृतिक प्रतीकों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया गया है ।[1]

शैली

बच्चन ने "उभरते प्रतिमानों के रूप" में वर्णनात्मक शैली, तुलनात्मक शैली, प्रश्नोत्तर शैली आदि का सहज प्रयोग किया है ।

वर्णनात्मक शैली

इस शैली में एक वस्तु अथवा व्यक्ति का कई तरह से वर्णन किया गया है । एक उदाहरण देखिए -

"जो सुन्दर थी,
सरल थी ,
कमनीय थी
कुलीन थी
सं संस्कारी थी,
जो सौम्य थी, पावन थी
पावनकारी थी ।"[2]

प्रश्नोत्तर शैली

कवि और साँप के बीच प्रश्नोत्तर देखिए -

"साँप, विष कहाँ से पाया
बहुत विषय पिया - खाया - पचाया ।
तुम्हें भगवान ने किसलिए बनाया ।[3]

---

1. बच्चन - उभरते प्रतिमानों के रूप - पृ: 44, 61, 146
2. वही - पृ: 87
3. वही - पृ: 144

तुलनात्मक शैली

"पगडंडी", "सडक", "संगीत और सिक्का", "कवि और साँप", "प्रजातंत्र और परिवार तंत्र" आदि कविताओं में तुलनात्मक शैली का प्रयोग हुआ है ।

जाल समेटा

"जाल समेटा की कवितायें भाषा, अभिव्यंजना कौशल, मुक्त छंदों का प्रवाह, लयमयता आदि गुणों से अनुग्रहीत हैं । हृदय पक्ष के स्थान पर बुद्धि पक्ष अधिक प्रबल और मुखर है । इसमें मुहावरों एवं अरबी फारसी शब्दों का सफल प्रयोग कवि की समर्थता के द्योतक हैं ।

काव्य सिद्धांत

बच्चन की सारी कवितायें रस-वर्षा, आनंद और लोक-हित के लक्ष्य के साथ जुडी हुई हैं । अपनी परवर्ती कविता में उनकी चेतना ने यथार्थ को अनावृत करने में विशेष रुचि दिखलाई है । उन्होंने लिखा है -

"मैं ने महसूस कर ली है अपनी भूल,
सीख लिया है, कडुआ पाठ,
पारदर्शी द्वार नहीं खोला जा सकता है ।
सत्य कविता में ही बोला जा सकता है ।[1]

निष्कर्ष

"दो चट्टानें" में बच्चन के परवर्ती काव्य की समसामयिकता, समन्वयशीलता, राष्ट्रीयता व्यंग्यशीलता, मूल्यहीनता, यथार्थवादी चेतना, भाषागत सहजता आदि अनेक विशेषतायें एक साथ बैठी दिखाई देती है ।

---

1. बच्चन - जाल समेटा - पृ: 60

परवर्ती काव्य की शैली इसमें परिपक्व होकर सामने आई है । अंतिम कविता "दो चट्टानें" हनुमान और सिसिफस के द्वारा अस्तित्ववादी दर्शन को व्यक्त करती है । मनुष्य को प्रत्येक परिस्थिति में अपने अस्तित्व की रक्षा करनी चाहिए । इस संकेत केलिए कवि ने दो प्रतीकों को आगे रख कर यह सिद्ध किया है कि हनुमान का व्यक्तित्व ही सिसिफस की तुलना में श्रेष्ठ है । बच्चन ने गंभीर सूक्ष्म बोध और तीखे युग-सत्य को संक्षिप्तता व ध्वन्यात्मकता और कहीं वर्णन- विस्तार के साथ किया है ।

"बहुत दिन बीते" की काव्य-रचना बहु आयामी है । इस संग्रह की कविताओं में कडुवाहट, स्वार्थ, छल, द्वेष, दिखावा और प्रपंच जैसे मूल्य विकसित हो गये हैं, उन्हें कवि ने कहीं तो सीधी-सादी शैली में व्यक्त किया है और कहीं व्यंग्य का सहारा लेकर । इसमें पीडा, क्षोभ, तनाव, विघटित मूल्य और परिवेशव्यापी धुंध अभिव्यक्त हुई है । ये कवितायें तीन धरातलों पर प्रतिष्ठित हैं । पहले धरातल में कवि के अपने अतीत में किये गये स्मरण और गुण-गान की पुनरावृत्ति है, कवि अतीत के स्मरण की आवश्यकता पर बल देते हैं । दूसरा धरातल वही है जहाँ रोमानी दृष्टिकोण को अपनाता हुआ कवि समकालीन संदर्भों में उसकी उपयोगिता को सिद्ध करता है । तीसरा धरातल वह है जिसमें सामाजिक विघटन, अराजकता और कुंठा व अवसाद के चित्र मिलते हैं । मुहावरों, कहावतों और प्रतीकों का सार्थक प्रयोग इसमें खूब हुआ है ।

कुल मिलाकर "कटती प्रतिमाओं की आवाज़" सामाजिक परिवेश, मानव मूल्य, राजनीतिक एवं प्रजातांत्रिक युग की विभीषिकाओं और उनसे उत्पन्न अवसाद को व्यक्त करता है । इसमें कवि का चिन्तन स्पष्ट सुलझा हुआ एवं व्यावहारिक है । यह संग्रह इस बात का साक्षी है कि शब्दों

को उचित रूप में प्रयोग करने में बच्चन बडे माहिर हैं । मुहावरों और लोक्तियों का सहज-सफल प्रयोग करने में बच्चन आधुनिक कवियों में अग्रणी माने जाते हैं । प्रतीकों, बिंबों का भी सहज प्रयोग, बच्चन की इस आलोच्य कृति में देखा जा सकता है ।

"उभरते प्रतिमानों के रूप" संग्रह मानव आस्था की खोज की कहानी है । पहले का प्रणय मस्ती एवं यौवन के प्रति समर्पित बच्चन यहाँ अत्यधिक सफाई से अपने परिवेश के प्रति समर्पित हो गये हैं । उनकी यह रचना मानवीय यथार्थ, मानव-संबंध और परिवेश से उत्पन्न संत्रस्त जिन्दगी का दस्तावेज़ है । व्यंग्य के दौरान कवि ने सभी सामाजिक, राजनैतिक मानव जीवन स्थितियों को चुना है । अंत में मैं कह सकती हूँ कि शिल्प एवं भाव बोध की दृष्टि से यह संग्रह अत्यंत महत्वपूर्ण है ।

उपसंहार

छायावादी कविताओं में व्यक्तिवादी भावनाओं की गहरी अभिव्यक्ति मिलती है । उत्तर छायावादी वैयक्तिक कविता में व्यक्तिवाद, अहंवाद के रूप में परिवर्तित हो गया । अहंवाद पूँजीवाद की विकृतियों का ही फल है । जीवन-संघर्ष से पराजित कवि अपने अहम् के घेरे के भीतर जमकर बैठ गये । वे अपने व्यक्तिगत सुख-दुःख, आशा-निराशा, प्रेम की सफलता-विफलता, प्रेमिका का रूप-चित्रण, मृत्यु की काली छाया, शराब और साकी से मनोरंजन आदि अभिव्यक्त करने लगे । बच्चन उत्तर छायावादी वैयक्तिक कविता के प्रमुख कवि हैं ।

कायस्थ कुलोत्पन्न बच्चन के व्यक्तित्व में सरलता, आत्मीयता और कर्मठता के गुण प्राप्त होते हैं । अपने विशाल और समृद्ध साहित्य के आधार पर उन्हें हिन्दी साहित्य जगत में एक उल्लेखनीय स्थान प्राप्त है । उनका जीवन समाज से संघर्षरता दिखलाई पडता है । नियति की भयंकर छाया उनके सिर पर चक्कर काटती है । वे पहले उससेबचने केलिए प्रेयसी और मधुशाला की शरण में जाते हैं । कवि-सम्मेलनों के सिर-मौर उन्होंने जवानी के दिनों में मधुकाव्य की रचना की है । "मधुशाला", "मधुबाला" और "मधुकलश" बच्चन को अधिक देर तक भ्रमपूर्ण आनंद देने में असमर्थ हुईं । वेदना के बोझ से वे जीवन से ही निराश हो चले ।

उत्तर छायावाद के कवियों की कवितायें प्रगीत काव्य की परंपरा में रखी जा सकती हैं । उनके मूल में व्यक्तिवादी विचारधारा अधिक साहस के साथ प्रत्यक्ष रूप में अभिव्यक्त होने लगी थी । उत्तर छायावादी कवियों की वैयक्तिक प्रतिक्रियायें श्रृंगारमूलक हैं । इनमें छायावादियों की रहस्यात्मक झिझक नहीं है । इन कवियों की प्रणयपरक कविताओं में छायावाद की अशरीरी सूक्ष्मता, किशोर-सुलभ आकर्षण और आध्यात्मिक श्रद्धा का

अभाव है । उनका जीवन-दर्शन लौकिक प्रेम या प्रगाढ वैयक्तिक इन्द्रियानुभूति पर आश्रित है । बच्चन के प्रणयगीतों में भी अनुभूति की सीधी अभिव्यंजना है ।

बच्चन के कवि और काव्य को पृथक् रूप से नहीं देखा जा सकता । उनकी चेतना एकांत व्यक्तिवादी है । वे उत्तर छायावादी कवियों में प्रेम के क्षेत्र में अपना अलग अस्तित्व रखते हैं । "निशा-निमंत्रण", "एकांत संगीत", "आकुल अंतर" आदि रचनाओं में वेदना की सघनता और कसक है । गीतकार के रूप में उनकी ख्याति अधिक फैल गयी है । बच्चन की कवितायें अपने पाठकों से सीधा संबंध स्थापित करने में सफल हुई हैं । उन्हें समझने केलिए बीच में किसी वक्तव्य या व्याख्या की ज़रूरत नहीं है ।

"तेरा हार", "मधुशाला", "मधुबाला" और मधुकलश में बच्चन ने हाला, प्याला आदि का प्रतीकात्मक प्रयोग किया है । प्रथम उत्थान की कविताओं में वे मस्ती के गायक के रूप में प्रकट हुए हैं । द्वितीय उत्थान में उन्होंने अपनी व्यक्तिगत प्रणय-निराशा के क्षेत्र में प्रवेश करके निजी अनुभूतियों को वाणी दी है । तृतीय उत्थान में उनके जीवन दर्शन में कुछ परिवर्तन आया । "सतरंगिनी", "मिलन यामिनी" आदि इस मनस्थिति के परिचायक हैं । "निशा निमंत्रण", "एकांत संगीत" और "आकुल अंतर" के निराशा और वेदना-प्रधान गीतों की तुलना में सतरंगिनी में उत्साह, गति और प्रणय की उमंग है, व्यथा से भरने के बदले निर्माण की आकांक्षा है । मार्ग के नुकीले कांटे के स्मरण के साथ आगे बढने की उत्कंठा है । इन गीतों को पढने के उपरांत स्पष्ट हो जाता है कि कवि की संवेदना उनके प्रणय-संसार में इधर-उधर मंडराती है ।

"धार के इधर उधर", "बंगाल का काल", आदि कृतियों में उनके चेतन मन ने सामाजिक दायित्व के प्रति सचेष्ट होकर अपने अहं का

सामाजीकरण करने का प्रयत्न किया है । भौतिक घात-प्रतिघात से आंदोलित जीवन की मूल धारा बच्चन के काव्य का प्रेरणा-स्रोत है । उनके साहित्य के वर्ण्य विषयों की छटा सचमुच देखने लायक है । बापू के देहावसान से शोक-संतप्त बच्चन ने "खादी के फूल" तथा "सूत की माला" द्वारा अपनी श्रद्धांजलि समर्पित की । यह बच्चन की राष्ट्रीय भावना के घनत्व का प्रमाण है कि पिछले संपूर्ण हिन्दी-काव्य में किसी एक व्यक्ति को लक्ष्य का इतने गीत किसीन ने अर्पित नहीं किये जितने गीत बच्चन ने बापू की हत्य के बाद लिखे ।

"आरती और अंगारे", "बुद्ध और नाचघर", तथा "त्रिभंगिमा" में वैयक्तिक समस्याओं से दूर होकर बच्चन बाह्य परिवेश के यथार्थ पर भी प्रकाश डालते हैं । "बुद्ध और नाचघर" की कविताओं में सादगी है और उस सादगी में अलंकार की चमक-दमक छिप गयी है । सबसे प्रभावशाली कवितायें वे हैं जिनमें व्यंग्य हैं । वे आज के समाज की विषमता देखकर, उसकी कृत्रिम सभ्यता और खोखलापन का रहस्य समझकर उसपर मार्मिक प्रहार करते हैं । अनेक कवितायें सामाजिक चेतना के साथ कवि की नयी संवेदनाओं के परिचायक हैं । यह संग्रह ताजगी से भरा हुआ है ।

प्रत्यक्षत: व्यक्तिगत जीवन की कविता होने के कारण बच्चन की कविता का मूल आधार है अनुभूति और यही उनकी सबसे बडी और कुछ अंशों में एकमात्र शक्ति है । उन्होंने अनुभूतियों को उनके प्राकृत रूप में प्रत्यक्ष रीति से व्यक्त किया है । इसलिए उनकी अनुभूति अधिक संस्कृत न होकर काफी हद तक आदि है, इसलिए मौलिक और तत्वगत भी है । जीवन के मौलिक मनोभावों का संवेदन अत्यंत प्रबल एवं प्रत्यक्ष होता है । वे जीवन के सर्वमान्य, मौलिक तथा मूर्त सत्यों की सहायता से व्यक्ति की अनुभूति का साधारणीकरण करते हैं । इसकेलिए या तो सरल प्राकृतिक तत्वों को ग्रहण करते हैं या जीवन की विशद घटनाओं को ।

"बहुत दिन बीते", "कटती प्रतिमाओं की आवाज़", "उभरते प्रतिमानों के रूप", "जाल समेटा" आदि में बच्चन ने तीखे व्यंग्य का प्रयोग करके सामाजिक कुरीतियों, अत्याचार आदि की आलोचना की है । इन रचनाओं की बौद्धिकता अपना अमिट प्रभाव छोडती है । श्रेष्ठ भाव-संपदा से युक्त बच्चन - काव्य मानव मात्र को नवीन आशाओं की प्रेरणा देने में सक्षम हुआ है ।

उत्तर छायावादी कवियों की भाषा अतिशय कोमल है । बच्चन की भाषा भी सहज, सरल तथा अभिधा प्रधान है । भाव के अनुसार भाषा और भाषा के अनुसार शब्दों का चयन उनकी कविताओं की विशेषता है । वे अपनी बात सहज कथन-भंगिमा के द्वारा सफाई से बताते हैं । प्रबल अनुभूति का सहज माध्यम अभिधा ही रही है । अभिधा के कारण बच्चन की कवितायें सशक्त और प्रेषणीय बन पडी हैं । भाषा के संदर्भ में उनकी रचनायें अपनी सफाई केलिए प्रशंसनीय सिद्ध हुई हैं । ये रचनायें पाठक के मर्म को चुभने में शक्तिसंपन्न हैं । छायावाद की प्रतीकात्मक अतिशय लाक्षणिक चित्रमयी भाषा के सर्वथा भिन्न बच्चन की भाषा का मुख्य गुण प्रत्यक्षता और सरलता है ।

बच्चन छंद-विधान में अनेक प्रयोग किये हैं । "मधुशाला" की रुबाई से लेकर "मधुबाला" और "मधुकलश" के अनेक हिन्दी-छंद और फिर निशा-निमंत्रण से लेकर "एकांत संगीत" और "मिलन यामिनी के भिन्न भिन्न गेय पद और "बंगाल का काल" का लय-आश्रित मुक्त-छंद छंद-विधान की विविधता के उदाहरण है । उनके लय-विधान में व्यवहार जगत को शक्ति मिलती है । उनकी स्वर-योजना और लय-विधान में सर्वत्र ही एक सादगी और ऋजु-सरल वेग मिलता है । बच्चन की कवितायें जिनमें प्रकृति के विरुद्ध शाश्वत मानव के सफल-विफल संघर्ष को - सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक

अथवा आर्थिक आवरण से मुक्त उसके मूल रूप में अंकित किया गया है वे निस्संदेह महान कविताएँ हैं । लोकगीतों, लोकधुनों के साथ लोकछंद का अभिनव प्रयोग उनकी अपनी विशेषता है ।

"मिल्टन ने कहा था - जो कवि बनने का महत्वाकांक्षी हो उसे अपने जीवन को ही कविता बना लेना चाहिए या गीत यानी उसे भीतर से युनिटी आफ बीइंग" प्राप्त कर लेना चाहिए । बच्चन सच्चे अर्थ में कवि हैं । वे जीवन को ही काव्य और काव्य को ही जीवन मानते हैं । "वे हिन्दी के एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने खुद कविता नहीं लिखी, बल्कि कविता ने स्वयं ही जिन्हें लिखा है ।"[1] इसी लिए इस कवि के कवित्व और व्यक्तित्व को एक दूसरे में लीन अन्तर्मुक्त धार के रूप में परखना समीचीन होगा ।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि उनकी हालावादी रचनाओं में हालावाद की सभी प्रवृत्तियाँ आयी हैं । "मधुशाला", "मधुबाला और मधुकलश में दुःखवादी जीवन दर्शन, सुरा-सुन्दरी का गुण-गान, उन्मुक्त भोगवाद, पलायवादी दृष्टिकोण, काव्य-क्षेत्र में कल्पना की ऊँची उडान, सोधी उन्मादक भाषा में सरल अभिव्यक्ति, समाज के प्रति उच्छृंखल विद्रोह आदि प्रवृत्तियाँ लक्षित होती हैं । व्यक्तिवाद की विभिन्न प्रवृत्तियाँ "एकांत संगीत" "निशा-निमंत्रण" "आकुल अंतर", "मिलन यामिनी", "प्रणय-पत्रिका" आदि कृतियों में देखी जा सकती हैं । "धार के इधर उधर, "आरती और अंगारे" "बुद्ध और नाचघर", "बहुत दिन बीते", "कटती प्रतिमाओं की आवाज़", "उभरते प्रतिमानों के रूप", "जाल समेटा" आदि रचनाओं में व्यंग्यात्मकता, संघर्षशीलता, नये का स्वागत और नवीन क्रांति, सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार शोषित और उपेक्षितों के प्रति सहानुभूति, यथार्थवादी चेतना, प्रतीकात्मकता आदि देखी जा सकती हैं ।

---

1. नीरज - लोकप्रिय कवि बच्चन - सं. दीनानाथ शरण - पृ: 94

बच्चन की अधिकांश कवितायें कवि सम्मेलन के मंच पर पठनीय हैं । उनके काव्य में मुख्य रूप से उनके दो विभिन्न रूप हम देख सकते हैं । एक में उनका किशोर-प्रेमी मुखर हो उठा है तो दूसरे में संकल्प-निष्ठ अपराजेय मन ध्वनित हुआ है । उनकी कविताओं में विचारों की आन्तरिक सुबद्धता और एकनिष्ठता की रक्षा हुई है । हिन्दी-प्रेमियों में बच्चन मधुर गीतों के गायक के रूप में सदा केलिए विख्यात रहेंगे ।

मौलिक काव्य-कृतियों की भाँति उनकी गद्य कृतियाँ काफी ख्याति प्राप्त हैं । कहानी, निबंध, संस्मरण, आत्मकथा तथा डायरी में सरलता चिन्तरपरकता के साथ साथ उनकी ईमानदारी पाठकों को मुग्ध कर लेती हैं । "क्या भूलूँ क्या याद करूँ", "नीड का निर्माण फिर", "बसेरे से दूर" तथा "प्रवास की डायरी" के ज़रिए गद्य-साहित्य में उन्हें अमर स्थान मिला है । अंग्रेज़ी तथा उर्दू शब्दों को यथास्थान ग्रहण कर उन्होंने हिन्दी को सक्षम बनाने की भरपूर चेष्टा की है ।

अनूदित साहित्य के क्षेत्र में भी बच्चन ने अपनी योग्यता दिखाई है । हिन्दी में उमर खैयाम की रूबाइयाँ अनेक कवियों द्वारा अनूदित हुई हैं । किन्तु बच्चन का अनुवाद उन सबसे श्रेष्ठ सिद्ध हुआ । चौसंठ रूसी कविताओं के अनुवाद द्वारा कवि ने रूसी जीवन वैविध्य और वहाँ की सभ्यता का सजीव चित्र खींचा है । "मरकत द्वीप का स्वर" ईंद्स की ओजमयी कविताओं का सुंदर अनुवाद है । "भाषा अपनी भाव पराए" में बच्चन ने आठ भारतीय प्रादेशिक भाषाओं तथा अंग्रेज़ी और स्पेनी की चुनी हुई महत्वपूर्ण कविताओं का हिन्दी काव्यानुवाद किया । "जनगीता" और "नागरगीता" भारतीयों के हृदय-सिंहासन पर लासित हैं । अनूदित साहित्य क्षेत्र में शेक्सपियर की प्रसिद्ध चार ट्रासदियों, "मैकबथ", ओथलो, आदि
के अनुवादक बच्चन चिरस्मरणीय रहेंगे ।

जीवन के सभी पक्षों को लेकर बच्चन ने कविता लिखी है । उनकी रचनाओं पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि उनकी काव्य-चेतना प्राय: उनकी जीवन-यात्रा के अनुरूप ही विकसित हुई है । हिन्दी कविता को विश्व-साहित्य के समकक्ष लाने उनका बडा योगदान है । गीतकार के रूप में वे ज़्यादा लोकप्रिय हुए । उनकी जिन्दगी में जिस पल जो परिस्थितियाँ आयीं उन सबका उन्होंने डटकर सामना किया । इस प्रकार सब नवीन प्रवृत्तियों को अपनाकर काव्य-रचना करके उन्होंने आधुनिक हिन्दी-काव्य जगत में अपना एक अलग स्थान प्राप्त किया है ।

ग्रंथ-सूची

बच्चन की रचनायें

1. अभिनव सोपान :: राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1964.
2. आकुल अंतर :: पाँचवाँ संस्करण, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली - 1961
3. आरती और अङ्गारे :: तीसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1963.
4. उभरते प्रतिमानों के रूप :: प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1969.
5. एकांत संगीत :: छठा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1961.
6. ओथलो :: दूसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1961.
7. कटती प्रतिमाओं की आवाज़ :: प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1968.
8. क्या भूलूँ क्या याद करूँ :: प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1969.
9. खादी के फूल :: दूसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1962.
10. खैयाम की मधुशाला :: छठवाँ संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1960.
11. चार खेमे चौंसठ खूँटे :: प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1960.
12. चौंसठ रूसी कवितायें :: पहला संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1964.
13. जनगीता :: दूसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1960.
14. जाल समेटा :: पहला संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1973.

15. त्रिभंगिमा	::	पहला संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-1961.
16. दो चट्टानें	::	पहला संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1965.
17. धार के इधर उधर	::	दूसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1960.
18. नये पुराने झरोखे	::	प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1962.
19. नागरगीता	::	प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1966.
20. निशा-निमंत्रण	::	अरठवाँ संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1960.
21. नीड का निर्माण	::	प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1970.
22. प्रणय पत्रिका	::	दूसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1961.
23. प्रवास की डायरी	::	प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1971.
24. प्रारंभिक रचनायें भाग-1	::	दूसरा संस्करण, भारती भंडार, लीडर प्रेज़, इलाहाबाद - 1946.
25. प्रारंभिक रचनायें भाग-2	::	दूसरा संस्कार, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद - 1946.
26. प्रारंभिक रचनायें भाग-3	::	पहला संस्करण, भारती भंडार, लीडर प्रेज़, इलाहाबाद - 1946.
27. बसेरे से दूर	::	पहला संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1977.

28. बहुत दिन बीते	::	पहला संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1967.
29. बुद्ध और नाचघर	::	पहला संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1958
30. बंगाल का काल	::	आठवाँ संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1964.
31. मधुकलश	::	सातवाँ संस्करण - राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1960
32. मधुबाला	::	दसवाँ संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1962.
33. मधुशाला	::	पन्द्रहवाँ संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1961.
34. मरकत द्वीप का स्वर	::	पहला संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1965.
35. मिलन यामिनी	::	दूसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1961.
36. मैकबेथ	::	दूसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1960.
37. सतरंगिनी	::	तीसरा संस्करण, सेन्ट्रल बुक डिप्पो, इलाहाबाद - 1951.
38. सूत की माला	::	तीसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1958.
39. सोपान	::	भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद - सं: 2010.
40. हलाहल	::	तीसरा संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1960.

आलोचनात्मक ग्रंथ

41. आधुनिक कवि :: विश्वंभर मानव, द्वितीय संस्करण, लोकभारती प्रकाशन, 1965.

42. आधुनिक कविता की प्रवृत्तियाँ :: प्रेम प्रकाश गौतम, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा-3.

43. आधुनिक काव्य धारा :: केसरीनारायण शुक्ल, नन्दकिशोर एण्ड सन्ज़, 1961.

44. आधुनिक काव्य की स्वच्छंदतावादी प्रवृत्तियाँ :: डॉ.अजब सिंह, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वारणासी, 1975.

45. आधुनिक काव्य प्रवृत्तियाँ एक पुनर्मूल्यांकन :: डॉ.गणेश खटे, पुस्तक संस्थान, 109/50 ए.नेहरू नगर, कानपुर-12.

46. आधुनिक प्रतिनिधि कवि और उनका काव्य :: जीवन प्रकाश जोशी, नवयुग प्रकाशन, दिल्ली=6, प्रथम संस्करण, 1964.

47. आधुनिक प्रतिनिधि कवि :: डॉ.शान्तिस्वरूप गुप्त, सूर्य प्रकाशन नई सडक, दिल्ली-6, 1983.

48. आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका :: डॉ.बलभद्र तिवारी-नंद किशोर एण्ड सन्ज़, वारणासी - 1, 1962.

49. आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ :: डॉ.नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली.

50. आधुनिक हिन्दी कविता में उर्दू छंदों का प्रयोग :: डॉ.नरेश, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली - 1973.

51. आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छंद धारा :: डॉ.त्रिभुवनसिंह, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, 1961.

52. आधुनिक हिन्दी कविता में मनोविज्ञान :: डॉ.उर्वशी सूरती, अनुसंधान, प्रकाशन, आचार्य नगर, कानपुर, 1960.

53. आधुनिक हिन्दी कविता में व्यक्तित्व अंकन :: डॉ.सरजू प्रसाद मिश्र, पुस्तक संस्थान, 109/50 ए.नेहरू नगर, कानपुर, 1977.

54. आधुनिक हिन्दी काव्य :: डॉ.भागीरथ मिश्र, डॉ.बलभद्र तिवारी, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1973.

55. आधुनिक हिन्दी काव्य :: डॉ.राजेन्द्र मिश्र, ग्रन्थम, कानपुर - 1966.

56. आधुनिक हिन्दी काव्य और कवि :: डॉ.रामचन्द्र तिवारी, नया साहित्य प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1962.

57. आधुनिक हिन्दी काव्य और नैतिक चेतना :: राज वधवा, फ्रैंक ब्रादर्स एण्ड कम्पनी, चांदनी चौकी, दिल्ली-6, 1969.

58. आधुनिक हिन्दी काव्य तथा मलयालम काव्य :: डॉ. विश्वनाथ अय्यर, नाशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-6, 1970.

59. आधुनिक हिन्दी काव्य में अप्रस्तुत विधान :: डॉ.नरेन्द्र मोहन, नाशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-6, 1972.

60. आधुनिक हिन्दी काव्य में पलायनवाद :: डॉ.रमन नागपाल, विंभू प्रकाशन, साहिबवाद-201000, 1977.

61. आधुनिक काव्य में विरह भावना :: मधुमालती सिंह, आत्माराम एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6, 1963.

62. आधुनिक हिन्दी गीत काव्य : विषय और शिल्प :: डॉ.जीवन प्रकाश जोशी, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली-6, प्रथम संस्करण, 1974.

63. आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य: का स्वरूप और विकास :: डॉ.आशा किशोर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वारणाज़ी, 1977.

64. आधुनिक हिन्दी साहित्य की विचारधारा पर पाश्चात्य प्रभाव :: हरिकृष्ण पुरोहित, उपमा प्रकाशन, राजपार्क, जयपुर.

65. कला की कलाम :: रघुवीर शरण मित्र, भारतीय साहित्य प्रकाशन, मेरठ, द्वितीय संस्करण-1958.

66. कविता यात्रा-रत्नाकर से रघुवीर सहाय :: डॉ.रामस्वरूप चतुर्वेदी, दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया, 1976.

67. काव्य और कल्पना	::	राम खेलावन पाण्डेय, भारती भवन, पटना, द्वितीय संस्करण, 1969.
68. काव्य-रूपों के मूल स्रोत और उनका विकास	::	डॉ.शकुन्तला दुबे, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1964.
69. गीतिकाव्य का विकास	::	लालधर त्रिपाठी प्रवासी, ओम प्रकाश बेरी, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
70. चिन्तन अनुचिन्तन	::	डॉ.कृष्णनन्दन पीयूष, विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर, 1969.
71. छायावादी कवियों की नारी भावना	::	श्रीमती प्रतिभा गर्ग, जवाहर पुस्तकालय, सदर बाज़ार, मथुरा, 1987.
72. छायावादी कवियत्रियों पर अंग्रेज़ी के रोमांटिक कवियों का प्रभाव	::	डॉ.कुल बिहारी शर्मा, राजेश प्रकाशन, कृष्णनगर, दिल्ली-51, 1977.
73. छायावादी काव्य	::	डॉ.कृष्णचन्द्र वर्मा, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, प्रथम संस्करण, 1977.
74. छायावाद की दार्शनिक पृष्ठ भूमि	::	डॉ.सुषमा पॉल, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, दिल्ली-6, प्रथम संस्करण, 1971.
75. छायावाद से नई कविता	::	डॉ.रमेश चन्द्र शर्मा, भारत प्रकाशन मंदिर, (रजि.) अलीगढ़, प्रथम संस्करण, 1980.
76. छायावादोत्तर हिन्दी प्रगीत	::	डॉ.विनोद गोदरे, वाणी प्रकाशन, दिल्ली-11007, प्र.सं. 1975.
77. छायावादोत्तर हिन्दी गीतिकाव्य	::	डॉ.सुरेश गौतम, प्रेम प्रकाशन मंदिर, दिल्ली-6, प्र.सं.1985.

78. नया सृजन - नया बोध :: डॉ. कृष्ण दत्त पालीवाल, राजेश पुस्तक केन्द्र, गीता मालानो, गाँधीनगर, दिल्ली-110037, 1975.

79. नया हिन्दी काव्य :: डॉ. शिवकुमार मिश्र, अनुसंधान प्रकाशन, कॉनपुर, 1962.

80. नया हिन्दी काव्य और विवेचना :: डॉ. शंभूनाथ चतुर्वेदी, जीवनशिक्षा मुद्रणालय, वारणासी, 1964.

81. नया हिन्दी साहित्य - एक भूमिका :: प्रकाशचंद्र गुप्त, सरस्वती प्रेस, बनारस, 1963.

82. नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र :: गजानन माधव मुक्ति बोध, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली-6.

83. निबंध और निबंध :: डॉ. इन्द्रनाथ मदान, बंसला एण्डनो कम्पनो प्रकाशक तथा पुस्तक विकेता - नवीन शाहदरा, दिल्ली-32, 1966.

84. निबंध प्रभाकर :: तनसुखराम गुप्त, और सुषमारानो गुप्ता सूर्य प्रकाशन, नई सडक, दिल्ली-110006.

85. प्रतिनिधि कवि :: डॉ. सत्येदेव चौधरी, भारती साहित्य मंदिर, दिल्ली- 1958.

86. प्रमुख कवि और लेखक :: डॉ. विनय, बन्टू पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-6, 1968.

87. बच्चन : एक पहेली :: चन्द्रदेव सिंह, हिन्दी प्रचारक प्रकाशन, वारणासी-1, 1968.

88. बच्चन : एक युगान्तर :: डॉ. नीरज, स्टार पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1965.

89. बच्चन का परवर्ती काव्य :: हरस्वरूप पारीक, मंगल प्रकाशन, जयपुर, 1974.

90. बच्चन : जीवन और साहित्य :: श्रीमती डॉ.सुधा बहन कनुभाई पटेल, जवाहर पुस्तकालय, प्रथम संस्करण, 1980.

91. बच्चन : निकट से (सं) :: अजित कुमार, ओंकार नाथ श्रीवास्तव, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1968.

92. बच्चन : व्यक्ति और कवि :: बाँकेविहारी भटनागर, नाशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1964.

93. बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व :: कृष्णचन्द्र पण्ड्या, जवहर पुस्तकालय, मथुरा, 1972.

94. बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व :: जीवन प्रकाश जोशी, सन्मार्ग प्रकाशन, 1968.

95. भार्षा युगबोध और कविता :: राम विलास शर्मा, वाणी प्रकाशन, दिल्ली-110007, 1981.

96. ललित की खोज में :: डॉ.रमा शंकर तिवारी, ग्रन्थम, कानपुर, 12, 1974.

97. लोकप्रिय बच्चन :: दीनानाथ शरण, साहित्य निकेतन, कानपुर, 1967.

98. समकालीन कविता सार्थकता और समझ :: डॉ.राजेन्द्र मिश्र, महावीर प्रेस, वारणासी-1, 1973.

99. समीक्षात्मक निबंध :: विजयेन्द्र स्नातक, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-6, 1969.

100. साहित्य कोश :: डॉ.नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली-110006, 1985.

101. साहित्य चिन्तन :: नरेश चन्द्र चतुर्वेदी, साहित्यायन, कानपुर, 1969.

102. साहित्य विवेचन	::	क्षेमेन्द्र सुमन, योगेन्द्र कुमार मल्लिक, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली, तो. सं. 1963.
103. साहित्य:संदर्भ और मूल्य	::	रामदरस मिश्र, भारती साहित्य मंदिर, दिल्ली, 1961.
104. साहित्य : स्वरूप और समस्यायें	::	प्रेमानारायण टंडन, हिन्दी साहित्य भंडार, लखनऊ, 1963.
105. साहित्यानुशीलन	::	डॉ.राकेशगुप्त एवं डॉ.ऋषिकुमार चतुर्वेदी, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद
106. साहित्यिक निबंध	::	जीवन प्रकाश जोशी, नवयुग प्रकाशन, दिल्ली, 1964.
107. साहित्यिक निबंध	::	राजनाथ शर्मा, विनोद पुस्तक मंदिर, स. सं. 1963.
108. साहित्यिक निबंध	::	डॉ.कृष्णलाल हंस, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वारणासी-9.
109. सौन्दर्य शास्त्र और आधुनिक हिन्दी कविता	::	डॉ. प्रेमलता नाफ्ता, नटराज पब्लिशिंग हाउस, होली मोहन करनाल-132001, हरियाना
110. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य	::	डॉ.श्रीरंग गर्ग, साहित्य भारती, दिल्ली,
111. हालावाद और बच्चन	::	डॉ.दशरथ राज, महाराष्ट्र राष्ट्र भाषा सभा, पुणे, 1963.
112. हिन्दी कविता का वैयक्तिक परिप्रेक्ष्य	::	रामकमल राय, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1981.
113. हिन्दी को स्वच्छंदतावादी काव्यधारा का दार्शनिक विवेचन	::	डॉ.जगदीश गुप्त, प्रगति प्रकाशन, आगरा-3, 1977.

114. हिन्दी की काव्य शैलियों का विकास	::	डॉ.हरदेव बाहरी, भारत प्रेस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1957.
115. हिन्दी साहित्य और विभिन्न वाद	::	रामजीलाल बधौतिया, मोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 958.
116. हिन्दी साहित्य और साहित्यकार	::	सुधाकर पाण्डेय, नन्द गिर एण्ड संस, वारणासी, 1967.
117. हिन्दी साहित्य का इतिहास	::	राममूर्ति त्रिपाठी, मानचन्द्र बुक डिपो, उज्जैन.
118. हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास	::	उमेश शास्त्री, देवनगर प्रन, जयपुर, 1978.
119. हिन्दी साहित्य का नया इतिहास	::	रामखेलावन पाण्डेय, अनु पटना-6
120. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास	::	डॉ.गणपति चंद्र गुप्त, भन्दु भवन, चंडीगर-2, 1965.
121. हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	::	विजयेन्द्र स्नातक, रणजीटेर्स, एण्ड पब्लिशेर्स, दिल्ली,9.
122. हिन्दी साहित्य कोश	::	धीरेन्द्र वर्मा (सं) ज्ञानमंडल मिटेड, वारणासी
123. हिन्दी साहित्य में विविध वाद	::	डॉ.प्रेमनारायण शुक्ल, भरती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1970.
124. हिन्दी साहित्य परिवर्तन के सौ वर्ष	::	ओंकारनाथ श्रीवास्तव, ल प्रकाशन, दिल्ली-6.
125. हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ	::	प्रो. शिवकुमार शर्मा, आशन, दिल्ली-6, दिव.सं. ।

पत्र-पत्रिकाएं

1. आजकल - जुलाई 1963, मार्च 1981, जनवरी 1984.

2. कल्पना - फरवरी 1975.

3. गगनांचल - 1980

4. ज्योत्सना - अक्तूबर 1980, दिसंबर 1982, जुलाई 1983.

5. ज्ञानोदय - अप्रैल, 1968.

6. दक्षिण भारत - अक्तूबर और नवंबर 1982.

7. नई धारा - मार्च 1961, दिसंबर 1985, जनवरी 1986.

8. प्रकर मासिक - मई 1971.

9. भाषा त्रैमासिक - जून 1986

10. युग प्रभात - मार्च 1962, अगस्त 1965, मार्च 1966.

11. शैवाल-नवगीत अंक - मई, जून 1978.

12. समीक्षा - दिसंबर 1973.

13. सरस्वती - मार्च 1978

14. साक्षात्कार - मार्च, मई 1978.

15. साहित्य संदेश - मार्च 1966

16. संभावना - 1974.